परिषद्-पत्रिका

(शोध और आलोचना-त्रैमासिक)

वर्ष-३९, अंक १-४ अप्रैल १९९९ से मार्च २०००



गोपाल सिंह नेपाली-विशेषांक

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-४

समाचार निबन्धन- अधिनियम के अन्तर्गत विज्ञप्ति

प्रपत्र-सं॰ ४ (नियम ८ द्रष्टव्य)

१. प्रकाशन-स्थान	:	बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, आचार्य शिवपूजन सहाय मार्ग पटना-८००००४
२. प्रकाशन-अवधि	:	त्रैमासिक
३. मुद्रक का नाम	:	उदय कुमार : राष्ट्रीयता : भारतीय प्रताप ग्राफिक्स, खजांची रोड, पटना–४ द्वारा मुद्रित
४. प्रकाशक का नाम पता	:	डॉ॰ रामधारी सिंह दिवाकर, राष्ट्रीयता : भारतीय; निदेशक, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, आचार्य शिवपूजन सहाय मार्ग, पटना-८००००४
५. सम्पादक का नाम	:	डॉ मिथिलेश कुमारी मिश्र, राष्ट्रीयता: भारतीय:
पता	:	बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, आचार्य शिवपूजन सहाय मार्ग. पटना-८००००४
६. स्वत्वाधिकारी	:	बिहार- राष्ट्रभाषा-परिषद्, बिहार सरकार, पटना-८००००४

मैं रामधारी सिंह दिवाकर घोषित करता हूँ कि उपरिमुद्रित विज्ञप्ति मेरी जानकारी के अनुसार सही है ।

ह॰/ रामधारी सिंह दिवाकर
निदेशक

'परिषद् पत्रिका'-नियमावली

१. 'परषिद्-पत्रिका' में केवल उच्च कोटि के गवेषणात्मक तथा आलोचनात्मक निबंध, परिषद्-प्रकाशनों की समीक्षाएँ, सम्पादकीय टिप्पणियाँ, अन्य प्रकाशनों की सपीक्षाएँ, परिषद् में शोधकार्यो की प्रगति, 'परिषद्-पत्रिका' अथवा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित निबन्धों के संबंध में विचार-विनिमय, साहित्यिक गतिविधियाँ आदि प्रकाशित हुआ करेंगे । 'परिषद्-पत्रिका' में कविता कहानी नाटक आदि का प्रकाशन नहीं होगा । परिषद्-प्रकाशनों के विज्ञापन के अतिरिक्त अन्य प्रकाशन-संस्थानों के विज्ञापन भी पत्रिका में प्रकाशित होंगे ।

२. गवेषणात्मक और आलोचनात्मक निबंधों पर ही यथानिर्दिष्ट दर से अधिकतम २५०.०० रु॰ तक का सम्मानिक दिया जा सकेगा । निदेशक को यह अधिकार होगा कि लेखक-विशेष को दृष्टि में रखकर कम पृष्ठ रहने पर भी २५०.०० रु॰ अथवा इससे अधिक सम्मानिक दे सकेंगे ।

३. सभी तरह की रचनाएँ स्वतः पूर्ण एवं उत्तम कोटि की होने पर ही स्वीकृत हो सकेंगी ।

४. निबन्धों के संपादन में काट-छाँट, स्वीकृति अथवा अस्वीकृति आदि का अधिकार संपादक के अधीन सुरक्षित रहेगा ।

निदेशक
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
आचार्य शिवपूजन सहाय मार्ग, पटना-८००००४
दूरभाष : ६७२३३६

परिषद्-पत्रिका

(शोध और आलोचना-त्रैमासिक)

संयुक्तांक : १५३-१५६
प्रकाशन : मार्च २०००

गोपाल सिंह नेपाली-अंक

अंक : १-४

वर्ष : ३९

अप्रैल १९९९ से मार्च २००० ई०

परामर्श

- प्रो० जाबिर हुसेन
- डॉ० कुमार विमल
- डॉ० रामवचन राय
- डॉ० महेन्द्र प्रसाद यादव

❑

प्रधान संपादक
डॉ० रामधारी सिंह दिवाकर

❑

संपादक
डॉ० मिथिलेश कुमारी मिश्र

❑

आवरण-चित्र
वेदांत चंदन



बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
आचार्य शिवपूजन सहाय मार्ग
पटना - ८०० ००४ (बिहार)
दूरभाष : ६७२३३६
मूल्य : ४५.००

विषय-प्रस्तुति

स्वाध्याय कक्ष :

मधुसंचय :

विभागीय प्रस्तुति :

परिषद्-पत्रिका

(शोध और आलोचना-त्रैमासिक)

वर्ष : ३६ | विक्रमाब्द २०५५, शकाब्द १६२१ | इस प्रति का
अंक : १-४ | अप्रैल १६६६ से मार्च २००० ई० | मूल्य : ४० रु० मात्र

अतीत दर्शन

स्नेह-शब्द[१]

प्रिय नेपाली जी,

आपकी कविताएँ मुझे विशेष प्रिय हैं। उनकी प्रतिभा के आलोक से मैं बहुत पहले से परिचित हूँ। आपकी सरस्वती स्नेह, सहृदयता और सौन्दर्य की सजीव प्रतिभा है। आपका कवि-कण्ठ, 'निर्मल निर्झर के समान' अवश्य ही मंसूरी की तलहटी में फूटा होगा। आपकी रचनाओं में जो उन्मुक्त वातावरण एवं स्निग्ध आलाप मिलता है, वह पाठक के हृदय की खिड़की खोलकर, 'नरम दूब' बिछी राहों से, 'विलास की मंसूरी' से 'जंगल की मंसूरी, में ले जाकर, प्रकृति की मनोरम क्रीड़ा-भूमि में छोड़ देता है, 'जहाँ जंगल की हरियाली आँचल पसार' कर उसका स्वागत करती है। 'जामुन तमाल इमली करील, ऊपर विस्तृत नभ नील-नील', 'ऊँचे टीले', 'गिलहरियों के घर' मन को मोहते हैं। ....

आपकी भाषा इतनी मधुर, सरस एवं प्रांजल है कि वह आपकी विशेषता बन गयी है। आपके पसार, बयांर, सपना, हीलना, छन्दों का उकसाना, फुनगी, नन्हीं-नन्हीं फुल-चुग्गी, बोल-बोल, डोल-डोल आदि सभी सीधे-सादे कवित्वपूर्ण लगते हैं। ..... नवयुग का भी आपने मुक्त हृदय से स्वागत किया है, उससे 'खोल-खोल मेरे बन्धन' कहकर ही आप सन्तुष्ट नहीं हो गए हैं, प्रत्युत विश्व-व्यापी परिवर्तन भी चाहते हैं।

एक प्रतिभा संपन्न, उदीयमान, नवयुवक-कवि में भावों की जो मादकता, मोहकता, आशा और महत्त्वाकांक्षा की जो उत्तेजना एवं कल्पना की जो आकाश-व्यापी उड़ान होनी चाहिए, उससे आपकी रचनाएँ ओत-प्रोत हैं। हरी घास, मौलसिरी, मंसूरी की तलहटी, प्रतीक्षा, बेर, युगान्तर, नेपाल आदि कविताएँ मुझे बहुत पसन्द हैं।

आपका
सुमित्रानन्दन पन्त

---

१. सुमित्रानन्दन पंत : उमंग पृ० ९-११

सम्पादकीय

साहित्यकारों की उपलब्धियों से साहित्य-जगत् को परिचित कराने के प्रयास में **बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्** की भूमिका अग्रणी रही है। इस क्रम में परिषद् द्वारा ख्यातिलब्ध लेखकों के व्यक्तित्व-कृतित्व पर **परिषद्-पत्रिका** के विशेष अंकों के प्रकाशन को साहित्य-संसार ने न केवल आदर दिया है, अपितु **परिषद्** को इस दिशा में बढ़ने के लिए प्रोत्साहित भी किया है। विगत दो वर्षों में **परिषद्-पत्रिका के निराला विशेषांक, अनूपलाल मंडल विशेषांक, लोकसंस्कृति विशेषांक, नागार्जुन विशेषांक** अपनी विशिष्टता के कारण साहित्य-जगत् में सर्वत्र प्रशंसित हुए हैं। गीतों के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले **गोपाल सिंह नेपाली** पर केन्द्रित **परिषद्-पत्रिका** का यह विशेष अंक साहित्यकारों के प्रति श्रद्धा-निवेदन का एक पुष्प है।

हिन्दी-साहित्य में जब गीत विधा की चर्चा होती है, तब बिहार के बेतिया में जन्मे **गोपाल सिंह नेपाली** का नाम स्वतः ही चर्चा में आ जाता है। नेपाली ने मात्र गीतों का सृजन ही नहीं किया, उन्हें गाया भी और जिनके लिए लिखा उन तक सही अर्थों में पहुँचाया भी। भाषा की स्वाभाविक सहजता और साधारण आदमी के मन की बात उनके गीतों की विशेषता थी। उनके गीत पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त सात संकलनों के माध्यम से आए, वे हैं- **'उमंग', 'पंक्षी', 'रागिनी', 'पञ्चमी', 'नवीन', 'नीलिमा'** और **'हिमालय ने पुकारा'**। आम आदमी तक संवाद पहुँचाने हेतु उन्होंने **मंच, आकाशवाणी** और **फिल्म** को भी अपनाया। इन्हीं कारणों से उनकी पहचान कवि के रूप में बनी।

हिन्दी साहित्यकारों की यह त्रासदी रही है कि उनकी कृतियों का प्रकाशन नहीं हो पाता। **नेपाली जी** के अप्रकाशित काव्य-संग्रह इस प्रकार हैं- **'हम तरुवर की चिड़िया रे, 'दो तुम्हारे नयन दो हमारे नयन', 'नौ लाख सितारों ने लूटा', 'तूफानों को आवाज दो'**। इन काव्य-संग्रहों की रचनाएँ मंचों के माध्यम से पाठकों तक पहुँची अवश्य थीं, किन्तु स्थायी महत्त्व के लिए उनका प्रकाशन अनिवार्य है। नेपाली जी को कवि के रूप में पर्याप्त ख्याति मिली, किन्तु उन्होंने गद्य-साहित्य में **उपन्यास, कहानी, संस्मरण, निबंध, सम्पादकीय** इत्यादि अनेक विधाओं को अपने लेखन में समृद्ध किया। **'हमारी राष्ट्रभाषा'** (निबन्ध-संग्रह), और **'पीपल का पेड़'** (प्राकृतिक उपन्यास)। ये गद्य पुस्तकें नेपाली जी ने अपने जीवन-काल में प्रकाशकों को दी थीं, वे **१७ अप्रैल, १९६३** को दिवंगत भी हो गए। परन्तु आज तक इन कृतियों का कोई अता-पता नहीं कि वे अब किस स्थिति में हैं?

नेपाली ने १९४४ से १९५६ अर्थात् लगभग बारह वर्षों तक निर्बाध रूप से प्रायः तीन-सौ गीत लिख कर हिन्दी-फिल्म-जगत् के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, जिसे विस्मृत नहीं किया जा सकता है।

नेपाली का फिल्म-जगत् में प्रवेश उस समय हुआ, जब नब्बे प्रतिशत शायरों का बोलबाला था। यह अपने आप में एक चुनौतीपूर्ण कार्य था, जिसे नेपाली ने न मात्र स्वीकार किया अपितु अपनी पहचान भी बनायी। फिल्मी दुनिया में अपने आने की स्थिति का खुलासा करते हुए उन्होंने स्वयं कहा है- "लोग मेरे फिल्म-संसार में आने की शिकायत करते हैं, पर मात्र चालीस-पचास रुपयों पर समाचार-पत्रों में काम करके मैं कब तक पड़ा रहता! अतः जब सम्मानपूर्वक वहाँ से ऑफर आया, तो मैं ना नहीं कर सका। मैं जानता था कि सिने-संसार

निहायत गंदी जगह है, वह काजल की कोठरी है, उसकी कालिख से बचाव नहीं, पर तब भी मैं गर्व के साथ कह सकता हूँ– वहाँ मैंने हिन्दी का ही काम किया। उस क्षेत्र में **मुझसे पहले प्रेमचंद, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर** और **उग्र** भी गए थे और सब वहाँ से घबराकर भाग आए, लेकिन मैं भागा नहीं, मैंने **महापंडित राहुल सांकृत्यायान** की प्रसिद्ध पुस्तक **'भागो नहीं, दुनिया को बदलो'** को मूर्त रूप दिया। जहाँ उर्दू का दरिया बहता था, वहाँ मैंने हिन्दी की गंगा बहाई। मेरे जाने के पूर्व वहाँ ८५ प्रतिशत उर्दू वाले थे। वे सब हिन्दी को कोई भाषा नहीं मानते थे। आज फिल्मी दुनिया के उर्दू लेखक भी हिन्दी-लेखक कहलाने लगे हैं। मेरे गीतों में सिने गीतों की वही खानगी थी। वे काफी पसंद किए गये हैं। मैंने अपने गीतों में ठेठ हिन्दी के शब्द दिए।'' इनके फिल्मों गीतों में भी साहित्य की उपस्थिति है। **'तुलसीदास', 'जय भवानी', 'हर-हर महादेव', 'नरसी भक्त'** इत्यादि अनेक फिल्मों के गीत हैं। जो साहित्यिक श्रेणी में आते हैं।

नेपाली ने प्राय: सभी गीतों का **सृजन स्वयंभू शिल्प** में किया। **स्वयंभू शिल्प** से हमारा तात्पर्य वैसे शिल्प से है, जो विषय एवं अवसर के अनुकूल स्वत: अपना आकार ग्रहण कर लेता है। उसमें शब्दों का क्रम, छन्द, गति, यति, लय और राग स्वत: अपने दायित्व का निर्वाह करते हैं, जिससे गीत अपना आकार स्वयं ग्रहण कर लेता है। यथा–

तुलसी चंदा तो सूर-सूर
केशव से तारे दूर-दूर
बाकी है जुगनू, मैं तो बस
जागरण-पक्ष में चूर-चूर
रवि लाने वाला दीपक हूँ, मेरी लौ में लवलीन कलम।

इस प्रकार उनके साहित्य में अभिधा, लक्षणा, व्यञ्जना, रसात्मकता, ध्वनि और सम्प्रेषणीयता है। वहीं मुहावरे इनके गीतों को लोक से जोड़ने में पूरी तरह सहायक हैं। इनके गीतों में जीवन-जगत् का यथार्थ भी पूरी स्वाभाविकता के साथ अपने होने का एहसास कराता है। इनके गीतों में प्रकृति-चित्रण, राष्ट्रीय चेतना और सामाजिक सरोकार के साथ ही जीवन का यथार्थ और शृंगार भी मन को गुदगुदाता है। तात्पर्य यह कि इनके गीतों में इतना वैविध्य है कि पाठक या श्रोता में एकरसता नहीं आने पाती।

गीतों के अतिरिक्त पत्रकारिता-जगत् में भी **नेपाली जी** का योगदान महत्त्वपूर्ण है। **सुधा, चित्रपट, योगी, रतलाम टाइम्स,** हस्तलिखित **प्रभात, दि मुरली** (टंकित अंग्रेजी-पत्र) इत्यादि पत्रिकाओं से सम्बद्धता इनके व्यक्तित्व के वैविध्य एवं सक्रियता का प्रमाण है। **सुधा** में **निराला, चित्रपट** में **ऋषभ चरण जैन, जैनेन्द्र** तथा **चतुरसेन शास्त्री** और **योगी** में **ब्रज शंकर वर्मा** के सान्निध्य से इनके साहित्यिक जीवन को गति मिली। उनकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ भी साहित्यिक दस्तावेज हैं।

परिषद्-पत्रिका के इस अंक में **नेपाली** के व्यक्तित्व-कृतित्व के विविध पक्षों से संबंधित विद्वानों के लेखों से निश्चय ही **नेपाली-साहित्य** के अध्येताओं को प्रकाश मिलेगा। इस अंक के लिए अल्पसूचना पर विद्वानों ने आलेख भेजकर **परिषद्** के इस आयोजन की पूर्णता में सहयोग किया है। हम उनके प्रति आभारी हैं। ☐

मिथिलेश कुमारी मिश्र

नेपाली से मेरी पहली भेंट

• महन्त धनराजपुरी (स्व०)

(चम्पारण जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के भूतपूर्व यशस्वी अध्यक्ष शिकार-साहित्य के बिहार के एकमात्र प्रतिनिधि लेखक, कुशल कवि, राजनीतिज्ञ और चम्पारण के अतीत के मूर्द्धन्य साहित्य-सेवी। भैंसालोटन को अपने अकाट्य तर्कों से वाल्मीकिनगर की संज्ञा से विभूषित करने वाले साहित्य-मनीषी।)

१९३४ के भूकम्प से पहले की बात है। बेतिया राज्य का शीशमहल अभी चूर-चूर नहीं हुआ था। संभवतः १९३२-३३ का जमाना रहा होगा। अभूतपूर्व भारत-व्यापी सत्याग्रह के ठप पड़ जाने के कारण, देश में निराशा-सी फैल रही थी। कवियों का स्वर, मारू बाजे से हटकर, बाँसुरी छूने की कोशिश कर रहा था।

सहसा **'सरस्वती'** में मैंने एक रचना देखी। स्वर में नूतनता थी। भाव व्यञ्जना की अपूर्व अभिव्यक्ति देखकर मुग्ध हो गया। कवि के नाम की जगह पर **'गोपाल सिंह नेपाली'** लिखा हुआ था। तुरंत मैंने **'सरस्वती'** के सम्पादक को पत्र लिख कर कवि का पता पूछा। लौटती डाक से उत्तर आया- "कवि तो आपके ही जिले बेतिया का रहने वाला है'! मैंने बेतिया पहुँच कर **गोपाल सिंह नेपाली** के सम्बन्ध में पूछ-ताछ की। यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि वे बहुत ही गरीब परिवार के हैं और वे अपने पिता के साथ शीशमहल की एक निचली छोटी कोठरी में रहते हैं।

संभवतः बारह बजे थे। बहुत ही कड़ाके की धूप थी। मेरे एक साथी की राय हुई कि चार बजे चला जाए। मैं उन दिनों लाल बाजार में बाबू राघव शरण वकील के डेरे पर ठहरा करता था। किन्तु, मुझे **नेपाली** से मिलने की इतनी उत्सुकता थी कि मैं चार बजे तक ठहरने के लिए तैयार नहीं हुआ। मैं उसी धूप में पैदल शीशमहल की ओर चल पड़ा।

उन्हें गरीब सुन रक्खा था। किन्तु, उनकी निर्धन इस कोटि की निर्धनता है; इसकी तो मैंने कल्पना नहीं की थी। वे खाना खाकर शायद सोने की तैयारी कर रहे थे। मेरे साथी ने आगे बढ़कर उन्हें मेरा परिचय दिया। बड़ी व्यस्तता से वे उठ खड़े हुए और मेरा अभिवादन किया। मिलने के लिए इस कड़ी धूप में आना, संभवतः उनको कल्पनातीत-सी बात मालूम हुई। वे सिर्फ एक लँगोटा पहने हुए थे और उनकी आँखें झुकी हुई थीं।

एक क्षण के लिए मैंने कोठरी पर एक सरसरी निगाह डाली। अलगनी पर एक फटी कमीज और एक मैली धोती लटकी हुई थी और कोठरी में कुछ पुस्तकें बिखरी पड़ी थीं। बिछावन में एक फटा हुआ दरी का टुकड़ा था, जिस पर शायद तकिये के काम के लिये कुछ पुस्तकें पड़ी हुई थीं। एक पीतल का गिलास भी कोने में पड़ा हुआ था। बस, कोठरी में कुल इतने ही सामान थे।

मैंने कविवर के चेहरे की ओर देखा। संकोच की आँधी बह रही थी। क्षण भर मैंने सोचा। फिर बिना पूछे-कहे ही मैं दरी के कोने पर बैठ गया। **नेपाली** की बाँह पकड़कर, उन्हें मैंने अपनी बगल में बिठा लिया। **नेपाली** के होठों पर मुस्कुराहट मचलने लगी। पलक झपकते

संकोच दूर हो गया। एक पुस्तक को अपनी ओर खींचते हुए मैंने कहा- **'सरस्वती'** में आपकी कविता पढ़कर मैं मुग्ध हो गया हूँ! इतनी सुन्दर आप कविता करते हैं! क्या मैं आपकी अन्य रचनाएँ भी देख सकता हूँ ?''

आँखों में विनम्रता और ओठों पर मुस्कुराहट लिए **नेपाली** ने कहा- ''अवश्य! किन्तु, मेरी रचनाएँ हैं ही कितनी ?'' कह कर उन्होंने एक कॉपी मेरी ओर बढ़ा दी।

मैंने उसे उलट-पलट कर देखा। फिर कॉपी उनकी ओर बढ़ाते हुए मैंने आग्रह किया कि इसमें से दो-एक रचनाएँ वे स्वयं सुनाएँ। उन्होंने कॉपी ले ली और तत्काल सुनाने के लिए तैयार हो गए।

मेरे मानस में एक हलचल-सी मची हुई थी। कितने स्वच्छ हृदय का यह नवयुवक कवि है। पलक झपकते सारे संकोच, कपूर की तरह उड़ गए ! क्या यह उदीयमान कवि, एक दिन हिन्दी-संसार का गण्यमान्य कवि नहीं हो सकता ?

सुनाने के ढंग और स्वर-लहरी का क्या पूछना! उन रचनाओं में वह अमर रचना भी थी, जिसने १९३३ के ''द्विवेदी अभिनन्दन ग्रन्थ समारोह,'' बनारस में उनकी कविता की धूम मचा थी- **''मेरे आँगन की हरी दूब!''**

रचनाओं की माधुरी में झूमता हुआ मैं, उनसे विदा हुआ। फिर तो हम ऐसे बन्धन में बँध गए, जिस बन्धन को मृत्यु ने ही तोड़कर हमें अलग किया। ☐

अमर गीतकार गोपाल सिंह नेपाली

● आनन्द शास्त्री (स्व०)

भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम के दौरान अपने ओजस्वी राष्ट्रीय गीतों की अंजलि चढ़ाने वाले गीतकारों में **गोपाल सिंह नेपाली** का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। उत्तुंग-हिमालय की उपत्यिका (बेतिया) में **सन् १९११ के ११ अगस्त को जन्मे गीतकार नेपाली को गीत रचना** का वरदान नैसर्गिक रूप में प्राप्त हुआ था और जिसने मात्र १६ साल की उम्र से ही उत्कृष्ट काव्य-रचना प्रारंभ कर दी थी। दर्शन, शृंगार, प्रकृति-वर्णन और राष्ट्रीयता उनकी रचना के विषय थे। किन्तु उनमें राष्ट्रीयता का स्वर सर्वाधिक मुखर था। **रागिनी, पंछी, उमंग, नीलिमा, पंचमी** और **नवीन** उनकी लोकप्रिय प्रारंभिक रचनाएँ हैं और भारत पर चीनी आक्रमण के बाद रचित **'हिमालय ने पुकारा'** संभवतः उनकी अंतिम रचना है।

सुललित, सरल और ओजस्वी काव्य-रचना के जादूगर इस गीतकार को भी अन्य अधिकांश कवि-लेखकों के समान ही अपने तथा अपने परिवार के जीवन-यापन के लिए अनेक चढ़ाव--उतार देखने पड़े थे। किन्तु आर्थिक विपन्नता रूपी भीषण वात्याचक्र में पड़ कर भी यह स्वाभिमानी और कर्मठ कलाकार सदा सर्वदा अडिग, अविचल रहा और जीवन के अंतिम दिनों में अपनी लेखनी के माध्यम से उसने स्पष्ट रूप में घोषित कर दिया कि:-

''मेरा धन है स्वाधीन कलम''

और सम्भवतः कवि की इसी स्वाभिमानी प्रवृत्ति ने कभी उसे बेतिया राज प्रेस की नौकरी छोड़ने तथा आगे चलकर बम्बई की रंगीन फिल्मी दुनिया से विरत होने को बाध्य किया और वह राष्ट्र की संकट की घड़ियों में जीवन की अंतिम रचना **'हिमालय ने पुकारा'** के माध्यम से **'वन मैन आर्मी'** के रूप में अपने जागरण गीतों को लेकर राष्ट्रव्यापी अभियान पर निकल पड़ा। वे उस गीत को सुनाते हुए एकचारी ग्राम से ट्रेन द्वारा भागलपुर वापस लौटते समय भागलपुर रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म नं० २ पर अपने आतिथेय (लेखक) की बाहों में ही **१२ अप्रैल, १९६३** को दम तोड़ बैठा और युग के सर्वश्रेष्ठ गीतकार की ओजस्विनी वाणी सदा के लिए मौन हो गयी।

अन्तिम दर्शन करने तथा उसे अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने हेतु भागलपुर रेलवे स्टेशन की ओर जनता बेतहाशा दौड़ पड़ी, जहाँ उद्दीप्त आनन वाला शरीर पड़ा हुआ था। दूरभाष पर तत्कालीन मुख्यमन्त्री **पं० विनोदानन्द झा** को सूचना दी गयी। उन्होंने जिलाधिकारी **श्री बी० एन० बसु** को आदेशित किया कि **गीतकार नेपाली** देश की बलिवेदी पर शहीद हुए हैं। अतः उन्हें पूर्ण शहीदी सम्मान दिया जाए। फिर तो जिला पदाधिकारी ने शव को अपने अधीन कर लिया। तिरंगे राष्ट्रध्वज से आवृत्त अमर शहीद फूल-मालाओं से लद गया। आकाशवाणी द्वारा गीतकार नेपाली के आकस्मिक निधन का समाचार सुनकर रेडियो पर देश के महान् साहित्यकारों एवं नेताओं के शोक-संदेश प्रसारित होने लगे। पटना, बम्बई, बेतिया से दूरभाष पर सम्पर्क स्थापित किया गया। अनुमंडल पदाधिकारी बेतिया ने सूचित किया कि बेतिया में उनके घर पर

सिर्फ वयोवृद्ध एवं अंध पिता हैं, जो कहीं जाने से असमर्थ हैं। पटने से तत्कालीन **मुख्यमन्त्री जी** एवं **स्व० सुधांशुजी** आदि के संदेश एवं आदेश बराबर मिलते रहे। किन्तु बम्बई से जहाँ नेपाली जी का पूरा परिवार था, **१८ अप्रैल को ११ बजे दिन से** पूर्व कोई संकेत नहीं मिल सका। अंत में दीर्घ प्रतीक्षा के बाद मुख्यमन्त्री जी के आदेश से शव-यात्रा का जुलूस ९ बजे पूर्वाह्न में निकाल दिया गया।

बाद में **श्रीमती नेपाली** का तार मिल गया, जिसमें उन्होंने अर्थाभाव के कारण अपने स्वर्गीय पति के अंतिम दर्शन के लिए भागलपुर पहुँचने में अपनी असमर्थता प्रगट करते हुए दाह-संस्कार सम्पन्न करा देने की प्रार्थना की। तद्नुसार जिला पदाधिकारी ने स्वयं **बरारी गंगातट** तक जाकर शहीद गीतकार की चिता सजाई और शव-यात्रा का जुलूस वहाँ पहुँचा, तो एक विशाल जनसमूह की उपस्थिति में पाँच स्थानीय कवियों **सर्वश्री आनन्दशास्त्री** (लेखक), **पं० दामोदर शास्त्री, शारदा प्रसाद 'सैदपुरी', रमेश चन्द्र मिश्र 'अंगार'** और **रॉबिन शॉ 'पुष्प'** ने समवेत रूप में दिवंगत गीतकार को मुखाग्नि दी और देखते-ही-देखते उस क्रान्ति-द्रष्टा कवि का पार्थिव शरीर पवित्र राख में परिणत हो गया।

नेपाली जी की मृत्यु के बाद **राष्ट्रकवि दिनकर जी** ने कहा था- "**श्री गोपाल सिंह नेपाली**" के नाम के साथ स्वर्गीय शब्द ज़ोड़ने में हृदय फटने लगता है। वे जनता के हृदयहार थे। उन्होंने जो कुछ भी लिखा, वह सब-का-सब रक्षणीय है।"

प्रतिवर्ष **११ अगस्त (जन्म-दिन)** और **१७ अप्रैल (पुण्य-तिथि)** की तिथियाँ आती हैं और हृदय में एक कम्पन जगा जाती हैं। नेपाली के गीत हिन्दी-साहित्य एवं हिन्द-राष्ट्र की अमूल्य निधि हैं। उनके गीतों के अग्नि स्वर आज भी घूर्णित-विघूर्णित होकर कर्णकुहरों में जा़गरुकता के मंत्र फूँक रहे हैं और- हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि स्वतंत्रता की सबसे बड़ी कीमत है सत्त जागरुकता। अत: उनके गीतों का संरक्षण और अधिकाधिक प्रचार-प्रसार न केवल हमारा नैतिक कर्त्तव्य ही है, अपितु आज की अनिवार्य आवश्यकता भी है। ☐

श्रद्धांजलि गीतों के राजकुमार को

• रामदयाल पाण्डेय

गीत-सम्राट कविवर **गोपाल सिंह नेपाली** हिन्दी-संसार में गीतों के राजकुमार माने जाते थे। मैं उन्हें कविवर **'नेपाली'** कहा करता था, क्योंकि गीतकार भी कवि ही होते हैं और गीत-विधान भी कविता के ही अन्तर्गत है। विशिष्टता ब्यान करने हेतु **'गीतकार'** का विशेषण संलग्न किया जाता है और गीतकार-काव्यकार का शिल्प-भेद किया जाता है। कविवर **'नेपाली'** जी भले ही प्रबन्धात्मक काव्य की संरचना नहीं करते थे, किन्तु निर्विवाद रूप से वे उच्च कोटि के कवि थे। मैं उन्हें **'बन्धुवर नेपाली'** जी कहा करता था और वे मुझे पण्डित जी कहते थे, भले ही वे मेरे धर्माग्रज थे। **राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'** मुझे कहते तो **'रामदयाल'** ही कहते थे, परन्तु लिखते मुझे 'पण्डित रामदयाल पाण्डेय' थे। ऐसा ही उन्होंने अपनी गद्य-पुस्तक **'मिट्टी की ओर'** में लिखा। पुस्तक के प्रकाशित होने पर उनके एक मित्र ने उनसे जिज्ञासा की कि जाति के आधार पर आपने **'पण्डित रामदयाल पाण्डेय'** लिखा, तो उन्होंने उत्तर दिया कि भाषा के आधार पर लिखा। **आचार्य शिव पूजन सहाय जी** तो मेरे लिए पितृवत् थे, किन्तु वे भी मुझे ऐसा ही लिखते थे। समीक्षा-विशेषज्ञता के कारण **आचार्य नलिन विलोचन शर्मा** को आचार्य **'शिवजी'** उन्हें **'पण्डित जी'** कहते थे। **आचार्य शिवपूजन सहाय जी** को हमलोग **'शिवजी'** कहते थे।

बन्धुवर **नेपाली** जी को मेरी अध्यक्षता में काव्य-पाठ करने में विशेष आनन्दानुभूति होती थी। मैं उन्हें कवि-सम्मेलन-सम्राट् के रूप में काव्य-पाठ करने हेतु आमंत्रित करता था। हजारीबाग के कवि-सम्मेलन में मैंने उन्हें 'कवि-सम्मेलन-सम्राट' कहकर काव्य-पाठ करने के लिए आमंत्रित किया था। श्रोतागण आश्चर्यित हुए कि मैं कविवर **'नेपाली'** जी को कवि-सम्मेलन-सम्राट कह रहा हूँ। वस्तुतः **'नेपाली'** जी कवि-सम्मेलन-सम्राट् थे ही और उनका काव्य-पाठ सर्वाधिक सफल रहता था, क्योंकि वे सर्वथा सुकण्ठ थे और उनके स्वर का जादू श्रोताओं को सर्वाधिक सम्मोहित करता था। गीत-पाठ हेतु स्वर का ऐसा होना जादू का ही काम करता है। कविवर **'नेपाली'** जी के गीतों में अनुपम भाव-समृद्धि भी रहती थी। उनमें पूर्ण देशाभिमान था और वे स्वाभिमान के भी धनी थे।

हम दोनों की प्रथम भेंट बेतिया (पश्चिम चम्पारण का मुख्यालय) में राज उच्च विद्यालय द्वारा आयोजित कवि-सम्मेलन में हुई थी। कविवर **'नेपाली'** जी उसी उच्च विद्यालय के पूर्व छात्र थे और वहाँ छात्रावस्था में ही कविता-रचना के आवेग ने उन्हें प्रवेशिका-प्रमाणपत्र से वंचित कर दिया था। प्रथम भेंट में ही हम दोनों में बन्धुत्व स्थापित हो गया। **'नेपाली'** जी के पिताश्री आदरणीय **रेल बहादुर जी** सेना से सेवा निवृत्त होकर बेतिया राज की सेवा में आ गए थे। **'नेपाली'** जी **'रतलाम टाइम्स'** के सम्पादकीय विभाग को छोड़कर बेतिया में रहने लगे और राज-मुद्रणालय के व्यवस्थापक के रूप में कार्यरत हो गए। राज ने उन्हें दो-तीन साधारण कमरों के निर्माण योग भू-खण्ड दे दिया तो वैसा ही एक सामान्य आवास बन गया। उसी में **'नेपाली'** जी अपने पिताजी तथा अपनी पत्नी एवं अनुज **श्री बमबहादुर सिंह नेपाली** के साथ रहने लगे।

१९४२ ई० की अगस्त-क्रान्ति में सम्मिलित होकर अपने संकल्प के अनुसार मैंने अपने जिले शाहाबाद (अब भोजपुर) बिहार के महान्-स्वतंत्रता-सेनानी (१८५७ ई०) के जन्म-स्थान जगदीशपुर में अपने स्वतंत्रता-संग्राम का विकास किया और उसके ब्रिटिश थाने को जला दिया तो उसकी सूचना मिलते ही तत्कालीन राज्यपाल (उस समय गवर्नर कहते थे) **रदरफोर्ड** ने मुझे देखते ही गोली मारने का आदेश दिया।

बिहार-सचिवालय के गुप्तचर विभाग के अधीक्षक **महाकवि केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'** ने इसकी सूचना गुप्त रूप से मेरे पास भिजवाई और यह परामर्श भी भेजा कि अभी मैं गिरफ्तारी से बचूँ। इसकी सूचना आदरणीय **जयप्रकाश नारायण जी** को भी प्राप्त हुई, तो उन्होंने मुझे फरार होकर स्वतंत्रता-संग्राम की मशाल जलाये रखने और इसका प्रचार घूम-घूम कर करने का परामर्श भेजा। अतएव बन्धुवर **'नेपाली'** जी से मिलना-जुलना बाधित हो गया। यों प्रचार के क्रम में एक बार मेरी संक्षिप्त भेंट बेतिया की एक सड़क पर हो गई। मेरी इस स्थिति की सूचना रामगढ़ राज (बिहार) के व्यवस्थापक **रायबहादुर गुरू सेवक उपाध्याय** को भी मिली, तो उन्होंने यह सूचना आजमगढ़ (उत्तर प्रदेश) के अपने आवास पर भी भेजी। वहाँ उनके अग्रज महाकवि **अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'** रह रहे थे। श्रद्धेय **'हरिऔध'** जी ने यह सूचना वहाँ के दूसरे **महाकवि गुरूभक्त सिंह 'भक्त'** को दी। फरारी के क्रम में कुछ दिनों के लिए वाराणसी में और तत्पश्चात कानपुर में भी रहा। आदरणीय **'भक्त' जी** दोनों स्थानों पर पहुँचे। इन दोनों स्थानों कं े मेरे आदरणीय **महाकवि रामनरेश त्रिपाठी** जी ने उन्हें दिए थे। श्रद्धेय **राष्ट्रकवि मैथिलीश गुप्त** जी भी मेरी स्थिति जानकर विशेष सूचना लेने हेतु पटना सिटी स्थित अपने सम्बन्धी राय **ब्रजराजकृष्णजी** के यहाँ पहुँचे। तब एक बार मैं कुछ दिनों के लिए छपरा के पास या था और वहाँ का पता मैंने आदरणीय **राय ब्रजराजकृष्णजी** को दे दिया, तो उन्होंने श्रद्धेय **राष्ट्रकवि गुप्त** जी से मिलने हेतु एक विश्वस्त व्यक्ति को मुझे लाने के लिए भेजा। भूमिगत रहते हुए ही मुझे कलकत्ता जाना पड़ा और सिने-निदेशक **श्री देवकी कुमार बसु** के देश-भक्तिपूर्ण चलचित्र **'स्वर्ग से सुन्दर देश हमारा'** के संवाद लिखने का अवसर मिला और **श्री बसु** ने मेरे संवाद-लेखन को उत्कृष्ट मानते हुए मुझे एक मास में ही इतनी राशि दे दी कि मैं अपने गाँव की बन्धक भूमि का एक तिहाई भाग मुक्त करा सका। कलकत्ता से कानपुर लौटने के क्रम में मैंने उत्तर बिहार के चम्पारण जिले के बेतिया-बगहा होकर गोरखपुर-लखनऊ-कानपुर का मार्ग निर्धारित किया और साहबगंज के पास मनिहारी घाट से स्टीमर द्वारा कटिहार-बरौनी- मुजफ्फरपुर होते हुए बेतिया पहुँचा तो बन्धुवर **'नेपाली'** जी से भेंट करते हुए बगहा गया। उन्हें मैंने **'स्वर्ग से सुन्दर देश हमारा'** चलचित्र के संवाद-लेखन की बात बताई, तो उन्होंने मुम्बई जाकर सिने गीतकार बनने की इच्छा बताई। मैंने उनसे कहा कि उस संसार में लम्बी अवधि तक मद्यपान से अछूता रहना सम्भव नहीं। मैंने तो केवल एक मास का ही समय दिया तो बच सका। किन्तु उनकी इच्छा उत्कृष्ट थी और कालान्तर में अवसर मिलने पर वे वहाँ गए। आदरणीय **महाकवि रामनरेश त्रिपाठीजी ने ही उन्हें अवसर दिलाया था।**

आरा मण्डल कारा १९४५ ई० में मुक्त होने पर मैं पटना में रहने लगा, तो मुम्बई से बेतिया जाते हुए वे पटना में मुझसे मिलते और मेरे यहाँ भोजन-जलपान ग्रहण किया करते थे। मेरी

धर्मपत्नी **श्रीमती चन्द्रावती पाण्डेय** का बनाया हुआ भोजन-जलपान वे बेहद पसन्द करते थे। किराये के मकानों में रहने की विवशता के कारण मैं आवास बदलता रहता था, परन्तु उन्हें बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-भवन से मेरे आवासों का पता मिल जाता था और कदमकुआँ मुहल्ले के ही मकानों में रहने के कारण सम्मेलन के कर्मचारी उन्हें मेरे पास पहुँचा दिया करते थे। उन्होंने मुझसे पूछा कि आवास क्यों बदलते रहते हैं, जब आप भूमिगत नहीं हैं तो मैंने सुनाया-

रहना है भाड़े के घर में, अतः बदलता रहता हूँ,
नए-नए सुख पाता रहता, नए-नए दुःख सहता हूँ,

मेरे इस कथन को सुनकर अपने विनोदी स्वभाव के अनुसार ही **'बन्धुवर नेपाली'** जी ठठाकर हँस पड़े।

मेरे आवासों पर **महाकवि गुरूभक्त सिंह जी 'भक्त'** नियमित रूप से प्रति वर्ष आजमगढ़ से आकर कुछ दिन ठहरा करते थे। **महाकवि कलक्टर सिंह 'केसरी'** जी समस्तीपुर से आकर एक बार ही मेरे साथ ठहरे थे। **महाकवि आरसी प्रसाद सिंह** जी ने एक बार मेरे यहाँ भोजन भी ग्रहण किया था। ठहरे वे अन्य जगह थे। तब वे प्रायः मुजफ्फरपुर में रहते थे और दिन में अपना कार्य सम्पन्न करने के पश्चात् मुजफ्फरपुर लौट जाया करते थे।

एक बार बांदा (उत्तर प्रदेश) से मुझे ही बिहार का प्रतिनिधित्व हेतु कवि-सम्मेलन में आमंत्रित किया गया था। बन्धुवर **नेपाली** जी को भी मुम्बई से आमंत्रित किया गया था। कवि-सम्मेलन एक खुले मैदान में आयोजित था। ग्रीष्म ऋतु थी और कई हजार काव्य-प्रेमियों का जमघट था। दर्जनों कवि भी थे और प्रायः रात्रि पर्यन्त कवि-सम्मेलन चलता रहा। हम दोनों भाइयों को बार-बार काव्य-पाठ करना पड़ा। परन्तु बन्धुवर **'नेपाली'** जी के गीत-पाठ तो सर्वाधिक प्रभावकारी रहे ही और उनके भावों तथा कवि-सम्मेलन में दिग्गजी स्वर का जादू तो सर्वाधिक सम्मोहक रहा ही।

जब-जब मैं बेतिया के साहित्य-समारोहों में आमंत्रित किया जाता था, तब-तब वहाँ बन्धुवर **'नेपाली'** जी मुझे अपने घर पर भोजन करने हेतु आमंत्रित किया करते थे। मैं उनके आमंत्रण में यह परिवर्तन किया करता था कि चाय तो पी लेता था, परन्तु भोजन हेतु मैं उन्हें ही आमंत्रित किया करता था कि मेरे श्रद्धालुओं के यहाँ ही आप भोजन किया करें। वे अपने विनोदी स्वभावनुसार हँसकर स्वीकार करते थे और कहा करते थे 'पण्डित जी, आपको चाय पिलाना मेरे लिए बहुत लाभप्रद होता है, क्योंकि आप मेरी चाय का कई गुना मुझे भोजन के रूप में दे दिया करते हैं।' वहाँ मेरी अध्यक्षता में वे कविता-पाठ असाधारण प्रसन्नतापूर्वक किया करते थे। वहाँ भी कवि-सम्मेलनों में उन्हें **'कवि-सम्मेलन-सम्राट'** कहकर काव्य-पाठ हेतु आमंत्रित किया करता था। वे कहा करते थे कि 'आप बेतिया आकर मेरे नगर तथा जिले में मेरा सम्मान बढ़ा दिया करते हैं।' उन दिनों कवि-सम्मेलनों का संचालन भी प्रायः कवि-सम्मेलन के अध्यक्ष ही किया करते थे; अलग से कोई कवि-सम्मेलन-संचालक नहीं हुआ करते थे।

एक बार भारतीय-विद्या-भवन नामक अन्तरराष्ट्रीय संस्थान में संस्थापक-संचालक महान् विद्वान साहित्यकार श्रद्धेय **कन्हैया लाल मानिकलाल मुंशी** महोदय ने संस्थान के मुख्यालय

मुम्बई में आयोजित अखिल भारतीय साहित्यिक समारोह एवं कवि-सम्मेलन हेतु मुझे आमंत्रित किया था, तो मुझे आशा थी कि उस अखिल भारतीय कवि-सम्मेलन में कविवर **'नेपाली'** जी से भी सत्संग होगा। किन्तु मुझे निराशा हुई, क्योंकि उन्हें आमंत्रित ही नहीं किया गया था तो स्वाभिमानी **'नेपाली'** जी की अनुपस्थिति स्वाभाविक थी। उन्हें आमंत्रित करना ही चाहिए था और कविता-पाठ हेतु उन्हें मोटर-कार से लाना चाहिए था। उन्हें मेरे मुम्बई पहुँचने की सूचना मिली तो वे आश्वस्त हो गए थे कि उनके आवास पर हम दोनों की भेंट होगी ही। उनका ऐसा सोचना स्वाभाविक था, क्योंकि वे मुझे कर्त्तव्य-पालक और सम्बन्धों का निर्वाहक मानते थे।

कवि-सम्मेलन के पश्चात् प्रातः काल ही मैंने **'नवनीत'** नामक विख्यात मासिक पत्रिका (मुम्बई) के सुख्यात एवं कुशल सम्पादक मित्रवर **रतनलाल जोशी** से अनुरोध किया कि वे मुझे कविवर **'नेपाली'** जी के आवास पर पहुँचा देने का कष्ट करें। वे तो उनका आवास नहीं जानते थे, परन्तु उनके बिहारवासी सहायक **श्री वीरेन्द्र कुमार** जानते थे। अतएव मित्रवर **जोशी जी** ने उन्हें ही कविवर **'नेपाली'** के आवास पर मुझे स्वागत-समिति की मोटर-कार से मुझे ले जाने का भार सौंपा। एक झुग्गी-झोपड़ीनुमा मुहल्ले में मुझे **श्री वीरेन्द्र कुमार** ले गए जहाँ झुग्गीनुमा आवास में विख्यात सिने-गीतकार कविवर **'नेपाली'** रहते थे। मुझे इससे दुःख हुआ। मेरी दुःखानुभूति को मेरी आकृति पर व्यक्त पाकर बन्धुवर **'नेपाली'** जी ने कहा-''पण्डित जी! आपने ठीक कहा था कि सिने-संसार में समग्र तक टिकने के लिए शराब पिलानी और पीनी पड़ेगी, जिसपर बहुत व्यय होगा। साथ ही सिने-गीतकारों के लिए बराबर काम मिलना भी साधारणतः सम्भव नहीं होता। इसलिए अक्सर अर्थाभाव झेलना पड़ता है। मैंने उनकी झेंप को भाँप कर कहा कि सिने-गीतकार के लिए यह दुःखानुभूति की बात नहीं होनी चाहिए, क्योंकि यह स्वाभाविक है। वस्तुतः सिने-संसार में निरन्तर काम पाने के लिए भी सहारा लेना पड़ता है। **गोपालदास 'नीरज'** को भी स्थायी रूप से वहाँ रहने का अवसर न मिला। गीतकार **'प्रदीप'** जी ही वहाँ स्थायी रूप से रह सके, क्योंकि उन्हें बराबर काम मिलता रहा।

एक बार मुम्बई से की **हिज मास्टर्स व्हायस** नामक रेकॉर्डिंग कम्पनी में गीत-रेकार्डिंग हेतु जाते हुए कविवर **'नेपाली'** जी मिलने के लिए पटना पहुँचकर मुझसे मिले और मेरे अवास पर उन्होंने भोजन किया और एक होटल में ठहरे, जो मेरे अवास के समीप ही था। उन्होंने मुझसे पूछा ''पण्डित जी! क्या वहाँ जाने के लिए मेरे कपड़े ठीक हैं?'' मुझे लगा कि उनके कपड़े ठीक नहीं हैं। अतएव मैंने उनके लिए उपयुक्त वस्त्रों की व्यवस्था की। ई० १९६२ अक्टूबर को चीन ने भारत की पूर्वोत्तर सीमा पर आक्रमण किया तो देशभक्त, कविवर **'नेपाली'** जी ने अनेक देशभक्ति-गीत लिखे जो **'हिमालय ने पुकारा'** नामक कविता-संग्रह में संग्रहित हैं और जो तत्काल प्रकाशित हुयी। वे गीत शौर्य-प्रेरक थे और व्यापक, लोकप्रिय हुए। बिहार ने कविवर **'नेपाली'** जी को कविता-पाठ हेतु आमंत्रित किया। भागलपुर नगर तथा ग्रामीण क्षेत्र के कवि-सम्मेलनों में भी वे गए। मैं पटना से बाहर कहीं भी नहीं जा सका, क्योंकि मैं **दैनिक 'नवराष्ट्र'** के प्रधान सम्पादक-पद का दायित्व निभा रहा था और बिहार की 'चीनी आक्रमण विरोध समिति, का संचालन भी कर रहा था। भारत के प्रथम राष्ट्रपति पूज्यवर **देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद जी** अपने दो कार्य-कालों (दस वर्ष) के पश्चात् पटना के सदाकत आश्रम में

रह रहे थे और पटना के गाँधी मैदान में मेरे द्वारा २४ अक्टूबर १९६२ ई० को आयोजित विशाल 'चीनी आक्रमण-विरोध-जनसभा' की सफलता को देखकर उन्होंने मुझे आदेश दिया था कि मैं पटना से बाहर न जाऊँ।

भागलपुर जिले के एक ग्रामीण क्षेत्रीय कवि-सम्मेलन से लौटते हुए कविवर **'नेपाली'** जी भागलपुर पहुँचकर तथा अपना सामान लेकर उन्होंने मुझसे मिलने के लिए पटना आने की इच्छा व्यक्त की थी। परन्तु वे भागलपुर नगर में भी न पहुँच सके और भागलपुर स्टेशन पर ही उनका आकस्मिक एवं असामयिक निधन हो गया। उनकी अंत्येष्टि भी भागलपुर के बरारी गंगाघाट पर हो गई। यह शोक उनके अनुज श्री **बमबहादुर** ने विपन्न **'नेपाली-परिवार'** हेतु आर्थिक सहायता कराने का अनुरोध किया तो मैं तत्परतापूर्वक यथासम्भव सहायता करने-कराने का कर्तव्य-पालन कर सका। दु:ख है कि पर्याप्त न करा सका। बन्धुवर **'नेपाली'** जी के प्रति मेरी श्रद्धांजलियाँ सदा समर्पित रहेंगी। □

'देवगीत'
अशियाना नगर, पटना- ८०० ०२५

कुछ अविस्मरणीय क्षण नेपाली जी के साथ

• वासुदेव नारायण 'आलोक'

हिन्दी के लोकप्रिय कवि **नेपाली**–सहज, शाश्वत भावों के रससिद्ध कवि **नेपाली**–कोमल एवं रागात्मक भावनाओं के गायक कवि **नेपाली**–प्रकृति के प्रिय कवि **नेपाली**–समाज और राष्ट्र के नवनिर्माण की कल्पना करने वाले तथा देश-भक्ति और राष्ट्र-चेतना के उद्गाता **कवि नेपाली** की जब चर्चा चलती है, तो उनके साथ बीते हुए कुछ अविस्मरणीय क्षण याद आ जाते हैं।

नेपालीजी के प्रथम दर्शन गया में हुए। बात १९४५ से ४८ के बीच की है, तब गया में छोटे-बड़े कवि-सम्मेलन अक्सर हुआ करते थे। **स्व० वियोगीजी** के अतिरिक्त **गुलाब खंडेलवाल, हंसकुमार तिवारी, रुद्रजी** जैसे कवि गया की साहित्यिक गतिविधियों के प्राण और प्रेरणा के अक्षय स्रोत थे। कवि-गोष्ठियाँ तो महीने में एक-दो बार अवश्येव होती थीं। इन गोष्ठियों में **नारायण लाल कटरियार, पन्नालाल महतो हृदय, रुद्रजी, हंसकुमार जी, गुलाब जी** और कभी-कभी **वियोगी जी** भी उपस्थित रहते थे। इन यशस्वी कवियों की उपस्थिति में गोष्ठियाँ जीवन्त हो उठती थीं। मैं १९४० से ही कविताएँ लिखने लगा था। मेरी कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में छपने भी लगी थीं। अतः मुझे भी इन गोष्ठियों में सुनने-सुनाने का सुअवसर प्राप्त हो जाता था।

नेपाली जी के प्रथम दर्शन तब हुए जब वे एक कवि-सम्मेलन में भाग लेने गया आए थे। मुझे अच्छी तरह याद है, कवि-सम्मेलन में सुबह होने तक **नेपालीजी** का सस्वर कविता-पाठ श्रोताओं को मंत्रमुग्ध करता रहा। **रुद्र जी** ने भी ढेर सारी कविताएँ सुनाई थीं। स्थानीय कवि के रूप में मैंने भी एक कविता सुनाई थी।

कवि-सम्मेलन के दूसरे दिन **नेपालीजी** से मिलने की अपनी उत्कट इच्छा को मैं रोक नहीं सका। जब मैं उनसे मिला तो उन्होंने मुझे पहचान लिया और बोले-इतनी कम उम्र में आप ऐसी पकी कविताएँ कैसे लिखने लगे। फिर उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा-अभी तो आप नवयुवक हैं। कविता लिखने के साथ-साथ पढ़ने-लिखने पर भी ध्यान दीजिए, अभी तो पढ़ने के दिन हैं आपके। 'जी, इच्छा तो है एम० ए० करने की। आगे क्या होता है, कह नहीं सकता।' मैंने कहा।

नेपालीजी - कविताएँ कब से लिखते हैं ?

मैं - १४ वर्ष की उम्र से। तब मैं सातवें वर्ग में था।

नेपालीजी- कभी फेल भी हुए ?

मैं - जी, दो बार।

नेपालीजी - किस विषय में ?

मैं - गणित में।

इस पर नेपालीजी दिल खोलकर हँसे-पता नहीं, कविता को गणित से और गणित को कविता से वैर क्यों है ? कवि-कलाकार गणित और विज्ञान में पीछे क्यों रह जाते हैं?

फिर, जैसे समझाने के स्वर में कहने लगे- आप कविताएँ लिखते हैं, तो लिखिए। किन्तु एक बात याद रखिए, अपनी और परिवार की रोटी, कपड़ा और मकान की समस्या जब हल हो जाएंगी, तभी आप जमकर लिख सकेंगे। इसलिए आप जितना पढ़ सकते हैं, पढ़िए। व्यवसाय तो आप से होगा नहीं। इसलिए पढ़-लिखकर कोई नौकरी कीजिए। जैसी भी नौकरी मिले, कर लीजिए।

उनकी ये बातें कितनी सार्थक और सारगर्भित थीं, इसका अनुभव मुझे बाद में हुआ, जब मेरी शादी हो गई। देखते-देखते समाज शिक्षा बोर्ड, बिहार सरकार द्वारा प्रकाशित साप्ताहिक **जनजीवन** के सहायक सम्पादक के पद पर मेरी नियुक्ति हो गई। **स्व० ब्रजकिशोर नारायण** प्रधान सम्पादक थे। १९५० में मेरा प्रथम कविता-संग्रह **तिवारी जी** के मानसरोवर प्रकाशन, गया से प्रकाशित हो चुका था।

एक दिन मुझे **आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री** का एक पत्र मिला। पत्र में उन्होंने मुजफ्फरपुर के किसी विद्यालय के रजत या स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर आयोजित कवि-सम्मेलन में आने के लिए आमंत्रित किया था। मुजफ्फरपुर पहुँचकर मैं **शास्त्री जी** के आवास पर चला गया। वहाँ **त्रिलोचन शास्त्री** विराजमान थे। शास्त्री जी ने उन्हें मेरा परिचय दिया तो वे बोले नागरी प्रचारिणी में आपकी पुस्तक है। उस पुस्तक की अधिकांश कविताएँ 'ए' ग्रेड की हैं। फिर **निराला** की **'राम की शक्ति पूजा'** के कुछ अंशों के विषय में बात होती रही।

शाम को **स्व० श्यामनन्दन किशोर** मुझे एक होटल ले गए। वहाँ **नेपाली जी** पहले से मौजूद थे। **किशोर जी** ने मेरे विषय में **नेपाली जी** से कहा- ये **आलोक जी** हैं अपनी पीढ़ी के बाद की पीढ़ी के प्रमुख कवि।

उस समय तक **धर्मयुग, हिन्दुस्तान, संगम, नया समाज, नया पथ** आदि पत्र-पत्रिकाओं में मेरे गीत छप चुके थे- निरन्तर छपते ही रहते थे। **नेपाली जी** ने कहा- कौन **आलोक? भोलानाथ आलोक या वासुदेव नारायण आलोक?**

किशोर जी ने कहा- **वासुदेव नारायण आलोक।**

नेपाली जी- गया में ये मुझसे मिल चुके हैं, किन्तु उस समय अपने नाम के साथ इन्होंने **आलोक** उपनाम शायद नहीं जोड़ा था।

फिर मुझसे पूछा- इन दिनों आप क्या कर रहे हैं ? सिर्फ गीत लिख रहे हैं या और कुछ भी?

मैंने कहा- समाज शिक्षा बोर्ड, बिहार सरकार द्वारा प्रकाशित **साप्ताहिक जनजीवन** का सहायक सम्पादक हूँ।

नेपालीजी - चलिए! कुछ कर तो रहे हैं आप। गीत-कविता लिखने के साथ-साथ जीवन यापन के लिए कुछ करना आवश्यक है।

रात को कवि-सम्मेलन में **नेपालीजी** का सस्वर कविता-पाठ आरंभ हुआ। मुझे उम्मीद थी, **नेपालीजी** कोई भावप्रधान गीत सुनाएँगे, जो मर्म को छू ले, किन्तु आरंभ में उन्होंने एक बेहद सस्ता, सिनेमेटिक-रोमांटिक गीत सुनाया, जिसकी अंतिम पंक्ति थी- **दुपट्टा उनके मुँह पर डाल दो।** इस गीत पर तालियाँ खूब बजीं, किंतु मुझे यह गीत बड़ा अरुचिकर लगा।

बात पढ़ने की है। नेपाली जी मुंबई से पटना आए थे- किस अवसर पर, याद नहीं। मैंने जब उनकी वेश-भूषा देखी तो हैरत में पड़ गया- ढीला-ढाला फुल पैंट और कई रंगों के बड़े-बड़े छापवाला बेहद भड़कीला शर्ट। उन्हें इस रूप में देखकर लगा- मेरे सामने कोई फिल्मी खलनायक या कोई एक्स्ट्रा अभिनेता खड़ा है। मुझे बड़ी अरुचि हुई। मेरा मन खिन्न हो उठा, किन्तु मैंने अपनी प्रतिक्रिया को शब्दों और व्यवहार में व्यक्त होने से रोक दिया। फिर भी, न चाहते हुए भी मेरे मुँह से निकल ही गया- मुझे लगता है, आप फिल्मी दुनिया में न जाते तो अच्छा होता।

नेपाली जी मुस्कुराने लगे- बहुतों की यही धारणा है, किन्तु मैं क्यों फिल्मी दुनिया में चला गया, यह आप अभी नहीं समझेंगे। अभी तो आपकी शादी भी नहीं हुई है। परिस्थिति आपको समझा देगी।

मैंने अपने को सम्हालते हुए कहा- आप ठीक कहते हैं। गया में, जब मैं छात्र ही था, आपने जो कहा था, मुझे अच्छी तरह याद है- रोजी-रोटी के लिए कुछ करना ही पड़ता है। इसलिए आप जितना पढ़ सकते हैं, पढ़िए। आप व्यवसाय तो कर नहीं सकते। इसलिए पढ़-लिखकर कहीं नौकरी कीजिए। जैसी भी नौकरी मिले, कर लीजिए। अपनी और परिवार की रोटी, कपड़ा और मकान की समस्या जब हल जो जाएगी, तभी आप जमकर लिख सकेंगे।

नेपालीजी मुस्कुराते हुए चले गए। सचमुच, उन्होंने जो कहा था, वह कितना सच है- कितना सारगर्भित और कितना व्यवहारिक।

जब मेरी शादी हुई और मैं एक बच्चे का पिता बना तो समझ में आ गया, **नेपालीजी** क्यों फिल्मी गीत लिखने लगे- **निरालाजी** क्यों **सती अनुसूया, सती द्रौपदी** आदि छोटी-छोटी किशोरोपयोगी पुस्तकें लिखने लगे थे- क्यों उन्होंने बंगला सीखने वालों के लिए **हिन्दी-बंगला शिक्षक** जैसी पुस्तक लिखी।

नेपालीजी फिल्मी दुनिया से लौट आए। **'धर्मयुग'** और **'हिन्दुस्तान'** में उनमें सहज-शाश्वत मानवीय भावनाओं से परिपूर्ण, और जब चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया तब देशभक्ति, शौर्य और जन-जन में राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले ओजस्वी गीतों को पढ़कर मुझे लगा- नहीं, नेपाली फिल्मी दुनिया में खो नहीं गए। वहाँ से नई स्फूर्ति, नई ऊर्जा और नई शक्ति लेकर अपनी दुनिया में वापस लौट आए हैं। □

ज्वाला भवन
द्वारा- सुनील कुमार
जगत् नारायण रोड
कदमकुआँ, पटना - ८००००३

मेरा धन है स्वाधीन कलम

• विन्ध्यवासिनी दत्त त्रिपाठी

बिहार के जिन हिन्दी-कवियों ने अपनी कविता, अपने गीतों से राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनायी है, और अपनी अप्रमेय साधना से हिन्दी-कविता को जो सार्थक सम्पन्नता दी है, उसमें **रामधारी सिंह 'दिनकर', आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री** और **गोपाल सिंह नेपाली** का नाम पांक्तेय है।

आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री के गीतों में जहाँ शास्त्रीय संगीतात्मकता है, वहीं **नेपाली** के गीतों में लोकधुन और लोक-संस्कृति से भरा-पूरा संगीत है। नेपाली के गीतों की सहजता ने उन्हें जो लोकप्रियता दी, वह और किसी को नहीं मिल सकी। वस्तुतः **भाषा की सहजता ही कविता का प्राण है।** सहज भाषा वही लिख सकता है, जो स्वयं सहज हो। **नेपाली** सहज संवेदना के कवि थे।

नेपाली के सम्बन्ध में **आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री** ने अपना अभिमत प्रकट करते हुए कहा है – "**मिल्टन, कीट्स** और **शेली** इन तीनों कवियों की प्रतिभा **नेपाली** में संगम बनकर उभरी है।".

नेपाली एक ऐसे गीत-कवि थे, जिन्होंने अपने गीतों को बहुत ऊँचाई दी थी। उनके गीतों से अनेक गीतकारों ने प्रेरणा ली, उनके गीतों को पढ़-सुनकर अनेक लोग गीतकार बने।

नेपाली को विद्यालयीय शिक्षा का कोई संबल नहीं था, किन्तु जीवन की पाठशाला में उन्होंने जो शिक्षा पायी थी, या फिर जिस तरह की शिक्षा पायी थी, वह अनमोल थी।

नेपाली के पिता हवलदार मेजर थे। उनके यत्र-तत्र स्थानान्तरण के क्रम में उन्होंने प्रकृति के विराट रूप के दर्शन किए। ऊँची-नीची घाटियाँ, ऊँचे-ऊँचे पहाड़, जंगल, जंगलों के बीच से गुजरने वाली सुनसान पगडंडियाँ, नदियों और निर्झरों का कल-कल स्वर, उनका बहता बेरोक जल। इन सारे देखे चित्रों ने उनके कवि-मन को बहुत-बहुत प्रभावित किया, और वे प्रकृति के ऐसे जादूगर बन गए कि उनके गीतों का जादू लाख-लाख मन-प्राणों को बाँध पाने में सक्षम बना।

नेपाली प्रकृति के स्वच्छन्दतावादी कवि तो थे ही, साथ ही उनकी यह विशेषता भी थी कि वे प्रकृति के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना के स्वर से भी जुड़े थे। उनके अनेक गीतों में राष्ट्रीयता का स्वर बहुत मुखर होकर उभरा है।

अपने जीवन के अवसान के कुछ पूर्व **'हिमालय ने पुकारा'** लिखकर तो उन्होंने राष्ट्रीय चेतना के कवि के रूप में अपनी एक ऐसी पहचान बनायी कि उसे भुला पाना कठिन ही नहीं, असम्भव भी है। अन्तिम समय में वे **'वन मैन आर्मी'** के रूप में जाने, जाने लगे थे।

'हिमालय ने पुकारा' उनकी यह रचना चीनी आक्रमण के समय लिखी गयी थी। देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक उन कविताओं का पाठकर सम्पूर्ण देश को उन्होंने आंदोलित, उत्प्रेरित किया था। वैसे उनकी मृत्यु के सम्बन्ध में बड़ा विवाद है। किन्तु बहुतों का यह मानना है कि **चीनी आक्रमण के विरूद्ध लिखी जाने वाली कविताएँ ही उनकी जान लेवा का कारण बनीं।**

नेपाली जब अपनी प्रारम्भिक गीत रचना के रूप में सामने आए- **'पीपल के पत्ते गोल-गोल, कहते रहते कुछ डोल-डोल'**, तो गीत के इस सहज स्वर और छन्द ने सम्पूर्ण हिन्दी-जगत् का साश्चर्य ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। **नेपाली** से, **नेपाली** के बाद की पीढ़ी ने अपने गीतों के लिए एक नयी भाषा का संस्कार पाया। **नेपाली** के गीतों में उनकी अपनी अनुभूतियों की अनुगूँज सुनायी पड़ती थी। **नेपाली** के गीतों में अनूठी अभिव्यंजना, मानवीय संवेदना और समृद्ध संभावना उनके प्रारम्भिक गीतों से ही देखने को मिलने लगी थी।

मैंने पहली बार नेपाली को वाराणसी के चित्रा सिनेमा हाल के एक विराट कवि-सम्मेलन में देखा था। वह समय, उनके खूबसूरत गीतों के दौर का समय था। उनका स्वर असाधारण रूप से श्रोताओं को आकृष्ट करता था। तभी मैंने सुना था- **उसपार कहीं बिजली चमकी होगी। जो झलक उठा है मेरा भी आँगन। उस ओर कहीं छाए होंगे बादल, जो भींग उठा है मेरा भी मधुबन।** या फिर-**तन का दिया प्राण की बाती। दीपक जलता रहा रात भर,** पहली बार जब नेपाली को सुना, तो सुनने का कुछ ऐसा मोह जगा कि जब जहाँ संभव हुआ, नेपाली जिस कवि सम्मेलन में आए, मैं वहाँ गया। उन्हें सुना। उनके स्वर में गुनगुनाया।

चीनी आक्रमण के समय पटना में एक विराट कवि-सम्मेलन हुआ था। जिसमें **नेपाली** ने **'हिमालय ने पुकारा'** के अनेक गीत सुनाए थे और उनके स्वर के जादू का मैं प्रत्यक्ष द्रष्टा बना था। अपने गीतों से उन्होंने चीनी आक्रमण के विरुद्ध एक जमीन तैयार की थी।

नेपाली गद्य-काव्य भी लिखा करते थे। **नेपाली भाषा में लिखा उनका 'कल्पना' नामक काव्य-संग्रह उनके गद्य-काव्य का संकलन है।** इसके अलावे- **उमंग, पंछी, रागिनी, पंचमी, नवीन, नीलिमा** और **'हिमालय ने पुकारा'** उनके काव्य संग्रह हैं।

नेपाली की किसी एक पुस्तक की भूमिका **सुमित्रानंदन पंत** ने तथा दूसरी पुस्तक की भूमिका **निराला** ने लिखी थी।

जिस तरह **आरसी प्रसाद सिंह** की कविता **निर्झर** ने प्रसिद्धि पायी थी, उसी तरह **नेपाली** की कविता **'बहन'** की चर्चा परवान चढ़ी थी- जिसमें उन्होंने लिखा था- **''तू बन जा हहराती गंगा, मैं झेलम बेहाल बनूँ।''**

नेपाली फिल्मों में भी गए और उन्होंने फिल्मों के लिए गीत भी लिखे। किन्तु उन्होंने फिल्मों के लिए जो गीत लिखे, उन गीतों में कहीं भी आज जैसी विकृति देखने को नहीं मिलती। **प्रदीप, नेपाली** और **मोती बी० ए०** जैसे कतिपय हिन्दी के गीतकारों ने सिनेमा के गलियारे में जाकर भी गीतों के सांस्कृतिक एवं साहित्यिक स्वरूपों को बचाया। बस एक दो उदाहरण-

- **तुलसीदास** फिल्म का एक गीत- **''सच मानो तुलसी नहीं होते, तो हिन्दी कहीं पड़ी होती, उसके माथे पर रामायण की बिंदी नहीं जड़ी होती''**।
- फिल्म **नई राहें** का एक गीत- **''दर्शन दो घनश्याम नाथ मेरी अँखिया प्यासी रे''**।

इसी तरह **नेपाली** ने सिनेमा के लिए जो भी गीत लिखें हैं, उनमें कहीं भी उन्होंने साहित्य और संस्कृति के स्वर को गिरने नहीं दिया। वस्तुतः **नेपाली** प्रेम, प्रकृति और राष्ट्रीयता के कवि थे। उनका स्वर विद्रोही भी था, तभी तो उन्होंने लिखी थी- **नेहरू** को लक्षित कर ये पंक्तियाँ-

"तुम उड़ा कबूतर अम्बर में संदेश शांति का देते हो
चिट्ठी लिख कर रह जाते हो, जब कुछ गड़बड़ सुन लेते हो" या फिर
"ओ राही दिल्ली जाना तो कहना अपनी सरकार से
चर्खा चलता है हाथों से, शासन चलता तलवार से"

इसी विद्रोही स्वर के क्रम में - **"संग्राम बिना जिन्दगी आँसू की लड़ी है" तलवार उठा लो तो बदल जाय नजारा, चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा, भारत से तुम्हें प्यार तो बन्दूक उठालो, इन चीनी लुटेरों को भारत से निकालो,** मुझे ऐसा लगता है कि नेपाली जैसा विद्रोह का स्वर कम कवियों में देखने को मिलता है। कोई घुमाकर चाहे कुछ भी कहे किन्तु, **नेपाली** सीधे आक्रमण के पक्षधर थे।

वह एक समय था जब **संत विनोबा भू-दान की क्रान्ति** में लगे हुए थे और वे घूम-घूम कर भूमि माँग रहे थे। उनकी क्रान्ति कितनी सफल-असफल हुयी इससे कोई अनजान नहीं है। **नेपाली** के मन में इस भू-दान के क्रिया-कलाप में विश्वास नहीं था। शायद **नेपाली** पहले कवि थे, जिन्होंने अपने विरोध की अभिव्यक्ति को वाणी दी-

भीख माँगने से निर्धनता जाती तो क्या बात थी, लेन-देन से क्रान्ति चली- जो आती तो क्या बात थी, जब-जब याचक भिक्षा लेगा, निर्धनता को जीवन देगा, धन की सत्ता अमर करेगा।

साम्यवाद को लाना है तो छोड़ धनी निर्धन से माँग, मुसाफिरों से क्या माँगे, धरती से माँग, गगन से माँग।

नेपाली स्वाभिमान के कवि थे, देखिए उनका स्वाभिमान इन पंक्तियों में कैसे अभिव्यक्त हुआ है- **"तुम-सा लहरों में बह लेता, तो मैं भी सत्ता गह लेता, ईमान बेचता चलता तो, मैं भी महलों में रह लेता,** १९९९ सितम्बर में हम हिन्दी की स्वर्ण जयंती मना रहे थे। मुझे वह दिन भी याद है जब अंग्रेजी के विरोधी और हिन्दी के पक्षधर होने के नाते हमने पटना में अंग्रेजी के नाम पटों पर अलकतरा पोता था, जिसकी प्रतिक्रिया दक्षिण में हुई थी- किन्तु, हिन्दी के सम्बन्ध में नेपाली की यह उक्ति कितनी सच और सार्थक है, इसे हम देखें और सोचें-

"हिन्दी है भारत की बोली, तो अपने आप पनपने दो।
शृंगार न होगा भाषण से, सरकार न होगा शासन से।
यह सरस्वती है जनता की, पूजो उतरो सिंहासन से।"

नेपाली के एक अत्यन्त तीखे व्यंग्य का उदाहरण देखिए-

"बदनाम रहे, बटमार मगर, घर तो रखवालों ने लूटा।
मेरी दुल्हन-सी रातों को, नौ लाख सितारों ने लूटा।"

मैंने कहा है कि **नेपाली** गीतकार थे। अपने गीतों में ही वे खुले-खिले हैं। गीतों के प्रति उनकी ममता अद्भुत थी, तभी तो उन्होंने लिखा-

"यह गीतों का देश है। यहाँ चरवाहा बिरहा गाता है।
सुख हो, दुःख हो, सौंदर्य यहाँ गीतों में गाया जाता है।"

नेपाली स्वाधीन कलम के विश्वासी थे। उन्होंने कभी किसी की मर्जी से कुछ नहीं लिखा, उन्होंने कभी किसी की स्तुति-वंदना नहीं की- देखिए! उनकी गीत-पंक्ति-

मेरा धन है स्वाधीन कलम,
लिखता हूँ अपनी मर्जी से, बचता हूँ कैंची दर्जी से,
आदत न रही कुछ लिखने की, निंदा-वंदन खुदगर्जी से,
कोई छेड़े तो तन जाती है, बन जाती है संगीन कलम।

मुझे नहीं लगता किसी ने इस साफगोई के साथ अपने को अभिव्यक्त किया है। नेपाली ने अनेक महत्त्वपूर्ण कालजयी प्रेम-गीत भी लिखे हैं। किन्तु कलेवर वृद्धि के भय के कारण सब कुछ उद्धृत करना संभव नहीं लगता। बस एक उदाहरण और-

मैं प्यासा भृंग जनम भर का,
फिर मेरी प्यास बुझाए क्या, दुनिया का प्यार रसम भर का।

नेपाली के सम्बन्ध में **निराला** ने भविष्य वाणी की थी- "इधर के वर्षों में नवीन तारकों के सदृश जितने कवि हिन्दी-काव्य-गगन में चमकते हुए दीख पड़े, सौंदर्य के सुख-स्पर्श जादू से जिन्होंने मन को वशीभूत कर लिया तथा प्रकाश और तृप्ति दी– **गोपाल सिंह नेपाली** उनमें से एक हैं। मुझे उनके काव्य में शक्ति, प्रवाह, सौंदर्यबोध तथा चारू-चित्रण एक विशिष्टता लिए दीख पड़े। **राष्ट्रवाणी की पावन वीणा को वे बजाएँगे।"** **निराला** की भविष्य वाणी सच निकाली। **नेपाली** ने राष्ट्र वाणी की पावन वीणा बजायी। **'उमंग'** से लेकर **'हिमालय ने पुकारा'** तक की रचनाओं को पढ़ने के बाद मुझे ऐसा लगता है कि समग्रता में नेपाली का जो स्वर था, प्रेम, प्रकृति और राष्ट्रीयता का, वैसा स्वर अन्यत्र दुर्लभ है।

किसी ने सत्ता के इर्द-गिर्द रहकर प्रतिष्ठा अर्जित की तो, किसी ने अपनी विद्वत्ता और भारतीय संस्कृति के धरोहर के बलबूते पर, तो किसी ने वामपंथी विचारधारा के सहारे। किन्तु नेपाली अपनी सहजता, अपनी मानवीय संवेदना और अपने ग्रामीण संस्कारों में रस-बस कर शिखर तक पहुँचे।

इस कालजयी कवि का जन्म ११ अगस्त १९११ को हुआ और उनका निधन असहाय अवस्था में एक अनाथ की तरह भागलपुर के प्लेटफार्म नं. २ पर हो गया। **"मरनो भलो विदेश में, जहाँ न अपनो कोय"।**

हिन्दी-साहित्य के इस वरद् पुत्र को संसार सदा स्मरण करता रहेगा। **नेपाली** अपनी रचनाओं में सदा अमर रहेंगे। □

डी-४, शांति विहार कॉलोनी
बेली रोड, पटना- ८०००१४

कविवर नेपाली

• अजातशत्रु

आज से नब्बे वर्ष पूर्व ठीक जन्माष्टमी के दिन हिमालय की तलहटी में, बेतिया नगर में, एक बालक का जन्म हुआ। भवानी मंडप के पीछे; बेतिया-राज के आउट हाउस के छोटे-से कमरे में। बेतिया राज के सहायक मैनेजर ई० बल्लू वाइल्ड के बंगला-रक्षक भूतपूर्व सैनिक रेल बहादुर और उनकी पत्नी सरस्वती देवी (जिसे रेलबहादुर प्यार से रौशन कहते थे) फूले न समाय। उनके मुख से निकल पड़ा, जन्माष्टमी के दिन हमारे घर साक्षात् गोपाल जी पधारे हैं। **उस बालक का नाम गोपाल हो गया।** यही बालक प्रकृति के चितेरे सुप्रसिद्ध गीतकार **गोपाल सिंह नेपाली** नाम से प्रख्यात हुआ।

''बहुत मिलते-जुलते दो लोक;।
नयन भी नील, गगन भी नील॥''

यह बिजली है न घटा घिर रही।
ऊँगलियाँ बालों पर फिर रहीं॥

राज हाते में वह बालक न मात्र फुटबॉल ही खेलता, अपितु विशाल पीपल की ओर टकी-टकी लगा कर देखता भी था। प्रारम्भिक रचनाओं में उसने लिखा :-

'पीपल के पत्ते गोल गोल'
कुछ कहते रहते डोल-डोल॥

अपनी कोठरी के सामने हरी घास पर फुटबाल ही नहीं उछालता, बल्कि **हरी घास** पर रचना भी करता। **मखमली हरे कोमल-कोमल दूर्वादल। मेरे आँगन की हरी दूब** पर उसकी रचना **'विशाल भारत'** में १९३३ में प्रकाशित हुई। नेपाली फुटबाल मैच में भी बेतिया का प्रतिनिधित्व करने लगे। एकबार फुटबाल खेलने **रतलाम** गए और उनके खेल तथा कविता से प्रभावित होकर **रतलाम** के लोगों ने उन्हें **रतलाम टाइम्स में सम्पादक के रूप में जगह दे दी। ऋषभ चरण जैन** उसी समय उनकी लेखनी से परिचित हुए और उन्हें सिने पत्रिका **'चित्रपट'** के सम्पादक के रूप में दिल्ली बुला लिया। पर प्रकृति के इस कवि का मन तो प्रकृति से लगा था। वह पीपल और साल के वृक्षों का प्रेमी था। कभी वह हरी घास को खोजता, कभी **फूलों को ढूँढता;** कभी नील गगन को याद करता। पक्षियों के कलरव उसकी सुधि से न बिसर रहे थे। वह रतलाम से दिल्ली और फिर लखनऊ **(सुधा)** होता हुआ पटना भागा। उसे तो अपने घर (बेतिया) के निकट रहने की विकट अभिलाषा थी। चलो पटना बेतिया के निकट तो है। **'योगी'** में **नेपाली** सम्पादक हो गए। विभिन्न विषयों पर उनकी लेखनी चलने लगी। **बाबा बौड़मदास** के रूप में **नेपाली** गोलघर के मुंडेरे से लिखने लगे। **लोग बौड़मदास के हास्य लेखों की प्रतीक्षा बेसब्री से हर सप्ताह करते।** पर नेपाली तो प्रकृति के निकट रहना चाहता था। उसे तो अपना टूटा आशियाना याद आ रहा था। जो अब साँप-चूहों का वास स्थल बनता जा रहा था। वह तो वहीं वास करना चाह रहा था।

देशरत्न राजेन्द्र प्रसाद (काँग्रेसाध्यक्ष) ने **विपिन बाबू** (विपीन बिहारी वर्मा, बेतिया राज के तत्कालीन मैनेजर) से कहा " प्रकृति के कवि का मन पटना महानगर में नहीं लग रहा है, यहाँ उसका दम घुट रहा है, उसकी कल्पना की अभिलाषा का केन्द्र है बेतिया; इसे बेतिया प्रेस में रख लें" और इस प्रकार **नेपाली** बेतिया राज प्रेस में व्यवस्थापक बन कर फिर अपने **कविवासर** पहुँचे। कवि नेपाली द्वारा स्थापित संस्था **कविवासर** की धूम मची। कवियों और शायरों का जमघट फिर लगने लगा। नेपाली हिन्दी-जगत् में प्रतिष्ठित हो चुके थे। उनकी कई काव्य-पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका था। **पंछी, उमंग** (जिसकी **भूमिका** स्वयं **पन्तजी ने लिखी थी**) **रागिनी, नीलिमा, पंचमी, नवीन**, आदि। अब वे बेतिया से प्रकाशित हस्तलिखित पत्रिकाओं; **प्रकाश, अरुणोदय, पथ-प्रदर्शक** के सम्पादक मात्र नहीं थे, वरन् **रतलाम टाइम्स, चित्रपट (दिल्ली) सुधा (लखनऊ) योगी (पटना) के सम्पादक भी रह चुके थे।** वह नेपाली जो मैट्रिक की परीक्षा नहीं दे सके **(१९३२ में मैट्रिक परीक्षा के लिए सेंटअप नहीं किए गए थे)** उनकी कविता मैट्रिक के कोर्स में थी। उनकी एक छोटी-सी रचना जो मैट्रिक पद्य-संग्रह में स्थान पा चुकी थी आज भी उतनी ही प्रांसगिक है।

> **"बढ़ चल बची हुई टुकड़ी, अब कर न विचार क्या बीता,**
> **कदम-कदम पर ताल दे रहे, गरज दमक हुंकार पलीता,**
> **मरते हैं डरपोक घरों में, बाँध गले रेशम का फीता,**
> **यह तो समर भूमि है, जहाँ मुट्ठी भर भूमि चूमी जीता।**

नेपाली का जीवन सादगी से भरा था। दो धोतियों और आमछाप मधबाँही कमीज उनकी एकमात्र पूँजी थी। पर **नेपाली** अपनी निर्धनता पर भी खुश थे। सुललित, सरल और ओजस्वी काव्य के रचनाकार **नेपाली के कंठ में भी बला का माधुर्य था।** कवि-सम्मेलनों में श्रोता मंत्र-मुग्ध होकर इनकी कविता और गीतों को सुनते। कवि-सम्मेलनों में नेपाली की धूम मची थी। चम्पारण के **स्व० महन्त धनराज पुरी**, (प्रसिद्ध शिकार-साहित्य के लेखक) कवि, राजनीतिज्ञ, चम्पारण हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के भू० पू० अध्यक्ष) **'सरस्वती'** में **नेपाली** की एक रचना देख कर **नेपाली** से मिलने चले; नेपाली अपने शीश महल स्थित आऊट हाउस की एक नीची छत वाली कोठरी में रहते थे। **महन्त धनराजपुरी** के शब्दों में "उन्हें गरीब सुन रक्खा था, किन्तु उनकी निर्धनता इस कोटि की निर्धनता है, इसकी कल्पना तो मैंने की भी नहीं थी। वे दोपहर को सोने की तैयारी में थे, परिचए हुआ। मैंने कोठरी पर एक सरसरी निगाह डाली। अलगनी पर एक फटी कमीज, एक मैली धोती लटकी हुई थी। कोठरी में कुछ पुस्तकें बिखरी पड़ी थीं, बिछावन में एक फटी हुई दरी का टुकड़ा था, जिस पर तकिये के काम के लिए कुछ पुस्तकें पड़ी थीं। एक पीतल का गिलास कोने में पड़ा था। बस कोठरी में इतने ही सामान थे।" **नेपाली** के गले में जमाने का दर्द था। उस जमाने के गीतकारों पर जाने-अनजाने **नेपाली** का बड़ा प्रभाव रहा। बेतिया राज प्रेस में नौकरी कर **नेपाली** किसी प्रकार अपनी गृहस्थी की गाड़ी खींचे जा रहे थे। उसी समय होली के अवसर पर कुछ व्यंग्य रचनाएँ निकलीं। एक कविता में व्यंग्य का निशाना **विपिन बाबू** (बेतिया राज के तत्कालीन मैनेजर) भी थे। कुछ लोगों ने इस व्यंग्य का लेखक **नेपाली** को कहा और **विपिन बाबू** से चुगली की। इतना ही नहीं उस व्यंग्य कविता की प्रतिलिपि **नेपाली** टेबुल के ड्रावर से निकली। **नेपाली** पर अनेक आरोप लगाए गए।

इन पर ४० रुपए का अर्थ-दंड लगवाया गया। यह नेपाली को बेहद अखरा और नेपाली ने बेतिया-राज प्रेस की नौकरी छोड़ दी। उसी समय नेपाली को बम्बई से कालिदास शताब्दी समारोह का आमंत्रण मिला। नेपाली अपना त्याग-पत्र और प्रेस की कुंजी अपने सहायक को फेंक कर बम्बई चल दिए। यह था नेपाली का बेतिया से महाभिनिष्क्रमण। वे बेतिया से गए तो फिर नहीं लौटे। नेपाली ने अपने साहित्यिक मित्रों से कहा **"आप बैठें साहित्य सम्हाले, मैं जाता जीवन की ओर।"**

नेपाली शुरू से ही दबंग, स्वाभिमानी, जी हुजूरी से अलग, और किसी का रौब बर्दाश्त न करने वाले थे।

> **"तुझ-सा लहरों में बह लेता,**
> **तो मैं भी सत्ता में गह लेता,**
> **ईमान बेचता चलता तो**
> **मैं भी महलों में रह लेता।"**

बम्बई में इनके गीतों को सुनकर फिल्मीस्तान के शशिधर मुखर्जी व निर्देशक पी० एल० सन्तोषी ने १५०० रुपए मासिक पर नेपाली को रख लिया। वहाँ आपने अनेकों गीत लिखे, जो बहुत लोकप्रिय हुए। मजदूर, सफर, शिकारी, आठ दिन, हर-हर महादेव जैसी फिल्मों के गीत लिखे। नेपाली लोकप्रिय सिने गीतकार के रूप में प्रसिद्ध हुए; इनका परिवार वहीं रहने लगा। बेतिया में इनके पिता और भाई रह गए। बम्बई में नेपाली को ख्याति मिली, पर प्यार न मिला, जिसकी इनको अपेक्षा थी।

> **"सावन भर नाचा मोर मगर,**
> **बौछार मिली, बादल न मिला।**
> **जीवन भर अँखियाँ रोईं तो**
> **जलधार मिली, आँचल न मिला।"**

सिनेमा-जगत् ने नेपाली का खूब शोषण किया। वे २००० रुपए मासिक पर गीत लिखते रहे। उधर नेपाली गीत लिखते रहे और बेतिया में नेपाली का पैत्रिक निवास, जो सागर पोखरा पर स्थित था— बेतिया के एक व्यापारी ने १५०० रुपए कर्ज के एवज में (जो नेपाली के पिता ने जेनरल मर्चेन्ट) से लिया था, नीलाम करा दिया। नेपाली ने एक पत्र पाण्डेय आशुतोष (बगहा के कवि) को चिचाली, मलाड, बम्बई- ४६ से १०.११.१९५८ को लिखा "खबर मिली है कि हमारा सागर पोखरा, उज्जैन टोला, बेतिया वाला मकान नीलाम करा रहे हैं। मतलब यह कि १५०० रुपए के लिए किसी की १०-१२ हजार की सम्पत्ति हड़पी जा रही है। जरूरी खबर मिली है कि इसी १५ नवम्बर के बाद नीलामी होगी। अस्तु! तुम अपने घर वालों से फौरन सलाह करके १५०० रुपए लेकर बेतिया चले जाओ और ...... राम को १५०० रुपए देकर कागज अपने नाम करा लो। एकाध सप्ताह में उधर रुपए लेकर और तुम्हें रुपए देकर वह कागज तुमसे ले लूँगा। इसमें तुम्हारा नुकसान कुछ भी नहीं है। मेरा मकान डाकुओं के हाथ से निकल कर तुम्हारे नाम रहेगा। मैं आकर अपने नाम करा लूँगा। अस्तु! किसी तरह की चिन्ता न करके फौरन बेतिया जाकर उस मकान को बचा कर अपने कब्जे में लेकर मुझे खबर कर दो। मैं शीघ्र फिर वहाँ

आकर ठीक कर लूँगा। जब तक रुपए न मिलें, मकान पर तुम्हारा अधिकार रहेगा। अस्तु! देर न करो। मकान पिताजी के नाम है, जैसा चाहो लिखवा लेना। अभी जल्दी में तुम्हे पत्र लिख रहा हूँ। इस पर तुम फौरन 'एक्शन' लेते, तो तुम्हारा आभार मानता। सुविधा हो तो तुम दिनेश (कवि दिनेश भ्रमण) से भी मिल लो।

तुम्हारा

गोपाल सिंह नेपाली

पत्र देर से मिला; तब तक मकान नीलाम हो चुका था, ऐसा **पाण्डेय आशुतोष** कहते हैं। **नेपाली** परिवार बेघर हो गया। नेपाली को आजीवन इसका मलाल रहा। पश्चिम चम्पारण जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सद्प्रयास से १९७५ में बेतिया के राज देवदी से सागर पोखरा (जहाँ **नेपाली** का वह पैत्रिक निवास था) जाने वाली सड़क का नाम **कविवर नेपाली पथ** हो गया। वह भवन नेपाली परिवार के हाथ न लगा।

भारत पर विदेशी आक्रमण हुआ, चीनी आक्रमण। **नेपाली** का कवि हृदय व्याकुल हो उठा। ''हमें भी देश के लिए कुछ करना चाहिए, यह सोचकर कि राष्ट्र पर संकट है वे उसी क्षण अपनी पुस्तक **'हिमालय ने पुकारा'** लेकर बम्बई से निकल पड़े। गाँव-गाँव, नगर-नगर वे जागरण गीत गाते घूम रहे थे। उनका यह राष्ट्रव्यापी अभियान था। वे स्वयं को **'वन मैन आर्मी'** कहते थे। वे घूम-घूम कर भावनात्मक एकता और राष्ट्रीय सुरक्षा की अलख जगाते। झोंली में **हिमालय ने पुकारा** पुस्तक और स्वर में भारत वन्दना, यही संबल लेकर वे घूमते रहे। १७ अप्रैल, ६३ को एकचारी गाँव से वे भागलपुर नगर लौट रहे थे। एकचारी गाँव में एकल कविता-पाठ कर भागलपुर लौटना था। भागलपुर स्टेशन के प्लेटफार्म नं०-२ साहित्य-प्रेमीजन **नेपाली** के स्वागत में खड़े थे। ट्रेन रुकी तो **नेपाली नहीं, नेपाली का शव लोगों को मिला।** हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ गीतकार की ओजस्वी वाणी सदा के लिए मौन हो गयी। बिहार के तत्कालीन **मुख्यमंत्री विनोदानन्द झा** ने उन्हें शहीद का-सा सम्मान देने का आदेश दिया। **नेपाली**-परिवार को बम्बई में दूरभाष पर सूचित किया गया और भागलपुर आने के लिए कहा गया। पर नेपाली की पत्नी और बेटों के पास भागलपुर आने का पैसा न था। बम्बई में **नेपाली** के चाहने वाले काफी थे, शहर के पास पैसा था, पर हृदय नहीं था। **नेपाली** के गीतों से फिल्मी लोगों ने काफी पैसे कमाये थे। **धर्मयुग** और **चित्रपट** जैसी अनेक पत्र-पत्रिकाओं से मदद की याचना की गयी पर **नेपाली**-परिवार को पैसे नहीं मिले कि उनकी पत्नी और बच्चे अपने पति और पिता की मरण-शैया देख सके। मुखाग्नि देने का रस्म भी अदा न कर सके। अंधे वृद्ध पिता बेतिया में थे, उनका आना असम्भव ही था वे अशक्त और असमर्थ थे। कोई ऐसा हमदम दाता न मिला, जो बम्बई से उनके परिवार को भागलपुर आने में सहायता करता। दीर्घ प्रतीक्षा के बाद तार मिला- पत्नी और बच्चे आने में असमर्थ, मुख्यमंत्री के आदेश से **१८ अप्रैल को नेपाली की अन्तिम यात्रा निकली।** विशाल जन समूह बरारी घाट तक पहुँचा। अब एक विकट समस्या खड़ी हो गयी। मुखाग्नि दे कौन? कोई अपना नहीं। अपना कैसे नहीं, साहित्यिक परिवार तो अपना था। नेपाली को मुखाग्नि पाँच साहित्यकारों ने **दामोदर शास्त्री, आनन्दशास्त्री, रमेशचन्द्र मिश्र 'अंगार', शारदा प्रसाद 'सैदपुरी'; राबिन शॉ पुष्प ने समवेत रूप में दिवंगत**

गीतकार को मुखाग्नि दी। यह भी इतिहास की अभूतपूर्व घटना थी। ५२ वर्ष की अल्पायु में **नेपाली** का निधन हो गया, इससे केवल साहित्य की नहीं, राष्ट्र की भी महान क्षति हुयी। **नेपाली** के गीत राष्ट्र की अमूल्य निधि हैं। आज जब कारगिल पर पाकिस्तान ने हमला किया तो हमें बरबस **नेपाली** की रचना **'हिमालय ने पूकारा'** की याद आ रही है और याद आ रही है उनकी ओजस्वी वाणी और **'वन मैन आर्मी'** के रूप में उनका राष्ट्र-रक्षा का संकल्प। देश को जगाने के लिए **नेपाली** ने अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। दिनकर के शब्दों में

> **"तुमने दिया देश को जीवन**
> **देश तुम्हें क्या देगा,**
> **अपनी आँच तेज करने को**
> **नाम तुम्हारा लेगा"**

क्या हमें आज **नेपाली** का बलिदान याद है?

नेपाली के शब्दों में

> **आज अधीर कपोत बना हूँ**
> **नील गगन में पाँव पसारूँ**
> **दुःख है तुम से बिछड़ गया हूँ**
> **किन्तु तुम्हारी सुधि न बिसारूँ** □

जी-२, पी० सी० कॉलनी
कंकड़बाग, पटना-८०० ०२०

अन्तिम दर्शन ....

• राबिन शॉ पुष्प

हथेली पर जैसे शबनम की बूँद हो, और कोई झटककर गिरा दे, कोरे कागज पर जैसे लकीर हो और कोई मिटा दे, इसी तरह **'नेपाली'** भाई गुजर गए। मन की हथेली से शबनम की बूँद गिर गई, सीधी-सुधरी खिंची लकीर मिट गयी... मन जैसे फुलझड़ी डाल। एकदम खाली जैसे आखिरी दौर के बाद शराबी का जाम। और मैंने पहली बार अनुभव किया कि इस खाली दायरे में भी बहुत कुछ है- बहुत सारे गम। ढेर सारी यादें। **नेपाली** भाई प्यार का मंदिर थे। प्रीत की मस्जिद, स्नेह का गिरिजाघर... और आज हैं, काँच का ताजमहल, इन पारदर्शी शीशों में हम सब कैद हो गए हैं।

रॉयल होटल, दिल्ली से उनका खत आया- मैं २९ मार्च को पटना आ रहा हूँ। ३० को **बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्** में मीटिंग है। ३१ को तुम्हारे यहाँ मुंगेर पहुँच जाऊँगा। मैं इन्तजार करता रहा और बासी रोटी की तरह प्रतीक्षा सूखकर कड़ी हो गई। जी में आया कि इसे मसलकर फेंक दूँ, अब यह निगली नहीं जाएगी। तभी उनका एक तार आया- ५ अप्रैल को ५ बजे शाम को जमालपुर आओ। **राजेश** और **श्रीकान्त** के साथ मैं जमालपुर पहुँचा। गाड़ी से भाई उतरे। इसके पहले कि मैं उनसे मिलूँ, उन्होंने एक पुस्तक के पृष्ठ खोलकर सामने कर दिए, उनकी लिपि में लिखा था- "अनुज-समान प्यारे कथाकार **राबिन शॉ पुष्प** को वर्षों के सहज स्नेह के रूप में .... ।"

"क्यों ठीक है ?"

"**हिमालय ने पुकारा....** बहुत सुन्दर है।"

"तो चलो पार्सल-ऑफिस, किताबें वहीं होंगी।"

फिर किताबों के बण्डल लेकर हम टैक्सी पर आए। मन जैसे कह रहा था कि किताबें इतनी सुन्दर जैसे जादूगर बंगालिन।

मुँह धोने के लिए मैंने पानी रखा। हाथ धोते-धोते एकाएक उन्होंने पूछा- "**रॉबिन!** तुम मुझसे नाराज तो नहीं?"

"नहीं तो।"

"नहीं? लेकिन पिछली बार तुमने कहा था... ?"

मैं सोचने लगा, मगर मेरी यादाश्त किसी बदचलन कुंवारी की तरह जेहन से गैरहाजिर रही।

"बड़े भुलक्कड़ हो यार। अरे, तुमने ही तो कहा था कि अगली बार आपको मेरी सौगन्ध जो कोई नई पुस्तक साथ न लाए... ।"

मैंने सिर हिलाया - "हूँ"।

"और मैंने कहा था कि मेरे संग्रह की पहली प्रति बिहार में बेची जाएगी। वह प्रथम प्रति तुम बेचोगे... लेकिन मुझसे एक पाप हो गया, पटना में मैंने...।"

मैं शर्म से गड़ गया। जो बात मैं भूल चुका था, वह नेपाली जी को अब तक याद थी।

उस वक्त मुंगेर के जिलाधिकारी थे **श्री आई० एन० ठाकुर**। उन्होंने निःशुल्क टाउन-हॉल दिया और अफसरों को हिदायत दी कि **नेपाली** जी के कार्यक्रम की तैयारियाँ शीघ्र की जाएँ। **डी० एम० इन्द्रनाथ ठाकुर** साहित्यिक रुचि के थे भारत-चीन युद्ध की पृष्ठभूमि पर मेरा एक कहानी-संग्रह आया था- **"आँखों की झील"** इसका विमोचन भी उन्होंने ही किया था और उनके माध्यम से इस पुस्तक की २०० प्रतियाँ नेफ़ा युद्ध-क्षेत्र के जवानों को मैंने मुफ्त भिजवाई थीं। उस समय भारत के उप-राष्ट्रपति **डॉक्टर जाकिर हुसैन** थे। उन्होंने मेरी इस पुस्तक के सम्बन्ध में लिखा-... "चीन के विरुद्ध जनमत तैयार करना तो सरल-सी बात है, परन्तु जनमत का प्रचण्ड प्रवाह कुछ ठोस कार्यों में लाना अत्यन्त कठिन कार्य है। मेरे विचार में प्रतिभावान् लेखक ही इस कार्य को कर सकता है। चूँकि आपके पाठकों ने भी आपकी सराहना की है, यह बात आपकी पुस्तक की यशस्विता की द्योतक है।"

"हिमालय ने पुकारा" की कविताएँ जब नेपालीजी के कंठ से फूटीं, तो सारा शहर जैसे उनके साथ हो गया....

हो जाए पराधीन नहीं गंग की धारा,
गंगा के किनारों को शिवालय ने पुकारा
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा,
तलवार उठा लो, तो बदल जाये नजारा...
कहने को सम्राट बड़ा है, और सुखी-धनवान है
सबसे बड़ा वही है जग में, जो होता बलिदान है।

कवि-सम्मेलन के बीच में **भाई नेपाली** ने बच्चों के लिए लिखी कविता- **"चलो बोमडिला"** सुनाई-

चलो भाई बोमडिला, चलो भाई बोमडिला!
चाऊ को बोम खिला, माओ को बोम पिला...
कहने को आदमी हैं, दिल इनके टीन के हैं,
ये कुत्ते खाने वाले, लुटेरे चीन के हैं,
सीधे को लूटते हैं, सच्चे को छीनते हैं,
मुर्गों को दाने डालो, ये आके बीनते हैं।

बच्चे चहकने लगे, जैसे दाने लेकर माँ घोंसले के करीब आ गई हो।

और जब हम लौटे, तो छोटे-से भतीजे **बसन्त** ने कहा- "हम कविता सुनने गए थे। हमने भी कविता बनाई है।"

"सच... तो फिर सुनाओ।"

बसन्त शरमा गया

"अरे बहादुर सुनाओ।"

और उन्होंने तर्ज पकड़ी- "चलो, भाई बोम-डिला, हो गया **नेपाली जी** का आटा गीला...।"

मैंने उसे डाँटा। फिर **नेपाली जी** की तरफ मुड़ा और कहा- "आप इस बच्चे का बुरा न मानिए।"

भाई ने बीच में ही बात छीन ली- "ठीक तो कह रहा है **बसंत**। अभी तो आटा गीला होने के ही दिन आए हैं, फिर रोटी बनेगी और तुम्हारा यह गरीब कवि मस्त होकर खाएगा। जरा बिकने तो दो "**हिमालय ने पुकारा**"। पराठे खाऊँगा...।"

अपने बारे में उन्होंने ढेर सारी बातें बतायीं। मसलन, जन्माष्टमी की रात ११ अगस्त, १९११ को बेतिया में उनका जन्म हुआ था। बचपन के तेरह वर्ष देहरादून में बीते, जहाँ उनके पिता **श्री आर० बी० सिंह फर्स्ट नाइन्थ गोरखा राइफल में नॉन कमीशंड ऑफिसर थे। नेपाली भाई** हिन्दी में एक हस्तलिखित पत्रिका निकाले थे- "**पूर्णिमा**"। टाइप कर एक पत्रिका अंग्रेजी में भी निकाले थे। उनकी पहली कविता "**भारत-गगन के जगमग सितारे**" १९३३ में "**बालक**" (पटना) में छपी थी।

१९३३ में वे लखनऊ चले गए और वहाँ की मासिक "**सुधा**' के सम्पादन विभाग से जुड़ गए। वहीं **निराला जी** के साथ रहने का मौका मिला।

१९३४ में साप्ताहिक "**चित्रपट**" के संयुक्त सम्पादक होकर दिल्ली आ गए। १९३४ में ही रतलाम चले गए और साप्ताहिक "**रतलाम-टाइम्स**" का सम्पादन १९३६ तक करते रहे। फिर पटना आ गए और वहाँ से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक "**योगी**" का १९३७ से १९३९ तक सम्पादन किया। तीन वर्षों तक वे बेतिया राज प्रिंटिंग प्रेस के मैनेजर भी रहे। १९४४ में बम्बई चले गए। १९४५ में "**मजदूर**" फिल्म के गीतों के लिए उन्हें "बंगाल फिल्म जर्नलिस्ट एसोसिएशन" द्वारा **सर्वश्रेष्ठ गीतकार का पुरस्कार** दिया गया। **इस फिल्म की कथा प्रेमचन्द ने लिखी थी** और **संवाद लेखक थे श्री उपेन्द्रनाथ अश्क**। अब तक इनके सात कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

१.	**उमंग**	**(१९३३, नई दिल्ली)**
२.	**पंछी**	**(१९३४, लखनऊ)**
३.	**रागिनी**	**(१९३५, पटना)**
४.	**पंचमी**	**(१९४२, बेतिया)**
५.	**नवीन**	**(१९४४, पटना)**
६.	**नीलिमा**	**(१९४४, मुजफ्फरपुर)**
७.	**हिमालय ने पुकारा**	**(१९६३, बम्बई)**

रतलाम (मालवा) में रहते समय "**रागिनी**" की कविताएँ लिखी थीं। जब योगी प्रेस पटना में थे, तब "**नीलिमा**" की कविताएँ लिखीं। "**नवीन**" और "**पंचमी**" की कविताएँ बेतिया (चम्पारण, बिहार) में लिखी गईं। "**पंचमी**" की भूमिका **सूर्यकांत त्रिपाठी निराला** ने और "**उमंग**" की भूमिका **सुमित्रानन्दन पंत** ने लिखी थी।

भोजन के पूर्व पेन भैया ने कहा- "नेपाली जी! मेरा नया मकान देख लीजिए। पास में ही बनवा रहा हूँ।" (अब पेन भैया नहीं हैं।)

नेपाली जी तुरंत उठे। कमरे से 'हिमालय ने पुकारा' की एक प्रति निकाली और अंग्रेजी में कुछ पंक्तियाँ लिख कर उसे दे दी। पेन भैया ने पढ़ा-

To

Shree N. P. Shaw
with love & respect

Gopal Singh Nepali
6.4.63

पेन भैया (वेलेन्टाइन पेन शॉ) हेडमास्टर था और अंग्रेजी का एक काबिल शिक्षक। उसने चौंक कर पूछा- "आप हिन्दी के कवि होकर इतनी अच्छी अंग्रेजी लिखते हैं।"

नेपाली जी ने एक जोरदार ठहाका लगाया और कहा- "भाई साहब! मैं अंग्रेजी में भी कविताएँ लिखता हूँ। सस्वर उन्होंने ये पंक्तियाँ सुनाईं-

Oh, What a World! here Money flies and Man dies!
Between two persons, Silver Coins are the only Ties!
A well-dressed man with well-pressed lies is accepted as wise!
Present-day LIFE means : "Non-stop fighting against Liars and Lies!

जब हम खाने पर बैठे, तब माँ ने बात अपने हिस्से ले ली- "बेटे! इस बार आकर तुमने अच्छा किया, शायद अगली बार..."

नेपाली भाई हँस पड़े-" माँ! अगली बार मैं आऊँगा ही नहीं...

रात को सोया हुआ था। मेरी ८० वर्षीया माताजी पानी पीने उठीं। भाई नेपाली उठकर पानी ले आए। मेरी नींद टूटी और मैंने कहा- "यह आप क्या कर रहे हैं?"

"माँ को पानी पिला रहा हूँ।"

"मुझे उठा लिया होता।"

नेपाली भाई बिगड़ गए- "सुनो! तुम्हें क्या!" क्या ये मेरी माँ नहीं हैं?" और मैं सोचने लगा, लोग माँ-बाप के धन का हिस्सा करते हैं, लेकिन माँ या बूढ़े बाप को कोई अपने हिस्से लेना पसन्द नहीं करता। लेकिन मेरे भाई तो... जरूर मेरी माँ ने कोई पुण्य किया होगा जो ऐसा बेटा मिला।

'मोहन एण्ड को' में कवि-सम्मेलन। बेकापुर के सारे रास्ते जाम।

आनन्द कुमार 'आशु' के यहाँ से खाना खाकर लौटे, तो उन्होंने कहा- "चलो! कष्टहरणी घाट चलते हैं।"

रिक्शा उधर मुड़ गया था।

हम घंटों वहाँ बैठे रहे। जब भी नेपाली भाई मुंगेर आते, हम यहाँ आते थे... उस दिन उन्होंने कहा था- "राबिन! जाने क्यों यह जगह मुझे बहुत प्यारी लगती है... खासकर, गंगा । यह

किनारा... जी करता है, वहीं बस जाऊँ!- फिर उन्होंने बात पलट दी थी-" अगर यहाँ रेस्टोरेण्ट खोल दिया जाए, तो यह बम्बई के मैरिन ड्राइव से बढ़ जाएगा... क्या खूबसूरत जगह है।"

लौटते वक्त उन्होंने सिगरेट का पैकेट रिक्शावाले को देकर कहा था- "बीड़ी पिलाओ यार!"

रिक्शावाला भौंचक रह गया था। मगर मेरे लिए यह नयी बात नहीं थी... वे बीड़ी पिया करते थे और कुलंजन खाते थे। उनके आते ही, बीड़ी और कुलंजन का प्रबन्ध मुझे करना होता था। कहते थे- "सिगरेट से गला खराब होता है। बीड़ी नुकसान नहीं करती है। कुलंजन चिबाते रहने से आवाज साफ और मधुर होती है। फिर बीड़ी तो प्यूर स्वदेशी है।"

हम घर लौट आए।

लोग प्रतीक्षा कर रहे थे। किसी ने कहा था- "**नेपालीजी!** पेकिंग रेडियो आपको गाली दे रहा है।"

वे खुशी से उछल पड़े- "अपनी सरकार मुझे पद्मश्री या पद्मभूषण नहीं देती है तो क्या हुआ शत्रु का यह तोहफा तो सरकारी तोहफों से बढ़कर है। मैं **वन मैन आर्मी** हूँ। यह लड़ाई जीत कर रहूँगा। मैं तो नगर-नगर, गाँव-गाँव चिनगारी भर रहा हूँ। सिपाही का बेटा हूँ, मर जाऊँगा, मगर पीछे नहीं हटूँगा।"

जब सब चले गए, तो मैंने पूछा था- "सचमुच आपको डर नहीं लगता?"

मैं सिपाही का बेटा हूँ। बाप के हाथ में बन्दूक थी, मेरे हाथ में कलम है। दुश्मनों से क्या डरना। मैं तो **गान्धीजी** से भी भिड़ गया था। १९३५ में मैं मालवा के प्रतिनिधित्व-मण्डल का प्रमुख होकर गया था इन्दौर। वहाँ "अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन" का अधिवेशन था। **गान्धीजी** अध्यक्ष थे, मगर चुपचाप चर्खा चला रहे थे। स्थायी सदस्यों का चुनाव होना था। **गान्धीजी** की सादगी का लाभ उठाकर, कानपुर के प्रिंसिपल **हीरालाल खन्ना** ने कार्य-संचालन शुरू कर दिया। देखते-ही-देखते, उनके चार-पाँच आदमी चुन लिए गए। मुझे गुस्सा आ गया। मैंने **गान्धीजी** से कहा- "मैं एक सवाल पूछ सकता हूँ?"... **गान्धीजी** हँसकर बोले- "एक नहीं, सौ सवाल पूछो!"... मैंने तुरंत कहा- "मेरे लिए एक सवाल का उत्तर ही काफी होगा. .. आज की सभा के अध्यक्ष आप हैं या **हीरालाल खन्ना?**"... चर्खा चलाते-चलाते, **गान्धीजी** रुक गए। अपनी लाठी उठाई और **हीरालाल खन्ना** को मंच से नीचे उतार दिया। उस वर्ष, मुझे सर्वाधिक मत मिले। लेकिन यह घटना मैं भूल नहीं पाया। जून १९५६ में एक कविता लिखी-

ओ राही! दिल्ली जाना तो, कहना अपनी सरकार से-
चर्खा चलता है हाथों से, शासन चलता तलवार से।

सुबह **सैदपुरी जी** आए और भागलपुर ले गए। कहलगांव में कवि-सम्मेलन हुआ। वहाँ भी अपार जनता उमड़ पड़ी। फिर ताड़र के कवि-सम्मेलन में **शिवचन्द्र प्रताप जी, श्रीकान्त, कामेश** और **पाठक** के साथ मैं गया। भागलपुर में **नेपाली जी** मिल गए। **घोघा स्टेशन** पर उतरकर एक काठगोदाम में हमने चाय पी। फिर तांगे पर चढ़े ही थे कि पीछे से जन-सम्पर्क

विभाग के अधिकारी **श्री आनन्द शास्त्री** आ गए अपनी गाड़ी में। हम उतरकर उनकी गाड़ी में सवार हो गए।

कवि-सम्मेलन के बाद भोजन। और भाई ने एक-एक से खाने की तारीफ करवा दी। एक कौर खाते और पूछते-"क्यों **दामोदर शास्त्री**, भोजन ठीक है न?"

"जी हाँ।"

और इसी तरह सभी "जी हाँ" करते गए।

बहुत सारे कवि थे- **रमेश, रूद्र, लालधुआँ, कामेश, चौधरी, रामचन्द्र भारद्वाज** आदि। हम मंच पर ही लेट गए।

राघवेन्द्र एम० ए०, उनका पैर दबाता रहा। **नेपाली** भाई ने करवट ली, पैंट की जेब पर हाथ रखा।

"रुपए हैं?"

"हूँ।"

"तो पलट कर सो जाइए, रुपए वाली जेब नीचे दब जाएगी।" मैंने कहा।

"अरे नहीं! यह तो जनता के रुपए हैं, कोई नहीं लेगा।" फिर सुबह १४ को ईस्टर। उठते ही उन्होंने मुझे मुबारकबाद दी। मैं चलने लगा- "आज घर पहुँचना जरूरी है।..."

"तो आप १५ को मुंगेर आ रहे हैं?"

"अरे नहीं! देवघर तय हो गया है।"

मैं मुंगेर वापस आ गया था।

पोस्ट ऑफिस के मेरे साहित्यिक मित्र **राधेश्याम केशरी** आए- "आप देवघर नहीं आए। **राहुलजी** को **नेपाली जी** ने श्रद्धांजलि अर्पित की थी... इतना सुन्दर मैंने पहली बार उनके मुँह से सुना... फिर **"कोई आज मरे, कोई कल मरे"** जैसी कविता... वहाँ से एकचारी जाएँगे।"

"एकचारी?"

"कहलगांव की तरफ है... भागलपुर लाइन।"

"इसका अर्थ हुआ १६ को भी नहीं आएँगे।"

१७ अप्रैल की सुबह मैं बीड़ी और कुलंरजन खरीद कर ले आया। मुझे नेपाली भाई का इन्तजार था... लेकिन आए **श्रीकांत झा**।

"**पुष्पजी**, आपके लिए ट्रंककाल आया था।"

"कहाँ से?"

"भागलपुर से...।"

"**नेपाली जी** ने बुलाया होगा..."

"हाँ, बुलाया ही है... हम सब चल रहे हैं... आप तैयार हो जाइए.. शायद एक-आध दिन रुकना पड़े..."

"बात क्या है?"

"हमें उन्हें अन्तिम बिदाई देनी है... अब वे नहीं रहे...।"- कहते-कहते **श्रीकांत झा** का गला भर आया था।

उस क्षण मुझे लगा था, कोई गुलदस्ता हाथों से छूटकर गिर गया है... फूल बिखर गए हैं. .. पत्तियाँ हवा में उड़ रही हैं-

जनम-जनम मैंने भी ओढ़ी,
तेरी श्याम चदरिया रे,
लेकर उड़ी विदेश चदरिया,
छूटी दूर नगरिया रे...

और मेरी हिम्मत नहीं पड़ी कि माँ से कहूँ- माँ, **नेपाली भाई...!** क्या मेरी ८० वर्षीया माँ इस आघात को सह सकेंगी? मुझसे कहा नहीं गया और फिर मैंने प्रिंसिपल **कपिल जी** को फोन किया। **डी० एम० साहब** को भी। लोकल पकड़ कर मेरे साथ **कामेश करूण, राजेन्द्र कुमार राजेश** तथा **श्रीकान्त झा** भागलपुर आए। मेरे जेह्न में **बसन्त** उभर आया- "**नेपाली जी** का हो गया आटा गीला..."

"ठीक तो कहता है **बसन्त,** अभी आटा गीला होने के ही दिन आए हैं। जरा बिकने तो दो "**हिमालय ने पुकारा**"। रोटी क्या, पराठे खाऊँगा...।" और मैं सोचता हूँ, सुख भोगने के दिन आए तो...।

कभी उन्होंने खुद लिखा था-
जीवन है तो आस लगी है
मिलना कुछ न, तलाश लगी है
भूख लगी है, प्यास लगी है
पेट भरे तो साँस लगी है
तड़प-तड़प कर मर जाओ तो, रोए गाँव नगरिया रे
जनम-जनम मैंने भी ओढ़ी, तेरी श्याम चदरिया रे!

मारवाड़ी पाठशाला में बर्फ की सिल्लिओं के ऊपर तिरंगे में लिपटा शव। जैसे किसी विधवा के माथे पर जलता हुआ पति का चुम्बन। मंदिर में जलता एक चिराग।

भागलपुर के डी० एम० **श्री बी० एन० बसु** ने हिन्दुस्तान की गिरती हुई इज्जत को अपनी हथेली पर ले लिया। रात-दिन गीता, रामायण, कुरान और बाइबिल पढ़ी जाती रहीं और मुझे मालूम हुआ, भाई **नेपाली** त्रिमोहन के **श्री हरेन्द्र कुमार सिंह** के यहाँ कविता-पाठ करने आएँ **"एकचारी हाल्ट" करीब एक फर्लांग पर त्रिमोहन वहीं उनकी अंतिम और आखिरी आवाज गूंजी। धन्य है त्रिमोहन।**

लौटे तो वहीं "एकचारी हाल्ट" की एक दूकान की बेंच निकाल कर बैठ रहे। एक सज्जन ने '**रेशमी रूमाल**" की फरमाइश की। वहीं सुनाने लगे। और एकाएक बोले- "क्या चाय-पानी कुछ नहीं चलेगा?"

कफिर रसगुल्ले आए, सभी के लिए।

''किसकी तरफ से?''

हरेन्द्र के भाई जो मुखिया हैं, बोले- ''पंचायत की ओर से। ओह! मैं समझा कि दुकानदार को ही धक्का लग गया।'' फिर हँसे- ''यहाँ कुछ खाना जरूरी था, यह दुकानदार भी क्या कहता होगा कि हम हैं, कुछ लेते ही नहीं सिर्फ जगह छेंक कर बैठे हैं।''

फिर घोघा स्टेशन पर गाड़ी पहुँची तो रुकी रही। मालूम हुआ कि आगे लाइन खराब होने की वजह से एक्सप्रेस को रुकना पड़ा। नेपाली जी उतर कर एक तरबूज ले आए। वहीं बैठे। किसी से छुरी लेकर काटा और एक-एक को बाँटने लगे। तभी कुछ विद्यार्थी भी आ गए। बस उन्हें भी थमा दिया- ''लो, यह तुमलोगों का हिस्सा।''

फिर ठिकुरी बजाकर गाने वाला एक छोटा बच्चा आया। उसने एक गीत गाया। नेपाली भाई बोले- ''वह गाओ, तेरी प्यारी-प्यारी सूरत को...।'' तभी दूसरा लड़का भी आ गया। दोनों मिलकर गाने लगे। भाई ने एक रुपए का नोट थमा दिया। जिन्हें नए पैसे मिलते थे, रुपए मिले ही उन्हें तो पंख लग गए।''

फिर भागलपुर स्टेशन, प्लेटफार्म नं० २। वही लड़का शिकायत लेकर आया- बाबू यह मुझे अठन्नी नहीं देता।''

''नहीं देता है? बुलाकर लाओ उसे।''

लड़का भाग गया। वह ठहरे रहे। आनन्द शास्त्री जी ने कहा- ''चलिए भी! यह बच्चों का झगड़ा है।''

''अरे नहीं! ये बच्चे ही तो राष्ट्र-निर्माता हैं। अगर अभी से बाँटकर नहीं खाएँगे तो आगे...।'' वह प्रतीक्षा करते रहे। शास्त्री जी ने कहा - ''देखा।''

शास्त्री जी ने जब दुबारा आग्रह किया तो आगे बढ़े।

तभी किसी ने आकर कहा- मैं बच गया नेपाली जी! बीच में किसी ने लाइन तोड़ डाली थी शायद... एक्सप्रेस में था।''

नेपाली जी मुस्कुराए- ''देखो, दुश्मनों ने मुझे मारने का शायद प्रोग्राम बनाया था...। ''इतना कहकर दो कदम आगे बढ़े, और गिर गए। सैदपुरी रेलवे के डॉक्टर को लाने दौड़े। तभी गार्ड आ गए। नाड़ी देखकर बोले- ''ई तो डूब रहा है... ही इज सिंकिंग...।'' फिर कुछ ट्यूब्स लाकर सुँघाने लगे। शास्त्रीजी अब डॉक्टर के लिये भागे। इसी बीच शारदानन्द सैदपुरी डॉक्टर लेकर आ गए...

आस में साँस दिन-रात चलती रही
देह-बाती लगातार जलती रही,
जिन्दगी महफिलों में मचलती रही
मौत लेकर चली, जन्म हारे चले...
सामने शव है।

अंतिम दर्शन करते हुए **आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी** रो पड़े- "अत्यन्त लोकप्रिय और सहृदय कवि... स्वाभिमानी और तेजस्वी साहित्यकार... शोक है... इतना शीघ्र चले गए...।"

इस **'वन मैन आर्मी'** के सम्बन्ध में आकाशवाणी के माध्यम से श्रद्धाँजलि अर्पित करते हुए **दिनकर** जी ने कहा था" नेफा और लद्दाख का एक सैनिक शहीद हो गया।"

और शव-यात्रा।... अन्तिम यात्रा...

कमिश्नर अब्राहम साहब और डी० एम० **बसु साहब** ने फूल-मालाएँ चढ़ाईं। प्रथम ट्रक पर रामधुन पार्टी, फिर दूसरे ट्रक पर शव के साथ **मैं, आनन्द शास्त्री, श्रीकान्त झा, प्रो० नन्द किशोर, विकल, अंगार, डॉ० बेचन, प्रो० मिलिन्द** आदि। एक सज्जन जिनका नाम याद नहीं पड़ रहा है... ग्लूकोस चढ़ती बच्ची को छोड़कर शव के साथ थे।

ट्रक.. ट्रक और ट्रक। गाड़ियों में और पैदल चलती लगभग बीस हजार जनता की आवाजें "लोकप्रिय कवि नेपाली जिन्दाबाद...।" बच्चों से भरे ट्रक से भी नारा उठता- "बच्चों के प्यारे कवि नेपाली, जिन्दाबाद।" छज्जे, कोठे से, सड़कों से.... लोग फूल फेंक रहे थे। नारे लगा रहे थे। भागलपुर की सभी दुकानें बन्द। और सेण्ट्रल जेल के पास एक औरत दर्शन को तड़पने लगी। जहाँ पहिया होता है न, वहीं पाँव रखकर चढ़ने लगी, धीमी चलती ट्रक पर ही... फिर गाड़ी रुकी और एक बाँह मैंने थामी, एक मेरे मित्र ने ... तो किसी प्रकार उचक उसने चेहरा देखा और रो पड़ी।

लगभग चार घंटों तक शव पूरे शहर में घूमता रहा। और **बसु साहब** जीप चलाकर लगातार साथ रहे। फिर आगे बढ़कर उन्होंने चिता सजवाई... और अन्त में हम पांच व्यक्तियों (**राबिन शॉ पुष्प, आनन्द शास्त्री, रमेश अंगार, दामोदर शास्त्री** तथा **शारदानन्द सैदपुरी**) ने मुखाग्नि दी। इस तरह **स्वाधीन कलम का धनी, गीतों का राजा, जिसे जीते जी कोई ताज नहीं मिला, बेताज ही अपनी गाथा छोड़ गया,** महज इसलिए, कि उसने हरदम सच्चाई का पक्ष लिया था, मरते दम भी-

तुझ-सा लहरों में बह लेता
तो मैं भी सत्ता गह लेता,
ईमान बेचता चलता तो-
मैं भी महलों में रह लेता,
तू दलबन्दी पर मरे, यहाँ लिखने में तल्लीन कलम
मेरा धन है स्वाधीन कलम।

□

'रवीन्द्रांगन'
२ एल/४५ बहादुरपुर हाउसिंग कॉलोनी
पो० लोहियानगर, पटना - ८०० ०२०

मन दुबारा तिबारा पुकारा करे

• डॉ० सुरेन्द्र प्रसाद साह

जिस आदमी को भीषण गरीबी न तोड़ सकी, जिसके हृदय में ऊर्जा की शतशः धाराएँ बहती थीं, जो तन और मन-दोनों से स्वस्थ थे और भागलपुर जिले के विभिन्न गाँवों-नगरों में घूम-घूमकर काव्य-पाठ के द्वारा लोगों के अन्दर राष्ट्र-प्रेम और उत्सर्ग-भाव को ऊर्ज्वसित कर रहे थे, ऐसे साहसी, निर्भीक एवं जुझारू कवि की मौत अचानक एक रेलगाड़ी के डिब्बे में यात्रा करते समय हो जाए और भागलपुर के साहित्य-प्रेमियों को यह खबर बिजली के एक जोरदार झटके के समान मिले कि **गोपाल सिंह नेपाली** का शव भागलपुर रेलवे स्टेशन के प्लेट फार्म नं० २ पर पड़ा है, तो पहली स्वाभाविक प्रतिक्रिया यही हुई होगी हाय! आज देश का एक निर्भीक जनकवि और राष्ट्रप्रेमी बेवक्त चला गया। **१७ अप्रील, १९६३ को ११ बजे दिन में नेपाली जी हृदय- गति रुक जाने के कारण चले गए,** अचानक, बिना किसी स्पष्ट शारीरिक व्याधि के, बिना किसी को उपचार का कोई अवसर दिए। भागलपुरवासियों के लिए उनका बार-बार का आगमन तथा सुमधुर काव्य-पाठ जितने हर्ष और गौरव की बात थी, उससे अधिक सालने वाली दुःखदायी घटना है। उनका यों अचानक का महाप्रयाण। इसलिए, भागलपुरवासी और विशेष रूप से इस क्षेत्र के साहित्यकार नेपालीजी को अश्रुपूरित नयन से बार-बार स्मरण करते रहने के लिए अभिशप्त हैं क्योंकि यहाँ के कुछ साहित्यकारों को ही उन्हें मुखाग्नि देकर अन्तिम क्रिया भी करनी पड़ी थी।

वैसे, **नेपाली जी** का लगभग अधिकांश जीवन भयंकर आर्थिक कष्ट में बीता। लेकिन उन्होंने कभी दरिद्रता के समक्ष घुटने नहीं टेके। उन्होंने स्वयं **'रागिनी'** की भूमिका में लिखा है- ''गरीबी बड़ी प्यारी चीज है, वह बचपन या बुढ़ापे में नहीं भरी जवानी में, बचपन में यह संगिनी मिली तो बालहठ कुंठित हो जाता है। बुढ़ापे में आयी तो सर्द आहें जारी होती हैं। यह यही युवावस्था में मिल गई तो मजबूत सीने की कड़ी परीक्षा होती है। हम तो इसी राह के मुसाफिर हैं।'' निश्चय ही, नेपालीजी ने अपने मजबूत सीने पर गरीबी की मार हँसकर झेली है और जिस समय भागलपुर रेलवे स्टेशन पर उनका अचानक देहावसान हुआ, उनकी पत्नी और बच्चों के पास इतने पैसे भी नहीं थे कि वे उनकी अन्त्येष्टि क्रिया में सम्मलित होने बम्बई से यहाँ आ पाते। इस सम्बन्ध में **डॉ० बेचन** ने लिखा है- ''हमें उस समय तक यह ज्ञात नहीं था कि नेपालीजी भयंकर आर्थिक कष्ट से गुजर रहे हैं, उनको मकान का कई महीनों का किराया देना बाकी है। वे देश के लिए, राष्ट्र के लिए लड़ रहे हैं और उनके निधन पर आर्थिक अभाव के कारण परिवार का कोई सदस्य उनकी अन्त्येष्टि क्रिया में सम्मिलित होने भागलपुर आने में समर्थ न होगा।'' शायद, इसी गरीबी से निजात पाने के लिये उन्होंने फिल्मी दुनिया को अंगीकार किया था। लेकिन उससे भी बात कुछ बनी नहीं, जो कुछ वहाँ रहकर कमाया, फिर उसी में लुटा भी दिया और हाथ रह गया शून्य। इसलिए, लम्बे समय तक फिल्मी-जगत् की सेवा के बाद उन्हें

उसका बहुत ही कटु अनुभव हुआ। अपने इस तल्ख अनुभव को उन्होंने **विमल राजस्थानी** को लिखे एक पत्र में अभिव्यक्त किया है-"पर यह सिनेमा वर्ल्ड साहित्य, कला या दर्शन की जगह नहीं, बिजनेस का अखाड़ा है। यहाँ रुपया और रमणियाँ हैं, इस कारण बड़े-बड़े लोग और चण्ट यहाँ छावनी डाले बैठे हैं, यहाँ सब कुछ है। दौलत और दिमागी दिवाला, पाप और पुण्य, प्रकाश और छाया, सौन्दर्य के इस आँगन में सबकुछ है, पर शस्य श्यामला चम्पारण की भूमि जैसा आनन्द कहाँ ?" इस तरह, फिल्मी-जगत् ने न उन्हें आर्थिक समृद्धि दी और न मानसिक सन्तोष ही, अन्यथा न तो अन्त समय में उनके परिवार की यह कारुणिक आर्थिक दशा रहती और न वे फिल्मी दुनिया छोड़कर पुनः साहित्य की दुनिया में लौट आते। उनकी आर्थिक दुरवस्था का एक कारण शायद यह भी रहा है कि वे कभी न अपने आदर्श को छोड़ पाए और न नैतिकता के मापदण्ड को।

नेपालीजी चले गए, देश के लिए लड़ने वाला एक निर्भीक सिपाही, भले ही व कलम का सिपाही ही हो, चला गया। जाने के बाद वे हमें आज सर्वाधिक किस बात के लिए याद आते हैं? क्या इसलिए कि वे छायावादोत्तर काल के एक सशक्त रूमानी कवि थे? क्या इसलिए कि उन्होंने सिनेमा-जगत् को लगभग चार-सौ अमर गीत और तीन फिल्में दीं ? क्या इसलिए कि उनका सम्पूर्ण जीवन ही संघर्ष का पर्याय था ? क्या इसलिए कि उन्होंने हिन्दी-गीत को एक नई गति और ऊर्जा प्रदान की ? क्या इसलिए कि उन्होंने राष्ट्र-प्रेम और देशहित की भावना से प्रेरित होकर न केवल कलम से आग उगलनी शुरू की थी, वरन् स्वयं कमर कसकर बिगुल फूँकने निकल पड़े थे ? क्या इसलिए कि प्रकृति को अपनी साँसों में बसाकर उन्होंने विभिन्न कविता-पुष्पों से उसका नयनाभिराम शृंगार किया था ? निश्चय ही, वे इन सभी बातों के लिए याद किए जाते है। पर मेरी दृष्टि में वे सर्वाधिक अपने अन्दर के अन्तर्विरोधों के कारण याद किए जाते हैं, ये अन्तर्विरोध बहुत ही स्पष्ट हैं, जैसे भयंकर दारिद्रय में भी ईमानदार और कर्त्तव्यनिष्ठ बने रहना उनका चारित्रिक विरोधाभास है, तो कोमल शृंगारिक रचनाओं के साथ-साथ उत्तेजक वीर रस की रचनाएँ लिखना उनका काव्यगत विरोधाभास है, जैसे फूलों के बाग के बीच कहीं ज्वालामुखी का विस्फोट हो गया हो।

नेपालीजी ने सुकुमार भाव वाले अनेक गीत लिखे, जिनमें शृंगारिकता है, भक्ति है तथा स्नेह-सौहार्द्र है। उन गीतों की लोकप्रियता भी कम नहीं है। लेकिन मैं समझता हूँ कि उनकी सच्ची लोकप्रियता का आधार वे कविताएँ हैं, जिनमें उनका उत्कृष्ट राष्ट्र-प्रेम अभिव्यक्त हुआ है, उन्होंने एकबार राष्ट्रकवि दिनकर को लिखा था- "I am a one man Army of India." उनके पिता दुश्मनों के विरुद्ध सदा बन्दूक लेकर लड़ते रहे और नेपालीजी ने उसी लड़ाई के लिये शायद बन्दूक से भी ज्यादा शक्तिशाली अस्त्र कलम उठा ली। उन्हें इस बात का गौरव भी था कि चीनी आक्रमण के बाद उन्होंने कलम की जो लड़ाई प्रारंभ की, जनता-जनार्दन को जगाने का जो काम किया उसके लिए चीनी सरकार और उसका प्रचार तंत्र उनके प्रति अपशब्दों का प्रयोग करता है। उन्होंने स्वयं लिखा है- "मैं जानता हूँ कि मुझको कोई पद्मश्री या पद्मभूषण

की उपाधि नहीं प्रदान करेगा। किन्तु जब प्रत्येक दिन पेकिंग रेडियो मेरा नाम लेकर मुझको गालियाँ देता है, तो मुझको लगता है कि शायद मुझको उन उपाधियों से कहीं अधिक मिल रहा है,'' उस समय वे एकदम बौखला गये थे- एक सच्चे राष्ट्रभक्त की तरह और घर-बार, बाल-बच्चे सबको भुलाकर अलख जगाने निकल पड़े थे-''जबसे देश पर आक्रमण हुआ है, तबसे मैं गाँव-गाँव, शहर-शहर घूम-घूमकर जनता को जगा रहा हूँ, मेरे हाथ में बन्दूक न सही, कलम तो है, **'हिमालय ने पुकारा''** और मैं कलम का सिपाही बन गया।''

वे मानते थे, कलम में अनन्त शक्ति है और इसलिए कलम के प्रयोक्ता कवि में भी अपार शक्ति है। **दिनकर** की तरह वे भी कवि और मनुष्य की महान् शक्ति के गायक थे। वे अपनी इस शक्ति के गायक थे। वे अपनी इस शक्ति का प्रयोग दासता, उत्पीड़न और शोषण के विरुद्ध करना चाहते थे-

हम धरती क्या, आकाश बदलने वाले हैं
हम तो कवि हैं, इतिहास बदलने वाले हैं

हर क्रान्ति कलम से शुरू हुई, सम्पूर्ण हुई
चट्टान जुल्म की, कलम चली तो पूर्ण हुई
हम कलम चलाकर त्रास बदलने वाले हैं
हम तो कवि हैं, इतिहास बदलनेवाले हैं

पन्द्रह अगस्त के दिन से जिसकी नींव पड़ी
उस प्रजातंत्र की रखवारी में कलम खड़ी
ना मानो तो विश्वास बदलने वाले हैं
हम तो कवि हैं, इतिहास बदलने वाले हैं।

कवि को न तो धन-दौलत की प्यास है और न सिद्धि-प्रसिद्धि की, बस उनकी कलम की स्वाधीनता बरकरार रहनी चाहिए। वह कवि होना और कविता लिखना- दोनों को गर्व की बात मानते हैं। वे इसी से सन्तुष्ट हैं कि विधाता ने उन्हें लिखने की क्षमता दी है और हाथ में कलम दी है। वे इसी को अपना धन-वैभव मानते हैं-

मेरा धन है स्वाधीन कलम
राजा बैठे सिंहासन पर, यह ताजों पर आसीन कलम
जिसने तलवार शिवा को दी
रोशनी उधार दिवा को दी
पतवार थमा दी लहरों को
खंजर की धार हवा को दी
जग-जग के उसी विधाता ने, कर दी मेरे अधीन कलम
मेरा धन है स्वाधीन कलम।

वे इस कलम की शक्ति को बखूबी पहचानते थे और जब-जब देश पर आक्रमण हुआ या आन्तरिक संकट आया, तब-तब उन्होंने इसका भरपूर प्रयोग किया जब चीनियों ने भारत पर आक्रमण किया था तो उन्होंने एक बहुत ही ओजपूर्ण कविता लिखी थी- **'चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा' 'हिमालय ने पुकारा'** शीर्षक कविता के माध्यम से वे लोगों को सशस्त्र युद्ध के लिए उत्प्रेरित करते थे। उनकी इस ओजपूर्ण कविता को आम जनता तक पहुँचाने के लिए मीडिया के प्रयोग की सुविधा नहीं दी गई थी, जिससे वे बहुत व्यथित हुए थे। इसी व्यथा में उन्होंने कहा था- ''ये वे कविताएँ हैं, जिन्हें हिन्दुस्तान के रेडियो स्टेशन पढ़ने नहीं देते और न बड़े अखबार ही उन्हें छापते हैं। **अहिंसा के नाम पर राष्ट्र को नपुंसक बना दिया गया है।**'' इसी कविता में वे जनता के बीच जाकर दहाड़ते थे-

''जो शिव का पुजारी है शिवालय है उसी का
जो हिंद में जनमा है हिमालय है उसी का
'लद्दाख' उसी का है रे ! 'नेफा' उसी का
भारत में लिया जन्म तो लद्दाख बचा लो
इन चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो।''

एक दूसरी कविता **'नौजवान जागो रे'** में भी उन्होंने इसी प्रकार ओजपूर्ण भावों को अभिव्यक्ति दी है-

युद्ध में पछाड़ दो दुष्ट लाल चीन को
मारकर खदेड़ दो तोप से कमीन को
मुक्त करो साथियों हिन्द की जमीन को
देश के समुद्र में बूँद-बूँद डाल दो
नौजवान जागो रे !''

इसी प्रकार की देश-प्रेमयुक्त कविताएँ नेपालीजी ने तभी से लिखनी प्रारंभ कर दी थी, जब भारत अंग्रेजों का गुलाम था। उनकी **'भाई-बहन'** कविता उनके इसी देशप्रेम एवं उत्सर्ग से युक्त एक अद्भुत कविता है।

इस बात का दुःख बहुत-सारे सच्चे देश-भक्तों की तरह कवि को भी था कि स्वतंत्रता के बाद देश को वह सुख-समृद्धि नहीं मिल पायी, जिसकी कामना हर देशवासी को थी। देश में अब भी दुःख और दारिद्रय है, असमानता और शोषण है, बहुत सारे लोगों को अब भी दोनों शाम की रोटी नसीब नहीं होती। ऐसे में, वे उनके हिमायती और प्रबल हितचिन्तक बनकर आए थे जो पीड़ित और उपेक्षित थे-

'दिन गए बरस गए यातना गयी नहीं
रोटियाँ गरीब की प्रार्थना बनी रहीं।'

इसलिए, वे देश के नेताओं को भी सही राह अपनाने की सीख देने से बाज नहीं आए-

''कर्णधार तू बना तो हाथ में लगाम ले
क्रान्ति को सफल बना, नसीब का न नाम ले,

भेद सर उठा रहा, मनुष्य को मिटा रहा
मिट रहा समाज, आज बाजुओं में थाम ले
त्याग का न दाम ले
दे बदल नसीब तो गरीब का सलाम ले।''

इस क्रान्तिदूत कवि को गान्धीजी अहिंसा की नीति प्रिय नहीं थी, क्योंकि यह मनुष्य को नपुंसक बनाती है। वे भक्ति, प्रार्थना, सहिष्णुता, सत्याग्रह आदि को भी व्यर्थ मानते थे। क्योंकि गिड़गिड़ाने से अधिकार नहीं मिलता। उनकी दृष्टि में हक छीन लेने की चीज होती है-

''निर्धनता है एक प्रश्न, भिक्षाटन उसका हल नहीं
है दरिद्रता घोर पाप तो, भिक्षा गंगाजल नहीं
इसकी दवा न सूत कातना
इसकी दवा न भक्ति-प्रार्थना
इसकी दवा न दान-दक्षिणा
दवा चाहिए इसकी तो कर, साहस-शक्ति-जन से माँग
मुसाफिरों से क्या माँगे, धरती से माँग, गगन से माँग।''

नेपालीजी विचार से साम्यवादी थे और साम्यवाद कभी सशस्त्र क्रान्ति से परहेज नहीं करता इसलिए वह प्रारंभ से ही गान्धीवाद के विरोधी रहे और सुभाष जी के विचारों के निकट रहे।

लेकिन, जो कवि देश की आजादी के लिए देश की सुरक्षा और समृद्धि के लिए तथा देश की आम गरीब-दुःखी जनता के लिए सदा अग्निशलाका बरसाते रहे, वही अद्‌भुत भावूपर्ण कोमल मधुर गीतों की रचना भी करते रहे। पिता को छोड़ पति के देश में सदा के लिए बस जाने वाली एक उदास भावुक पुत्री कहती है-

बाबुल तुम बगिया के तरुवर, हम तरुवर की चिड़ियाँ रे
दाना चुगते उड़ जाएँ हम, पिया मिलन की घड़ियाँ रे
उड़ जाएँ तो लौट न आएँ, ज्यों मोती की लड़ियाँ रे
बाबुल तुम बगिया के तरुवर ......
मन रोया गूँजी शहनाई
नयन बहे, चुनरी पहनाई
पहनाई चुनरी सुहाग की या डाली हथकड़ियाँ रे
उड़ जाएँ तो लौट न आएँ ज्यों मोती की लड़ियाँ रे

एक विदा होती पुत्री के मन के जिस कोमल कँटीले भाव को एवं अन्तःकरण की जिस वेदना को नेपाली जी ने इस कविता में दिखाया है, वह अद्वितीय है, मन को अन्दर तक बेध देने वाला है।

इसी प्रकार, नेपालीजी ने अनेक श्रृंगारिक गीतों की भी रचना की है, जो सुकुमारता और भावोत्कर्ष की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण हैं-

मन करता है प्रिये, तुम्हारी
अलकों पर जुगनू चिपका दूँ
चम-चम चमके और झाकियाँ
झलकों पर जुगनू चिपका दूँ

× × ×

मुख भी तेरा इतना गोरा
बिना चान्द का पूनम है
है दरस-परस इतना शीतल
शरीर नहीं है शबनम है
अलकें-पलकें इतनी काली घनश्याम बदरिया झूठी है ।
रग-रग में ऐसा रंग भरा, रंगीन चुनरिया झूठी है ॥

दुनिया देखी पर कुछ न मिला, तुझको देखा सबकुछ पाया
संसार ज्ञान की महिमा से प्रिय की पहचान कहीं सुन्दर
तेरी मुस्कान कहीं सुन्दर!

'अलकों' और **'झलकों'** पर जुगनू चिपकाने, बिना चान्द का पूनम होने, शबनम-सा शीतल शरीर होने जैसी रुमानी कल्पना अद्भुत है, जो नेपाली जी ही कर सकते थे।

प्रिया मिलन का सुख जितना मादक होता है, उसका वियोग भी उतना ही घातक। **नेपालीजी** ने वियोग-श्रृंगार से युक्त अनेक प्रभावशाली कविताएँ भी लिखी हैं। कुछ उदाहरण ये हैं-

दूर तुमने किया, दर्द इतना दिया
हम जहाँ भी रहे गुनगुनाते रहे
दो तुम्हारे नयन, दो हमारे नयन
चार दीपक सदा जगमगाते रहे ।

दूर जाकर न कोई बिसारा करे, मन दुबारा तिबारा पुकारा करे
यूँ बिछुड़कर न रतिया गुजारा करे, मन दुबारा तिबारा पुकारा करे
एक दिन क्या मिले मन उड़ा ले गए, मुफ्त में उम्र भर की जलन दे गए
बात हमसे न कोई दुबारा करे, मन दुबारा तिबारा पुकारा करे।

गोपाल सिंह नेपाली का जन्म यद्यपि बिहार के पश्चिमी चम्पारण जिले में शहर गाँव में हुआ था- लेकिन इन्होंने बचपन के दिन देहरादून और मंसूरी के सुन्दर प्राकृतिक परिवेश में गुजारे थे। वैसे, बेतिया के पास भी बीहड़ वन, निर्झर, घाटी आदि के मनभावन दृश्य थे ही। इसलिए कवि के मन पर प्राकृतिक सौन्दर्य के जादू का असर बचपन से ही अनायास पड़ता रहा और

अंततः कवि एवं प्रकृति के बीच एक अटूट रिश्ता-सा बन गया। शायद यही कारण है कि वे काव्य-रचना करते समय प्रकृति को कभी भूला नहीं पाए और वह कभी आलम्बन तो कभी उद्दीपन के रूप में आती रही। प्रकृति से घनिष्ठ सम्बन्ध को देखकर कुछ आलोचकों ने उन्हें हिन्दी का **दूसरा पन्त** माना है। **श्री श्याम नन्दन प्रसाद सिंह** ने इस बारे में लिखा है- "नेपालीजी का जन्म चम्पारण जिले के बेतिया शहर में हुआ, जिन्हें भारतवर्ष के विभिन्न भागों में भ्रमण करने का अवसर मिला, जिसकी वजह से उन्हें बहुत कुछ **कविवर पन्त** के समान कहा जाएगा, क्योंकि उन्होंने उन्हीं के समान प्रकृति की सुन्दरता का अवलोकन किया इसी से उनके काव्य में प्रकृति के प्रति दिव्य उत्साह मिलता है।" उनके प्रकृति-प्रेम को अनेक कविताओं में देखा जा सकता है। कुछ उदाहरण ये हैं-

चान्द क्यों लिए फिरे बादलों की ओढ़नी
क्यों घुटी-घुटी फिरे घाटियों में चान्दनी
क्यों निराश रोशनी, क्यों निराश संगिनी
चाँद जब महीन-सी बालियाँ उछाल दे
ओढ़नी निकाल दे !

× × ×

सुबह-सुबह का सूर्य सलोना चाँद आधी रात का
प्यारा-प्यारा नील गगन का दीपक झंझावात का

× × ×

कहीं चान्दनी बादल को धधका देती है
कहीं नदी पर लहर-लहर लचका देती है।

मानवीय भावनाओं एवं क्रिया-कलापों की उपमा प्राकृतिक तत्त्वों से देने में कवि को जैसे महारत हासिल है-

जनम-जनम हम गलियाँ बदलें
जैसे बदले चमन चिरैया
कुञ्ज-निकुञ्ज तितलियाँ बदले।

इस कवि की प्रतिभा एवं कवित्व-शक्ति की पहचान आरंभिक काल में हो गई थी। उस समय के कई पुरोधा साहित्यकारों ने उनकी कविताओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की है कविवर **सुमित्रानन्दन पन्त** ने उनकी पहली काव्य-रचना **'उमंग'** को देखकर लिखा था- "आपकी कविताएँ मुझे विशेष प्रिय हैं। आपकी सरस्वती स्नेह, सहृदयता और सौन्दर्य की सजीव प्रतिमा है। आपका कवि-कंठ निर्मल निर्झर के समान अवश्य ही मंसूरी की तलहटी में फूटा होगा।" इस बात का उल्लेख पहले भी किया जा चुका है कि जिस प्रकार पन्त को प्रकृति ने अपने हाथ से सँवारकर कवि बनाया था, उसी प्रकार नेपाली जी को भी। सुप्रसिद्ध कवि **निराला** भी **नेपालीजी** की कविता से अभिभूत थे। उन्होंने भी उनकी काव्य-प्रतिभा को प्रारंभ में ही पहचान

लिया था- ''इधर दो वर्षों से नवीन तारकों के सदृश जितने कवि हिन्दी-काव्याकाश में चमकते हुए देख पड़े, सौन्दर्य के सुख-स्पर्श जादू से जिन्होंने मन को वशीभूत कर लिया तथा प्रकाश दीप्ति दी, **श्री गोपाल सिंह नेपाली** उन्हीं में से एक हैं। मुझे उनके काव्य में शक्ति, प्रवाह, सौन्दर्य बोध तथा चारु-चित्रण एक विशेषता लिए हुए दीख पड़े।'' बाद में, जब नेपालीजी ने **''हिमालय ने पुकारा''** पुस्तक की रचना की तो **राष्ट्रकवि दिनकर** ने लिखा- ''नेपालीजी की भाषा सरल और सुबोध होती थी। उनकी शैली मार्मिक थी। तथा उनके भाव-प्राण प्रेरक होते थे। उन्होंने जो कुछ भी लिखा, वह सबका-सब रक्षणीय है।''

उनके जाने के बाद भी उनका संघर्षपूर्ण जीवन एवं उनकी साहित्यिक-साधना याद आती है, उनके आत्मिक बल और धैर्य की याद आती है, उनके राष्ट्र-प्रेम और उत्सर्ग की याद आती है और एक स्वाभाविक लालसा जग उठती है कि फिर वही **कर्मवीर नेपाली** एकबार और जन्म ले, बार-बांर जन्म ले- **''मन दुबारा तिबारा पुकारा करे।''** □

यूनिवर्सिटी प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
स्नातकोत्तर हिन्दी-विभाग
तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर - ८१२ ००७

वेदना के गायक आस्थावादी कवि नेपाली

● डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव

हिन्दी-गीतकारों की परम्परा में कविवर पुण्यश्लोक **गोपालसिंह नेपाली** ने अपना एक मौलिक परिवेश प्रस्तुत किया है, जो फिल्मी जमीन को छूता हुआ भी शास्त्रीय गरिमा से उज्झित नहीं है । **नेपालीजी** गीतकार पहले हैं, फिल्मी गीतकार बाद में । निश्चय ही, फ़िल्मी गीत उनके जीवन का केवल साधन था, साध्य तो था काव्यात्मक गीत ही । फिर भी, इतना अस्वीकार्य नहीं कि उनके गीतों में फिल्मी वातावरण का प्रभाव भी, जो स्वाभाविक था, स्वरित हुआ है। परन्तु, शृंगार या रोमांस अथवा भाषा के जनतन्त्रीकरण के नाम पर हिन्दी-गीतों में जो ग्राम्यता आज स्फीतोच्छ्वसित दिखाई पड़ती है, उसके प्रति तो अवश्य ही उन्होंने असतर्कता नहीं बरती है और जहाँ ऐसा हो भी गया है, उसे उनका जान-बूझकर किया गया कवि-स्वातन्त्र्य ही माना जाएगा।

अमर गायक कविवर **नेपाली** के गीत, सम्भव है, उनलोगों को ईषत् निराश करेंगे, जो गीतों में भाषा की सशक्तता (जिसे आलोचकम्मन्य अक्सर 'पण्डिताऊपन' के नाम से बदनाम किया करते हैं या जो आँग्लस्रोतस्कों की जिह्वा के लिए मखाने का पत्ता प्रमाणित होती हैं) के औचित्य के समर्थक हैं; किन्तु ऐसे प्रबुद्ध पाठकों का वर्ग भी **नेपालीजी** के गीतों में स्वतः प्रवाहित सौन्दर्य-सुख के विद्युत्-स्पर्श या हठात् अभिभूतीकरण की धनात्मक क्षमता से इन्कार नहीं कर सकेगा। इस सन्दर्भ में कवि के प्रतिनिधि काव्य **'पंछी'** में आज से लगभग छह-सात दशक पूर्व उल्लिखित **महाप्राण निराला** की भूमिका का प्रस्तुत महत्त्वांश द्रष्टव्य है:

''नवीन तारकों के सदृश जितने कवि हिन्दी के काव्याकाश में चमकते हुए मुझे दीख पड़े, सौन्दर्य के सुखस्पर्श जादू से जिन्होंने मन को वशीभूत कर लिया तथा प्रकाश को और तृप्ति दी, **श्रीगोपालसिंहजी नेपाली** उन्हीं में से एक हैं । मुझे उनके काव्य में शक्ति, प्रवाह, सौन्दर्यबोध तथा चारु-चित्रण एक विशेषता लिये हुए दीख पड़े।''

निश्चय ही, **कविवर नेपाली** के गीतों में शक्ति, प्रवाह, सौन्दर्यबोध तथा चारु-चित्रण अपने में एक दूसरे से टकराकर गँदलाने के बजाय प्रत्येक अपनी-अपनी जगह सुस्थित और अक्षतांग है। साथ ही, पाठकों को उक्त प्रत्येक गुण को आत्मसात् करने में या अलग-अलग आस्वादन में विवेक-शूर्प या बौद्धिक 'तितउ' की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। थोड़ा भी संवेदनशील पाठक अधिक-से-अधिक रस लेता है, **कविवर नेपाली** की कविताओं का यही सर्वातिशायी वैशिष्ट्य है। सचमुच ही, कवि अपने प्रत्येक स्वर को इस खूबी से आहत किये हुए है कि उसमें अनेक अन्तःस्वर ध्वनित-प्रतिध्वनित परिलक्षित होते हैं। स्वर की यह तन्त्रात्मकता ही कवि की लोकप्रियता का रहस्य है।

अब हम उपरिविवेचित परिप्रेक्ष्य में कविवर नेपाली की दो कृशगात, किन्तु अतिशय ख्यात काव्य-कृतियों (**'पंछी'** और **'रागिनी'**) से कुछ अवतरण लेकर उनकी साहित्यिक रमणीयता के दर्शन करें।

महाप्राण निराला ने कविवर नेपाली के गीतों में जिन चार गुणों के दिग्दर्शन कराये हैं, उनमें अपनी ओर से एक गुण और जोड़ना असमीचीन नहीं होगा। वह गुण है– वेदनानुभूति।

संघर्षशील कवि ने अपने व्यावहारिक दैनन्दिन जीवन में वेदना के जाने कितने रूपों को प्रत्यक्ष किया है और जाने कितनी वेदनाओं को रूपायित भी किया है। यही कारण है कि उनके गीतों में दृढ़ता, आस्था, गति, माधुरी और रमणीयार्थता और ततोऽधिक सहजैकतानता एकबारगी आ एकत्र हुई हैं, जिन्हें हम **निरालाजी** की शक्ति, प्रवाह, सौन्दर्यबोध और चारु-चित्रण के ही पर्याय कह सकते हैं। ये सारे-के-सारे पर्याय, मूलगुण वेदना के ही हैं। जिस प्रकार मूलगुण पानी के बुलबुले, लहरें आदि केवल पर्याय हैं, ये सभी परस्पर भिन्न नहीं हैं, उसी प्रकार कविता के शब्द, अर्थ, भाव, रस आदि का चमत्कार वेदनास्रोतस्क ही है, यह सन्दिग्ध नहीं। इसी सीधी-सी बात पर हमारा दृष्टिकोण स्पष्ट होना चाहिए कि **'रागिनी'** और **'पंछी'** के सारे-के-सारे गीत वेदनाधृत हैं और यही मूल कारण है कि उनसे हम अधिक-से-अधिक अभिभूत हो पाते हैं और हमारा अनुभूति-प्रवण हृदय इनमें गहरे-से-गहरे पैठकर रम लेता है। किन्तु इतना ध्यातव्य है कि **कविवर नेपाली** कविता को वेदनामूलक मानते हुए भी वेदनावादी नहीं हैं। वेदना तो उनकी ऐसी राह है, जिसपर चलकर ही कोई पथिक अपने सुख के चरम लक्ष्य तक पहुँच पाता है। इसलिए हम निष्कर्ष निकालें कि वेदना का गायक होते हुए भी कविवर नेपाली एक महान् आस्थावादी कवि के रूप में अपने गीतों में उभरते हैं। एक उदाहरण :

पर पथ में ही काले घन ने आकर मुझको घेरा,
लगा भीगने पानी से यह नन्हा-सा तन मेरा।
आते-आते रात हो गई, छाया पूर्ण अँधेरा,
आज न जा पाऊँगा घर को, लूँगा यहीं बसेरा॥
देखो तो वह प्रिये, गगन में फटता जाता घन है,
वन के भीतर से नवशशि का हँसता आता मन है।
कितना सुन्दर लगता है वह, चाँदी का यौवन है।
बोलो रानी– 'क्या उससे कम यही तुम्हारा तन है।'

('पंछी' : आलिंगन)

कविवर नेपाली यह अंगीकार करते हैं कि सारा जीवन वेदनामय है, किन्तु वह रो-रोकर जीवन जीने के पक्षपाती नहीं हैं। आँसुओं को मणि समझते हुए अंगार-पथ को पार करना ही उन्हें अभीष्ट है। अहोरात्र उनके होठों पर अखण्ड गीत की दीपावली उत्प्रभ बनी हुई है :

हँसती आती हँसती जाती थीं जीवन की घड़ियाँ,
छूट रही थीं 'पल्लव-वन' में मस्ती की फुलझड़ियाँ;
दो कण्ठों से निकल रही थीं मधुर प्रणय की कड़ियाँ
खिले हास में सुमन, अश्रु में खेल रही थी मणियाँ।
जग में, जीवन में, यौवन में, यह अवसर आता है,
सहसा अपना रीता प्याला मधु से भर जाता है;
जब गूँगा भी अपना गाना विहँस-विहँस गाता है,
हृदय-हृदय से प्राण-प्राण से लगता चिर नाता है।

('पंछी' : गगनपथ)

वेदनामय जीवन में प्रेम को ही सार माना जाना कोई नई बात नहीं, फिर भी **कविवर नेपाली** की भावुकता अपनी है। भले ही, इस भावुकता ने कहीं-कहीं कवि के द्वारा चित्रित प्रेम की रेखाओं को मांसल भी कर दिया है और **'मदन को रस से तृप्त होने'** की छूट भी मिल गई है, लेकिन पीड़ा की अव्याहत निरन्तरता में भी जीने और गाने की मस्ती अप्रतिहत है :

हँस दे मृदु चिर हास, मिलन हो जग में रोते-रोते,
मिल जाए निधि अमित स्वर्ग की निज धन खोत-खोते;
हो जाएँ हीरे के टुकड़े बालू धोते-धोते,
बरसे मृदु उल्लास, घाव की पीड़ा होते-होते।

('पंछी' : चहक)

बोला राजा– 'यही हमारा सुरभित नन्दनवन है,
यद्यपि जर्जर है सारा तन, फिर भी हँसता मन है;
प्रिये! जहाँ पर तुम रहती हो, वहीं स्वर्ग का धन है,
जहाँ प्रेम है, वहीं सदन है, प्रेमी वहीं मगन है।'

('पंछी' : चिरप्रेमी)

कविवर नेपाली का **'पंछी'** काव्य **पं० रामनरेश त्रिपाठी** की प्रसिद्धि-प्राप्त काव्य-कृति **'पथिक'** के तर्ज पर लिखा गया है और इसमें दो प्रेमल हृदयों का मोटी-पतली रेखाओं द्वारा सबल उत्कर्ष अंकित हुआ है।

'रागिनी' कविवर नेपाली की स्फुट कविताओं का लघुकाय संकलन है। इसमें शृंगारपरक कविताओं के अलावा राष्ट्रीय चेतना के उद्घोषक और प्रगतिवादी कविताएँ भी संकलित हैं और सभी-की-सभी कविताएँ वेदना से ही मुखरित-झंकृत हैं। **'पावस और कवि'** शीर्षक कविता की कुछेक पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :

गाता है कवि गान, धार पर
धार छतों से चलती है !
इसी धार में फिर मन की,
सब चिन्ताएँ बह जाती हैं !
विकट परिस्थितियाँ चक्कर खाकर,
नीचे ढह जाती हैं !
रह जाती है एक शिला ही
बस, कवि के दृढ़ जीवन की !

कवि को दुनिया में सबसे प्यारा है प्रेम; किन्तु प्रेम से भी बढ़कर विश्वास और उससे भी बढ़कर है दर्द। और, इसी दर्द के क्षण में उसे गीत सूझता है। **'रैन-बसेरा'** शीर्षक कविता का एक अंश ध्यातव्य है :

सुख-दुख ऐसी चीज कि जग में
जीवन-नैया डोले!

साईं, मेरा रैन-बसेरा
पिंजड़े में पंछी बोले!

प्यार किया सर्वस्व लुटाया,
प्रेमी मन को पहचाना;

खुशी हुई तो चुप्पी साथी,
दर्द उठा, सूझा गाना।

प्रगतिशील कविता की बानगी 'अलख' शीर्षक से उद्धृत है। प्रेम का दुर्लालित कवि गरीबों के बीच जाकर तड़प उठा है:

रेल चल गई, मोटर दौड़ी,
शाम-सुबह नित चिट्ठी आई;

हाँके ठेले, बिस्तर ढोये,
भूखे लेटे बीन बजाई।

खा-खा के मरती है दुनिया,
कितने बेखाये जीते हैं!

बोलो बाबा, अलख निरंजन,
जाड़ा है, बोरे सीते हैं !

'रागिनी' में संकलित कवि की राष्ट्रीय कविताओं में 'विद्रोही', 'देश-दहन', 'टुकड़ी', 'जंजीर' आदि कविताएँ पर्याप्त उत्तेजक और प्रभावक हैं। 'टुकड़ी' कविता में राष्ट्रीय संकटकालीन स्थिति की चिर नवीनता द्रष्टव्य है :

चल बढ़ बची हुई टुकड़ी अब,
कर न विचार तनिक क्या बीता !

कदम-कदम पर ताल दे रहा,
गरज, दमक, हुंकार पलीता ॥

मरते हैं डरपोक घरों में,
बाँध रहे रेशम का फीता !

यह तो समर, यहाँ मुट्ठी भर,
मिट्टी जिसने चूमी, जीता !

यह निर्विवाद स्वीकार्य है कि कविवर नेपाली के गीत यों ही निर्जीव शब्दों का ढेर नहीं है, वरन् उनके प्रत्येक शब्द में प्राणमयी सत्ता की आग्नेय आभा दीपित है। उक्त दो काव्यों के अतिरिक्त 'उमंग', 'रिमझिम', 'आँचल', 'नवीन' आदि भी ऐसे काव्य हैं, जिनमें कविवर नेपाली की आत्मा मुख्यत: शृँगार से आप्लुत होते हुए भी शृँगारेतर चित्रों में भी रूपायित हुई

है। उनकी मृत्यु के कुछ ही दिन पूर्व प्रकाशित **'हिमालय ने पुकारा'** राष्ट्रीय गीतों के प्रतिनिधि संकलन की बड़ी चर्चा-अर्चा हुई है। नेफा और लद्दाख के क्षेत्रों में चीनी बर्बरता की प्रतिक्रिया में उनकी लौह-लेखनी भला कैसे चुप रह सकती थी! युग की परिस्थिति से सम्बद्ध रहकर, युग की संवेदना से दंशन पाकर उनका कवि कभी आहत नहीं हुआ, वरन् क्षण-क्षण उदग्र ही होता रहा। आज के युग को, जबकि उनके जैसे समर्थ और अम्लान गीतकार कवि की अनिवार्य अपेक्षा थी, क्रूर काल उन्हें हमारे बीच से सहसा छीन ले गया! बृहत्तर आस्था और महत्तर सम्भावना के पुंजीभूत **कविवर नेपाली** जैसे कोमलकान्त पदावली के गायक के अकाल निधन से सही मानी में हिन्दी का जवाकुसुम सदा के लिए मुरझा गया! □

पी० एन० सिन्हा कॉलोनी
भिखनापहाड़ी, महेन्द्रू
पटना - ८०० ००६

गोपाल सिंह नेपाली की काव्य-भाषा

● डॉ० अवधेश्वर अरुण

किसी कवि की काव्य-भाषा का अध्ययन तीन दृष्टियों से किया जा सकता है- (क) भाषा-परम्परा और कवि-दृष्टि (ख) प्रयोग वैशिष्ट्य और (ग) भाषिक उपलब्धि। इन्हीं दृष्टियों से **नेपाली** की काव्य-भाषा का विश्लेषण करना प्रस्तुत निबन्ध का उद्देश्य है।

नेपाली की काव्य-साधना सन् १९२६ से प्रारम्भ होती है। हिन्दी-भाषा के विकास की दृष्टि से यह वह काल है, जब कोमल प्राण ब्रजभाषा काव्य-भाषा-पद से अपदस्थ हो चुकी थी और खड़ी बोली हिन्दी अपनी समस्त तेजस्विता के साथ नवयुग की वाणी का प्रवाह सम्हालती आगे बढ़ रही थी। छायावाद के प्रजापतिगण उसे सुगढ़, सुसंस्कृत और अर्थव्यंजक बनाने की साधना में तल्लीन थे। बिहार के एक छोटे से स्थान बेतिया में अपनी निर्धनता, साधनहीनता और अल्प भाषा-सम्पदा के साथ काव्य-सृजन के क्षेत्र में सहयोग शिल्पी बनने की आकांक्षा लिए **नेपाली** उदित हो रहे थे। वे **प्रसाद, निराला** और **पंत** जैसे महाकवियों से सुपरिचित हो रहे थे और खड़ी बोली के काव्य-भाषिक व्यक्तित्व की रचना में भी तत्पर थे। आज उनकी काव्य-भाषा को देखकर बेहिचक कहा जा सकता है कि खड़ी बोली काव्य-भाषा-सृजन के इतिहास-निर्माण में **नेपाली** न तो अपनी भूमिका से विमुख हुए और न उन्होंने अपनी भूमिका के चुनाव में कोई गलती की। अपने भाषा विषयक चुनाव के सम्बन्ध में नेपाली **"उमंग"** की भूमिका में लिखते हैं-

"बचपन की बात मैं नहीं करता, पर जब होश आया तो ब्रजभाषा की कोमलकान्त पदावली घूँघट काढ़े सामने खड़ी थी। एकाध को मैंने पसन्द भी किया, गाया भी। पदावली अभी मेरे निश्चय की बाट जोह रही थी कि पीछे से समय ने सीटी दी। मैं मुड़ा, उसकी ओजपूर्ण बातें सुनीं। न कोई मोह, न कुछ लालच, न कर्त्तव्य की ज्योति से उद्भासित प्रशस्त जीवन-मार्ग। मैं बड़ा आकृष्ट हुआ। इस नवीन आलोक से मुझे बड़ी खुशी हुई। अपने चिर तरुण साथी समय से प्रोत्साहन पाकर अब मैं गाने लगा!....... लोग कहने लगे हाँ! कुछ कह रहे हो। अब उमर खय्याम की हाला प्याले में भरी सामने रखी थी....... पर मुझे उसमें कुछ कड़वाहट-सी मालूम हुई और जीभ ने कहा, पीने पर मुँह किंचित् विकृत करना पड़ेगा। मैंने स्वीकार न किया, ढाल दिया। इतने में बगल से उर्दू के विषाद गीत सुनाई दिए। वे करुण थे, उनमें रस था। मुझे बड़े पसन्द आए। .... पर स्वर की असमानता से पकड़ लिया गया। कितनी ही कोशिशें कीं, पर रुदन की दुरुह कला के सामने मैं हार मान गया। स्वभाव में भी विरोधाभास था। **न मैं कभी दर्द की तरह उठा, न कभी आँसू की तरह गिरा।**" उनके इस कथन से स्पष्ट है कि अपने स्वभाव और अपनी प्रकृति के अनुरूप आचरण करते हुए **नेपाली** ने कोमलकान्त पदावली वाली ब्रजभाषा, कड़वाहट भरी हालावादी शब्दावली वाली भाषा, दर्द और आँसू से भरी उर्दू भाषा तथा **ज्योति से उद्भाषित ओजपूर्ण खड़ी बोली हिन्दी** में से खड़ी बोली का ही चुनाव किया।

ओजस्विता और ज्योति से उद्भाषित खड़ी बोली का कौन-सा रूप नेपाली को प्रिय था उसको स्पष्ट करते हुए उन्होंने **"नवीन"** में लिखा है- "जरा भाषा सरल सजीव हो और छन्द चुस्त हो, तो इससे साहित्य को सिद्धि और राष्ट्र को शक्ति मिलेगी।" अर्थात् वे सरल और

सजीव भाषा को महत्त्वपूर्ण मानते थे। इसमें कोई संदेह नहीं कि नेपाली सरल और सजीव भाषा के सिद्ध कवि हैं। **सुमित्रानन्दन पंत जी** ने उनकी भाषा के विषय में सही लिखा है कि **''आपकी भाषा इतनी सरल एवं प्रांजल है कि वह आपकी विशेषता बन गई है।''** नेपाली की भाषा दृष्टि का कितना विनियोग उनकी भाषा में हुआ है और खड़ी बोली काव्य-भाषा की किन खूबियों को वे अपने काव्य में उकेर पाए हैं, इसका निर्णय उनके प्रयोगों को देखकर ही किया जा सकता है।

भाषा सम्बन्धी विश्लेषण का प्रथम पक्ष है- व्याकरण। व्याकरण भाषा के साधु-असाधु प्रयोग का नियामक होता है। कवि से अपेक्षा की जाती है कि वह अकारण व्याकरण का अतिक्रमण न करके व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग करे। व्याकरण सम्बन्धी असाध प्रयोगों का विवेचन काव्य-शास्त्र में दोष प्रकरण में होता है और उन्हें च्युत संस्कार दोष कहते हैं। **नेपाली** की भाषा व्याकरण की दृष्टि से सर्वथा निर्दोष नहीं है। उनमें अनेक स्थलों पर लिंग, वचन और कारकीय विभक्तियों का त्रुटिपूर्ण प्रयोग प्राप्त होता है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा-

बर्फों में पिघलने को चला लाल सितारा।

x

इतिहास में अध्याय नया खोल रहा है।
घायल है अहिंसा का वजन तौल रहा है।

''हिमालय ने पुकारा'' की एक ही कविता से गृहीत उपर्युक्त तीन पंक्तियों में कई दोष हैं। बर्फ एकवचन, बहुवचन दोनों में प्रयुक्त होता है, उसका बहुवचन बर्फों बनाना गलत है। ''पिघलने को चला'' में को विभक्ति का प्रयोग अनावश्यक है। इतिहास में अध्याय खोला नहीं जाता है। अत: 'खोलना' प्रयोग अनुपयुक्त है। **''घायल है अहिंसा का वजन तौल रहा है''** पंक्ति अक्षरी हैं इसमें दो वाक्यों को जोड़ा गया है। जिससे इसका अर्थ उलझ गया है। कवि कहना चाहता है कि चीनियों ने हमारे अहिंसा-सिद्धान्त को घायल कर दिया है और वे हमारी ताकत को तौल रहा है। लेकिन शब्द इस अर्थ को व्यक्त नहीं कर रहे हैं। अत: इस पंक्ति में असमर्थ दोष है।

व्याकरण की दृष्टि से भाषा पर विचार करने का दूसरा पक्ष शब्द-प्रयोग के व्याकरणिक रूप से है। राजशेखर ने शब्द प्रयोग की दृष्टि से कवियों के तीन वर्ग माने हैं-

- ❖ नाम कवि – जो संज्ञावचक शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं।
- ❖ आख्यात कवि – जो क्रियावाचक शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं।
- ❖ नामाख्यात कवि – जो संज्ञा-क्रिया दोनों का समान प्रयोग करते हैं।

मैं इसमें चौथा वर्ग जोड़ना चाहता हूँ- **''विशेषण कवि।''** दिनकर जी ने बहुत ही उचित लिखा है- कवि में जो प्रज्ज्वलन वाला गुण है, प्रेरणा के आलोक में शब्दों को सजीव बना देने वाली शक्ति है, उसका सबसे बड़ा चमत्कार विशेषणों के प्रयोग में देखा जाता है। विशेषणों के प्रयोग में आधी सफलता और आधी असफलता नहीं होती। कवि या तो पूर्णरूप से सफल अथवा सर्वथा असफल हो जाता है। इसलिए जहाँ यह जानने की आवश्यकता हो कि दो कवियों में से कौन बड़ा और कौन छोटा है, तो वहाँ केवल यह देख लो कि दोनों में से किसने कितने

विशेषणों का प्रयोग किया है तथा किसके विशेषण प्राणवान और किसके निष्प्राण उतरे हैं। शब्दों के सम्यक् प्रयोग की जैसी पहचान विशेषण में होती है, वैसी संज्ञा और क्रिया में नहीं।'' काव्य की भूमिका, पृ० १४४) में **दिनकर जी** का समर्थन करते हुए कहना चाहता हूँ कि **नेपाली विशेषण के कवि हैं।** उनकी कविताओं में जो प्राणवत्ता, भास्वरता, सरसता और तेजस्विता है उसका बहुत बड़ा कारण सार्थक और सटीक विशेषणों का प्रयोग है। पुनरावृतिमूलक विशेषण प्रयोग का उनके जैसा धनी कवि हिन्दी में दूसरा नहीं है। प्रसंग चाहे संख्यावाचक विशेषणों का हो, चाहे गुणवाचक विशेषणों का– नेपाली कहीं तो पुनरावृत्ति की झड़ी लगा देते हैं और कहीं कई विशेषण एक साथ पिरो देते हैं, जिससे उनकी कविता जीवन्त हो उठती है। कुछ प्रयोग नमूने के रूप में प्रस्तुत हैं-

मेरे प्राण मिलन के भूखे
ये आँखें दर्शन की प्यासी
चलती रही घटाएँ काली
अम्बर में प्रिय की छाया-सी
श्याम गगन ने नयन जुड़ाये
जगा रहा अन्तर का वासी
काले मेघों के टुकड़े-से
चाँद निकलता रहा रात भर[१]

पक रहे सरस मंजु रसाल
हैं पीले-पीले लाल-लाल
दुम में ये दाड़िम गोल-गोल
रे पंछी मंजुल बोल-बोल[२]

नेपाली ने मधुर, मृदु, मीठा, मंजुल, काला, पीला, लाल, हरा, नीला, अनूठा, गहन, ऊँचा, विमल, चंचल, नवीन, विशाल, निर्मल, लघु, अनुपम आदि विशेषणों का बार-बार प्रयोग किया है।

व्याकरण का तीसरा क्षेत्र-प्रयोग की शैली का है। इसके अन्तर्गत मुख्यत: समास शैली और व्यास शैली की बात की जाती है। **नेपाली समास शैली के कवि नहीं हैं।** इसका कारण यह है कि हिन्दी की प्रकृति संस्कृत की भाँति सामासिक नहीं है। **निराला** की **''राम की शक्ति पूजा''** जैसी समास-शैली की कविताएँ हिन्दी में आयासपूर्वक ही लिखी जा सकती हैं। मगर, **नेपाली पद्माकर** आदि **की भाँति व्यास शैली के भी कवि नहीं हैं।** अत: इस दृष्टि से हम **इन्हें मध्यवर्ती कवि मानेंगे।** वे आवश्यकतानुसार भाषा की प्रकृति का ध्यान रखते हुए दोनों शैलियों का प्रयोग करते हैं।

व्याकरण का चौथा क्षेत्र है- शब्द-स्त्रोतों का विश्लेषण नेपाली में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी सभी प्रकार के शब्द मिलते हैं। विदेशी शब्दों में उर्दू-फारसी के ही शब्द अधिक हैं। अंग्रेजी शब्दों से नेपाली ने प्राय: परहेज किया है। देशज शब्दों में पसार, बयार, छीनना, फुनगी आदि के मनोरम प्रयोग नेपाली में मिलते हैं। तत्सम शब्दों की कमी नहीं है, लेकिन नेपाली की पहचान तद्भव शब्दों से है। वे स्नेह को नेह, निर्झर को झरना, पक्षी को पंछी रिक्त

की रीत, शृंगार को सिंगार बनाकर तो प्रयुक्त करते ही हैं। शब्दों के इयान्त प्रयोग द्वारा विशेष लावण्य भी पैदा करते हैं। गगरिया, उमरिया, चुनरिया जैसे सैकड़ों शब्द उनके काव्य में हैं। एक उदाहरण प्रयोग की लुनाई दिखाने के लिए पर्याप्त होगा।

''मौसम है रंगरेज गुलाबी गाँव नगरिया रंग दे रे!
तीस करोड़ बसे धरती की हरी चदरिया रंग दे रे!''

व्याकरण के क्षेत्र से निकलने पर हम भाषा के काव्यात्मक विनियोग के देश में पहुँचते हैं। अलंकरण, बिम्ब-विधान, प्रतीकात्मकता, नाद-सौन्दर्य और अर्थ-गौरव भाषा प्रयोग के काव्यात्मक पक्ष हैं। इनकी दृष्टि से नेपाली के काव्य का विश्लेषण अपेक्षित है।

अलंकार विधान की दृष्टि से नेपाली वीप्सा अलंकार के सम्राट हैं। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि किसी भी प्रकार का शब्द हो, नेपाली उसका पुनरावृत्ति-परक प्रयोग कर अपूर्व लावण्य की सृष्टि कर देते हैं। कुछ पंक्तियाँ देखिए-

द्रुम में दाड़िम गोल-गोल
रे पंछी मंजुल बोल-बोल[३]

रिमझिम वर्षा, चमचम बिजली
ज्यों जीवन की अगर-मगर रे[४]

वीप्सा के अतिरिक्त अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि नेपाली के प्रिय अलंकार हैं, जो उनके काव्य में प्रायः प्रयुक्त हुए हैं।

नेपाली की रचनाओं में प्रकृतिपरक बिम्बों की मनोरम योजना हुई है। इन बिम्बों में चाक्षुष, श्रावणिक और गत्वर बिम्बों की प्रधानता है। एक-दो उदाहरण प्रस्तुत हैं-

पीपल के पत्ते गोल-गोल
कुछ कहते रहते डोल-डोल

मंजुल कल-कल कर सरिता सर
मंजुल छल-छल कर वन निर्झर
कहती हवा लोरियाँ देकर
पंछी सुन्दर, पंछी सुन्दर[५]

होती रही रात भर चुपके
आँख मिचौनी शशि-बादल में
लुकते छिपते रहे सितारे
अम्बर के उड़ते आँचल में।[६]

नेपाली में छोटे-छोटे मनोरम बिम्ब अधिक हैं। विराट बिम्ब कम हैं। अपने लघु बिम्बों में नेपाली ने जो भावोद्वेलन और आत्मीयता भरी है, वह अद्वितीय है। नेपाली लघु बिम्बों के महान् स्रष्टा हैं।

नेपाली अर्थ-विधान की दृष्टि से अभिधा के कवि हैं। यों उनके काव्य में यत्र-तत्र लाक्षणिक प्रयोग भी मिल जाते हैं। जैसे एक उदाहरण देखिए-

मुसकान ही नहीं, कपोल अश्रु भी हँसे
ये हँस रही अटारियाँ, कुटीर भी हँसे"

यहाँ अटारियों से धनी और कुटीर से गरीब तथा मुस्कान से सुखी और कपोल अश्रु से दु:खी व्यक्ति की अभिव्यक्ति लक्षण लक्षणा के सहारे की गई है।

नेपाली में व्यंजनात्मक प्रयोग विरल हैं, इसलिए उनके काव्य में प्रतीकों का प्रयोग भी बहुत कम है। क्योंकि भारतीय काव्य-शास्त्र की दृष्टि से प्रतीक एवं व्यंजना या ध्वनि में निकटतम सम्बन्ध या समानता है। लेकिन नेपाली में कुछ प्रतीक बहुत स्पष्ट होकर आए हैं। जैसे दीपक, मेघ, पंछी, वसंत आदि उनके काव्य में बहु प्रयुक्त प्रतीक हैं। दीपक साधना का, मेघ सरसता का, पंछी उन्मुक्तता का तथा वासन्ती रंग प्रसन्नता का प्रतीक है।

नेपाली ने प्रयोग की पुनरावृत्ति द्वारा अपने प्रतीकों को स्थापित किया है। प्रेमी-प्रेमिका के स्थूल प्रतीक के रूप में पंछी के वन-राजा और वन-रानी को भी लिया जा सकता है।

नेपाली सुकंठ कवि थे। अपने मधुर स्वर एवं कविता पढ़ने की कला के कारण वे कवि सम्मेलनों में छा जाते थे। स्वर-माधुर्य के कारण नेपाली की प्रतिभा गीतों में ही प्रकट हुई है। उन्होंने अतुकान्त और छन्दहीन कविता का विरोध किया है-

''लाख चला अतुकान्त गद्य लो तुम कविता के वेश में
चल न सकेगा नीरस पद तुलसी-मीरा के देश में।''

अत: वे तुलसी, सूर, मीरा की गीत-परम्परा के कवि हैं। गेयता उनके काव्य का प्रमुख गुण हैं। काव्य में गेयता दो तत्त्वों से आती है- लयात्मकता से और नाद गुणात्मक शब्द योजना से। नेपाली की कविता में ये दोनों तत्त्व विद्यमान है। उन्होंने इयान्त शब्दों के प्रयोग द्वारा लयात्मकता का विधान किया है। लय को पारिभाषित करते हुए आई० ए० रिचर्ड्स ने कहा है ''अक्षरों के अनुक्रम से उत्पन्न होनेवाला, आकांक्षाओं, सन्तुष्टियों, निराशाओं तथा विस्मयों का संरचनात्मक संग्रथन लय है।'' (प्रिंसिपुल्स ऑफ लिटररी क्रिटिसिज्म् पृ० १३७) इसके प्रत्येक अंश को यहाँ स्पष्ट करना संभव नहीं है। लेकिन यह बताया जा सकता है कि नेपाली की निम्न पंक्तियाँ लयात्मक हैं-

जंजीर टूटती कभी न अश्रुधार से
दु:ख-दर्द दूर भागते नहीं दुलार से
हटती न दासता पुकार से, गुहार से"

आनुप्रासिक शब्द-योजना और शब्द-मैत्री से नेपाली ने जहाँ लय की सृष्टि की है, वहीं नाद गुणात्मक शब्दों एवं वीप्सा अलंकार द्वारा नाद-गुण का समावेश कर अपनी कविता को संगीत तरल बनाकर सम्प्रेषणीय बनाया है। नाद-गुण का एक उदाहरण प्रस्तुत है-

पड़ती जब पावस की फुहार, बजते जब पंछी के सितार
बहने लगती शीतल बयार

तब-तब कोमल पल्लव हिल-डुल गाते सर्सर-मर्मर मंजुल
लख-लख सुन-सुन विह्वल बुलबुल[९]

शब्दों का इयान्त प्रयोग कर भाषा में लोच पैदा करना और उसके द्वारा नाद एवं लय पैदा करने की कला में **नेपाली** सिद्धहस्त हैं। कुछ पंक्तियाँ देखिये....

खड़ी-खड़ी फुलवारी फूले, हार पिरोये बैठ गुजरिया
बरसाये जलधार बदरिया भींगे जग की हरी चदरिया।

(हिमालय ने पुकारा)

नेपाली विषयानुरूप शब्द-चयन और शब्द-गुंफन की कला में सिद्धहस्त हैं। वे शब्द-मैत्री के द्वारा शब्द-वृत्त या शब्द-गुच्छ की रचना करते हैं। इस तरह उनका विषय शब्दों के वृत्त में बंधकर साकार हो उठता है। उदाहरणार्थ जब वे प्रेम का वर्णन करते हैं तो जवानी, राग, स्नेह, रूप, कोमल, मधुर आदि शब्दों का वृत्त बनाते हैं और जब क्रान्ति की बात करते हैं तो जंजीर, ज्वाला, चिनगारी, धुंध कराल, दुःख, सीखचा आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं। इस तरह के शब्द अर्थ की संगति और भाव की अनुगूँज पैदा करते हैं। एक उदाहरण देखिए-

रस पी-पीकर फूल उठा तन, फूटी कोंपल नरम-नरम
पहले पहल जवानी आयी तन के रोंये गरम-गरम
फूटा कंठ गुलाबी मुखड़ा, बदली बोली पहचानो[१०]

इसमें रस, जवानी, कोंपल, नरम, गरम, तन, रोंआ, गुलाबी आदि शब्द एक दूसरे के मित्र शब्द हैं, जो यौवन के आगमन को साकार कर रहे हैं।

नेपाली की भाषा में विकास की दृष्टि से एक परिवर्तन लक्षित होता है। यह परिवर्तन विषय के कारण भी है और काव्यगत विकास के कारण भी। इस विकास को मैं एक ही तरह की दो कविताओं से समझना चाहता हूँ। **नवीन** की पहली कविता है **''तुम कल्पना करो नवीन कल्पना करो''।** इसी शीर्षक से एक कविता **हिमालय ने पुकारा** में भी है। अन्तर इतना ही है कि १९४४ **नवीन** में संकलित कविता की है और **हिमालय ने पुकारा** की कविता १९६१ की। एक में गुलामी का संदर्भ है, दूसरे में राष्ट्र के नवनिर्माण का। इस बदलाव के कारण प्रथम कविता में घिसना, अतीत, रीतियाँ, नीतियाँ, दासता, जंजीर, पुकार, गुहार समृद्धि, ऋद्धि, सिद्धि, अशान्त, व्यथा, यातना, दुर्दशा, दिशा, निशा, याचना इत्यादि शब्दों की योजना है, जबकि दूसरी कविता में यातना और गुलामी वाले शब्द नहीं हैं। यहाँ स्वतंत्र, मधुमास, रोशनी, शक्ति, समृद्धि, शृंगार, विचार, बहार, समाजवाद आदि नए शब्द हैं। अर्थात् पहली कविता के शब्द चेतना को बाँधे हुए हैं, तो दूसरी कविता के शब्द चेतना को मुक्त और संकल्पशील बना रहे हैं। इसी तरह **उमंग** और **रागिनी** की कविताओं में जहाँ प्रकृति और व्यक्तिगत भावनाओं की शब्दावली प्रधान है वहीं **''हिमालय ने पुकारा''** में राजनीतिक और सामाजिक सन्दर्भ की शब्दावली प्रधान है। ***अभिप्राय यह कि नेपाली समय के साथ तथा विषय के साथ शब्दावली बदलते चले हैं। अतः उनकी भाषा गतिशील है, स्थिर नहीं।***

रूप-विधान की दृष्टि से **नेपाली** की भाषा सजी-सँवरी उपवनी भाषा नहीं, वन्य सौन्दर्य की भाषा है उसमें तराश की सुगढ़ता नहीं, वन्य अनगढ़ता की मुक्त सुन्दरता है। कारण, **नेपाली**

कलाविद् कवि नहीं, सहज कवि हैं। वे शब्द रचते नहीं, गूँथते हैं। उनकी भाषा बिहारी की नायिका की तरह "अंग-अंग नग जगमगे" नहीं, कालिदास की शकुन्तला की तरह पुष्पालंकृता है। उनकी भाषा में झरने की गति, आकाश की मुक्तता और नदी की गति-दिशा है। अतः वे न तो पंत की तरह गढ़ते हैं और निराला की तरह दुरूहता लाते हैं। उनमें अज्ञेय जैसी शास्त्रीय समृद्धि भी नहीं है। वे शास्त्र की तरह बद्ध न होकर लोक की तरह उन्मुक्त और व्यापक हैं। यह लोकात्मकता उनकी भाषा में ऐसी उमंग और तरलता पैदा करती है जो उन्हें दूसरे कवियों से अलग करती है। नेपाली ने अपने विषय में लिखा है-

मैं हूँ अपना आप नमूना
मेरा अपना ढंग है।[११]

मैं नेपाली की भाषा के विषय में भी यही कहना चाहता हूँ।

नेपाली-जनता के कवि हैं अतः जनता की भाषा में बोलते हैं, शास्त्रीय शब्दावली में नहीं। वे सामान्य शब्दावली को ही विशिष्ट अर्थ क्षमता से सम्पन्न बना देने वाले कवि हैं।

सब मिलाकर यही कहा जा सकता है कि उमड़ती घटा से, समुद्र के ज्वार से और पहाड़ से नीचे उतरते झरने की क्रीड़ा-प्रियता से नेपाली की काव्य-भाषा का स्वरूप हृदयंगम किया जा सकता है। नेपाली की भाषा सरल भी है, सहज भी, वह कलाविद् नहीं प्रातिम कवि हैं, प्रतिबद्ध नहीं, उन्मुक्त कवि हैं। अतः उनकी भाषा खिलते कमल की भाषा है, उमंग की भाषा है, उत्साह और ऊर्जा की भाषा है। मैं उमंग की निम्न पंक्तियों को उनकी भाषा पर लागू करते हुए कहना चाहता हूँ-

"नीरस विराग का काट फन्द
रे खोल हृदय का द्वार बन्द
उकसा-उकसा कर मधुर छन्द
बैठा खिड़की में मन्द-मन्द
फिर एक बार गाऊँ विहाग
सोई उमंग, उठ जाग-जाग।"[१२] □

युनिवर्सिटी प्रोफेसर
हिन्दी-विभाग
बी० आर० अम्बेदकर बिहार विश्वविद्यालय
मुजफ्फरपुर

संदर्भः-

१. नवीन पृ० ४
२. उमंग पृ० ४९
३. उमंग पृ० ४९
४. रागिनी पृ० ५०
५. उमंग पृ० ६५
६. नवीन पृ० ५
७. नवीन पृ० ६५
८. नवीन पृ० ९
९. रागिनी पृ० ६५
१०. उमंग पृ० १२८
११. उमंग पृ० ९९
१२. उमंग पृ० १५

हिन्दी गीतिकाव्य-परम्परा में नेपाली

• डॉ० शिववंश पाण्डेय

गेय कविता ही गीत है। इसमें अतिशयोक्ति नहीं कि गेय रचना का प्रणयन सबसे कठिन कार्य है। कारण जब तक मन में सरसता का संचार नहीं होता, कोई गा ही नहीं सकता। यह प्रकृत सत्य है कि मनुष्य का जन्म ही हुआ संगीत, लय-स्वर और रागात्मकता के साथ। प्रकृति ने, जिसके बीच मनुष्य पैदा हुआ और फला-फूला, उसे गुनगुनाना सिखाया। यही गुनगुनाहट आगे चलकर गीत में बदल जाती है, जो सनातन-काल से गीत की भावभूमि तैयार करती आई है। इसलिए ही गीत को वह कविता कहा गया है जो सायास नहीं; निरायास जन्म लेती है। "चूँकि गीत भी कविता है, इसलिए उसे पारिभाषिक तथ्यों से अलग नहीं किया जा सकता। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि गीत भाषा-भाव, उक्ति-वैचित्र्य, रस-व्यंजना, बिंब, बाह्य और भीतरी संसार का रेखांकन, संवेदना, उद्भावना, दुःख-दर्द, संत्रास तथा मानवीय संबंधों को अभिव्यक्ति देता है, इसलिए गीत इन सब तत्त्वों का समुच्चय ही है। फिर भी यह कहा जाएगा कि ये सारे गुण जिस रचना में मौलिक रूप में विद्यमान होते हैं, वही कविता है और गीत भी। यह अमूमन गीत-रचना का समुच्चय ही है। जब गहन वैचारिकता के आधार पर हम गीत की चर्चा करते हैं तो क्रोचे की बात याद आती है: जीवन की अनुभूतियाँ ही काव्यानुभूतियों का रूप धारण करती हैं।"[१]

नवगीत के पुरोधा एवं गीतकार राजेन्द्र प्रसाद सिंह के अनुसार "गीत काव्य-रचना का एक ऐसा प्रकार है, जिसके माध्यम से रचयिता और रसग्राहक, दोनों के आन्तरिक भाव-संगीत का विनिमय हो सकता है और जिसकी वस्तु तथा शैली में हृदय की अनुभूति-लीन प्रक्रिया मौलिक रूप से गतिशील रहती है तथा परिवेश की उत्तरोत्तर व्यापक परिधियों के प्रभाव अनुभूति की विशेषताओं का परिपाक करते हैं। व्यक्तिगत स्वभाव, परिवेशगत प्रभाव और परम्परागत मान्यताओं के अन्तर्द्वन्द्व से अनुभूति की प्रक्रिया में बहता हुआ हृदय जिस मार्मिक समग्रता को संजोते रहता है उसका आत्मीयता पूर्ण स्वीकार ही गीत का उद्गम है।"[२]

जहाँ तक साहित्य में गीत की उपस्थिति का सवाल है यह एक अकाट्य सत्य है कि गीत का जन्म मानव के साथ ही हुआ। 'मनुष्य ने गुनगुनाया, इसलिए वह चैतन्य रहा और गीत उसके अधरों पर आकर प्रतिष्ठित हुआ।' विश्व साहित्य इसका साक्षी रहा है। विश्व का प्राचीनतम साहित्य होने के गौरव से महिमामंडित भारतीय साहित्य का प्रारंभ गीतात्मक रचनाओं से ही हुआ। मैकडोनाल्ड जैसे अँग्रेजी विद्वान् ने भी इसे स्वीकारते हुए लिखा है- "On the very threshold of Indian literature more than three thousand years ago, we are confronted with a body of lyrical poetry which, although far older than the literary monuments of any other branch of the Indo-European family, is *already distinguished by refinement and beauty of thought, as well as by skill in the handling of language and metre.*"[३]

प्राचीनतम साहित्य के रूप में वेद की महत्ता सभी स्वीकार करते हैं, जिसकी ऋचाओं में पूर्ण गीतात्मकता है। सामवेद की ऋचाओं में तो गीतात्मकता सबसे अधिक स्पष्ट है। 'निर्धारित

लयों में सस्वर पाठ के लिए ही इनकी रचनाएँ हुई हैं।' इन्हें 'सामन' की संज्ञा प्राप्त है। "सामवेद वास्तव में मन्त्रमय न होकर गानमय है। इसकी ऋचाओं में धैवत निषाद से स्थानव्युत्क्रम देखने को मिलते हैं। इन ऋचाओं में पर्याप्त लचीलापन होते हुए भी उनकी गीतात्मकता को टूटने नहीं दिया गया है। सभी सामस्वर सामाङ्क के अनुसार निर्यन्त्रित होते हैं। पञ्चम, मध्यम, गान्धार, ऋषभ, षड्ज, निषाद और धैवत के आवश्यकतानुसार आयोजन से गीतात्मकता को सुरक्षित रखा जाता है।"[४]

वैदिक साहित्य के बाद लौकिक संस्कृत साहित्य में भी गीतों की अजस्र परम्परा चलती रही। **वाल्मीकि रामायण, श्रीमद्भागवत** (वेणु गीत), संदेश-काव्यों एवं स्तोत्र या भक्ति-काव्यों तथा नीति-काव्यों में इसके विस्तार देखने को मिलते हैं। **कालिदास** (मेघदूत), **घटकर्परकाव्य, मयूरभट** (सूर्यशतक), **भर्तृहरि** (शतक त्रय), **अमरुक** (अमरुक शतक) **जयदेव** (गीत-गोविन्द), **पंडितराज जगन्नाथ** (सुधा लहरी, अमृत लहरी, गंगालहरी आदि), **शंकराचार्य** (सौन्दर्य लहरी, शिवानन्द लहरी आदि) प्रभृति संस्कृत साहित्य में इस विधा के समर्थ रचनाकार माने जाते हैं।

संस्कृत साहित्य का इस परिप्रेक्ष्य में सर्वेक्षण एवं निरीक्षण करने पर पता चलता है कि प्रथम शताब्दी ईसवी पूर्व से लेकर ईसा की उन्नीसवीं शताब्दी तक गीत-काव्यों की परम्परा अक्षुण्ण रूप से चलती रही।

हिन्दी में गीत-काव्यों की परम्परा पर अक्षिपात करने के पूर्व संस्कृत-साहित्य के गीत-काव्यों की वृहद् परम्परा का संक्षिप्त उल्लेख इसलिए आवश्यक प्रतीत होता है कि साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति हिन्दी की गीत-विधा पर भी संस्कृत का ऋणभार है। जिस प्रकार संस्कृत का गीति-साहित्य मुक्तक तथा प्रबंध दोनों रूपों में विकसित हुआ, उसी प्रकार हिन्दी का गीति-साहित्य भी मुक्तक तथा प्रबन्ध दोनों विधाओं में लिखा गया।

हिन्दी का गीति-साहित्य जिसे प्रगीत भी कहते हैं, का जन्म भक्तिकालीन कवियों के पदों से हुआ। इन पदों में कवियों के निरपेक्ष भावों की अभिव्यक्ति नहीं हुई है। सगुण और निर्गुण उपासना के आग्रही भक्तिवादी (**तुलसी, सूर, मीरा**) और ज्ञानवादी कवियों (**कबीर, नानक, रैदास**) के पदों में विषय-वस्तु की दृष्टि से भिन्नता दिखाई देती है, पर रूपाकार की दृष्टि वे सभी समान हैं। उनमें कवि की चेतना और संवेदना झाँकती है और वे सभी कवि की निजी अनुभूतियों एवं उद्गार को प्रकट करते हैं।

रीतिकालीन कवियों की रचनाओं का बाह्य स्वरूप भी प्रगीत का ही है, किन्तु वे प्रगीत नहीं हैं, क्योंकि कवि की आत्मा अपने आप न कहकर किसी दूसरे के द्वारा अपने भावों को प्रगट करती है। "नायिका-भेद के अन्तर्गत कवि नायक नायिकाओं के मुँह से अपनी अनुभूति का वर्णन करता है। अधिकांश रीतिकालीन कवियों का प्रयास इसी प्रकार का है। इनमें आत्मा यद्यपि प्रगीत की है पर स्वरूप नाट्य काव्य का है।.......... प्रगीत की विशेषता, अपना अनुभव इनमें उपस्थित है, पर वह अपने रूप में नहीं। यथार्थ में इन्हें मुक्तक काव्य का एक भेद कहना अधिक उपयुक्त होगा। शुद्ध गीतिभावना इनमें नहीं।"[५] रीतिकाल में भी कुछ ऐसे कवि हुए हैं जिन्होंने सुन्दर प्रेम-प्रगीत लिखे हैं। ऐसे कवियों में **घनानन्द, रसखान, आलम** और **बोधा** आदि उल्लेखनीय हैं।

भक्तिकालीन कवियों के गीतों में जहाँ विनय (आत्म-समर्पण, प्रार्थना, याचना, आत्मदीनता) की प्रमुखता है, वहीं रीतिकालीन कवियों के गीतों में प्रेम के पीर की व्यंजना हुई है। भक्तिकालीन और रीतिकालीन कवियों के गीतों–गीति-साहित्य में बाह्य और आन्तरिक दोनों धरातलों पर अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं, परन्तु ये परिवर्तन क्रान्तिकारी नहीं कहे जात सकते। '**भारतेन्दु** और **द्विवेदी** युग के गीतों में आत्मनिरपेक्षता से आत्मसापेक्षता की ओर बढ़ने का उपक्रम तो हुआ, परन्तु किसी भी कवि ने परम्परा को झटके से तोड़कर किसी नए उन्मेष की स्पष्ट व्याकुलता नहीं दिखलायी। **द्विवेदी** युग में स्पष्टतः **रवीन्द्रनाथ** के गीतों की रहस्यवादी शैली लाक्षणिक और प्रतिबद्ध गीत ही लिखे गए। **मैथिलीशरण गुप्त** की काव्यपुस्तक **'यशोधरा'** में जिस तरह के गीत आए वे सभी पुरानी परिधि तक सिमटकर रहने में ही अपनी खैरियत मनाते रहे।''[६]

रामनरेश त्रिपाठी की काव्य-रचना **'मिलन,' 'पथिक'** और **'स्वप्न'** में भी राष्ट्रीय एवं सामाजिक उत्थान की भावनाओं से प्रेरित गीत लिखे गए हैं। गीत-साहित्य में सर्वप्रथम आत्म-सापेक्ष भावों की अभिव्यक्ति छायावादी कवियों के गीतों में हुई है। ऐसे कवियों में **निराला, प्रसाद** और **महादेवी** के नाम लिए जा सकते हैं। प्रसाद की 'कामायनी' का यह गीत **'तुमुल कोलाहल-कलह में हृदय की बात रे मन', महादेवी** का गीत **'विरह का जलजात जीवन', निराला** की **'गीतिका'** का गीत **'कौन तम के पार? (रे कह)'** आदि अनेक गीतों में आत्मसापेक्ष भावों की अभिव्यक्ति हुई है। **रामचन्द्र शुक्ल** सदृश समर्थ समीक्षक ने **निराला** और **महादेवी वर्मा** के गीतों के संबंध में लिखा है- 'संगीत को काव्य और काव्य को संगीत के अधिक निकट लाने का सबसे अधिक प्रयास निराला जी ने किया है।''[७] गीत लिखने में जैसी सफलता **महादेवी जी** को प्राप्त हुई वैसी और किसी अन्य को नहीं। न तो भाषा का ऐसा स्निग्ध और प्रांजल प्रवाह और कहीं मिलता है, न हृदय की ऐसी भावभंगी।''[८] छायावाद के इन वृहत्त्रयी कवियों के अतिरिक्त उस काल में **मोहन लाल महतो 'वियोगी', केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', दिनकर, जानकी वल्लभ शास्त्री आरसी प्रसाद सिंह, रामेश्वर शुक्ल अंचल, नरेन्द्र शर्मा** ने भी अच्छे गीत लिखे हैं।

छायावादकालीन गीतों के सर्वेक्षण एवं सम्मूल्यन से ज्ञात होगा कि छायावादी युग में गीतों के ढाँचे एवं स्वरूप में ध्यानाकर्षी परिवर्तन आए। ''कविता की तरह गीत के क्षेत्र में भी धीरे-धीरे प्रयोग प्रारंभ हुआ जिससे यह परम्परा सर्वथा विच्छिन्न तो न हो सकी, परन्तु परम्परा के अलगाव के बीज का वपन अवश्य इसमें हो गया। **निराला** ने **तुलसी** और **रवीन्द्र** की सीमाओं से गीति-विधा को मुक्त करने की दिशा में अनेक सफल प्रयोग किए। शास्त्र-सम्मत शैलियों से भिन्न लोकगीतों के अनुरूप ढ़ालकर आदिम गीतों की परम्परागत निरन्तरता को जीवित रखने का श्रेय **निराला** को ही है। यह बात नहीं कि **निराला** ने गीत-रचना के अनुशासन की स्पष्ट अवज्ञा की, बल्कि उन्होंने उसे स्वीकारते हुए भी गीतों में सहजता लाने के लिए उनके माध्यम को इतना लचीला और भावग्राही बनाने की चेष्टा की कि जिससे आधुनिक भावबोध को वहन करने में यह विधा स्खलित न हो जाए।''[९] छायावादकालीन गीतों में संस्कृतनिष्ठ शैली और कोमल एवं कान्त शब्दावली के प्रयोग अधिकतर हुए। इन्हीं कारणों से **'मंजीर'** के कीर्तनीय गीतकार **गिरिजा कुमार माथुर** ने इस प्रकार के गीतों की शैली को 'संस्कृतनिष्ठ शैली में लिखे अमूर्त प्रतिपाद्य वाले गीत' की संज्ञा दी है।

छायावाद और प्रगतिवाद की मध्यावधि में, जिसे **आचार्य शुक्ल** ने **'स्वच्छंद धारा'** का नाम दिया है, अनेक समर्थ गीतकार ऐसे पैदा हुए जिनके मन में छायावादी परम्परा के अन्धाधुन्ध अनुकरण के प्रति अरुचि जग गई और उनकी रचनाओं में भाषा और शैली दोनों दृष्टियों से नवीनता का आग्रह दिखाई पड़ा। "भाषा को बोलचाल की भाषा का नैकट्य प्राप्त कराया जाने लगा। इससे स्पष्टत: एक बड़ी हानि यह हुई कि छायावादी गीतों की उदात्तता तथा सूक्ष्मता के स्थान पर रोमानी भावना का गीतों में धड़ल्ले से व्यवहार होने लगा। **बच्चन, नरेन्द्र शर्मा, अंचल** तथा **नेपाली** के गीतों पर, विशेषत: मांसल गीतों पर नजर दौड़ाने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। इन गीतकारों ने **प्रसाद, महादेवी** और कुछ अंश में **निराला** के गीतों की एकान्त काल्पनिकता, अगोचरता, वायवीयता और वय: क्रम से आयी आध्यात्मिकता के स्थान पर मांसलता और जागतिकता को प्रश्रय दिया।" [१०] इस अवधि में जो आज उत्तरछायावाद या छायावादोत्तर काल से जाना जाता है, राष्ट्रीयता बोधक गीत भी लिखे गए। इन गीतों में स्वतंत्रता-संग्राम, पराधीनता से उत्पन्न हताशा, स्वतंत्रता-प्राप्ति की ललक, दासता से मुक्ति पाने की अभिलाषा, सामाजिक विषमता मिटाने के संकल्प की अभिव्यक्ति हुई है।' इस अवधि में गीतों को कविता के समानान्तर नई दिशा देने का प्रयास प्रारंभ हुआ। **अज्ञेय, शमशेर, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, भवानी प्रसाद मिश्र** ने गीतों के क्षेत्र में कतिपय प्रयोग किये। **त्रिलोचन** के **'सॉनेट'** इसके ज्वलंत प्रमाण हैं। फिर प्रयोगवाद का दौर शुरू हुआ। लेकिन इन प्रयोगवादी गीतकारों के नवीन प्रयोगों के बावजूद गीतों के रूप-विन्यास की नीरसता को पूर्ण रूप से मिटाया नहीं जा सका।" [११] इसके बाद तो नई कविता आ धमकी। नई कविता के तर्ज पर 'नई कहानी', 'नवगीत' आदि का आन्दोलन चला। प्रयोगवाद, नवगीत-आन्दोलन के पूर्व **बालकृष्ण शर्मा नवीन (उर्मिला) एवं दिनकर (रेणुका), नीरज** के गीत-संकलन प्रकाशित हो चुके थे, जिनमें परम्परा-निर्वाह के साथ राष्ट्रीय भावनाओं एवं समकालीन बोध को अच्छी अभिव्यक्ति मिली है।

स्वातंत्र्योत्तर गीतकाव्य का विकास वस्तुत: 'नवगीत' के रूप में ही हो रहा है। कुछ विद्वानों ने नवगीत के इतिहास को दो भागों में विभक्त किया है १९३१ से १९५० तक और १९५० के बाद। ऐसे विद्वान् १९३६ में प्रकाशित **निराला** की **'गीतिका'** काव्य-संग्रह में संकलित कविता जिसकी रचना १९३१ में ही हो चुकी थी- **'वीणा वादिनी वर दे'** की इन पंक्तियों में नवगीत के बीज ढूँढ़ते हैं- **"नव गति नव लय तालछंद नव/नवल कंठ, नव जलद मंद्र रव। नव नभ के नव विहग-वृन्द को। नव स्वर नव पर दे।"** १९५० तक की इस कालावधि को विद्वज्जन छायावादोत्तर गीतकाल या नवगीत का पूर्वपीठिका- काल कहते हैं। वास्तव में १९५० के बाद ही नवगीत का वर्तमान स्वरूप उभरता है जिसके ध्वजवाहक कवियों में **शम्भुनाथ सिंह, केदारनाथ सिंह, राजेन्द्र प्रसाद सिंह, देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' कुँअर बेचैन, राजेन्द्र गौतम, माहेश्वर तिवारी, वीर सक्सेना, रघुनाथ प्रसाद घोष, रामनरेश पाठक, ओम प्रभाकर, गोपी वल्लभ, सत्यनारायण, गुलाब खंडेलवाल, राजेन्द्र किशोर, शलभ श्रीराम सिंह** आदि के नाम लिए जा सकते हैं।

"नवगीत' को 'कविता' का पर्याय मानना बेमानी है। नवगीत की प्राथमिक विशेषता अशास्त्रीयता है। छायावादी गीत धीरे-धीरे शास्त्रीयता तक पहुँने लगा था। छायावादोत्तर काल में भी छायावादी संस्कार के गीत लिखे जाते थे। नवगीत ने इस दिनातीत संस्कार को उतार फेंकने का शोभन प्रयत्न किया है। .... छायावादी गीत में शिल्प एवं अभिव्यंग्य का महत्त्व था।

छायावादोत्तर गीतों में अभिव्यंग्य यद्यपि आधुनिकता-सापेक्ष हो गया किन्तु उसकी शास्त्रीयता यथावत् बनी थी। नवगीत ने इसके विरुद्ध आन्दोलन किया। नवगीत ने लोकचेतनान्विति को अधिक महत्त्व दिया है। इस प्रक्रिया में शब्द-प्रयोग एवं भावांकन दोनों धरातलों पर क्रान्तिपूर्ण प्रयोग हुए हैं। इस क्रम में नवगीत 'शास्त्रीय गीत' से उतरकर लोकगीत के समीप आ गया है। 'नवगीत' ने शास्त्रीय गीत एवं लोकगीत के मध्यवर्ती होने का कार्य किया है।..... नवगीत में सस्ती भावुकता को अपदस्थ कर मानव बोध को स्थापित किया गया है। विषय की दृष्टि से **नवगीत** और **नयी कविता** में अंतर नहीं है, यह अन्तर अभिव्यक्ति के धरातल पर ही स्वीकृत है।......... 'नवगीत' हिन्दी की दिनातीत गीत-विधा का पुनर्नवीकरण है, जो आधुनिक दृष्टिबोध से संबलित होने के कारण वर्तमान टूटन, विकेन्द्रण एवं विषाद का भी सफलता पूर्वक प्रतिनिधित्व करता है।''[१२]

नेपाली का रचना-काल १९३० से १९६३ तक का रहा है, इसलिए १९६३ के पूर्व की ही गीत-परम्परा पर दृष्टिपात कर गीत-परम्परा में उनके महत्त्वांकन का नातिदीर्घ प्रयास किया जा रहा है। वैसे तो **नेपाली** छायावाद युग के ही कवि हैं किन्तु छायावादोत्तर युग में ही उन्हें प्रसिद्धि और लोकप्रियता मिली, जिस कारण उन्हें छायावादोत्तर काव्यधारा का सुख्यात गीतकार माना गया है।

नेपाली ने जिस समय लिखना प्रारंभ किया उस समय हिन्दी-काव्य में छायावाद अपनी वैयक्तिकता की प्रवृत्ति के साथ पूर्णतः सक्रिय था। इस प्रवृत्ति ने भी उनकी गीतात्मक प्रतिभा को अपने योगदान से पल्लवित एवं पुष्पित किया। नेपाली का प्रथम काव्य-संग्रह **'उमंग'** १९३४ ई० में और छठा काव्यसंकलन **'नवीन'** १९४४ में प्रकाशित हुआ। उनका अंतिम काव्यसंग्रह **'हिमालय ने पुकारा'** १९६३ में प्रकाशित हुआ। इस अवधि (१९४४-१९६३) में वे मुख्यतः फिल्मी गीतों की रचना में लगे रहे। कालक्रम से प्रकाशित शेष काव्यकृतियाँ हैं- पंछी (१९३४), रागिनी (१९३५), नीलिमा (१९३९), पंचमी (१९४२)।

नेपाली मूलतः गीत-विधा के समर्थ रचनाकार रहे हैं। इसलिए १९३० ई० से लेकर १९६३ तक की कालावधि में हिन्दी काव्य-जगत् विशेषतः गीत-विधा में जो भी विषय-वस्तु या शिल्प की दृष्टि से परिवर्त्तन हुए वे सभी उनके गीतों में देखे जा सकते हैं। 'गीतों के राजकुमार' अभिधान से समलंकृत कवि **नेपाली** को विद्वानों ने एकमत एवं एक स्वर से हिन्दी का प्रतिनिधि गीतकार माना है। गीतात्मकता को वे भारत की आत्मा मानते हैं-

> **''यह गीतों का देश है जहाँ चरवाहा विरहा गाता है,**
> **सुख हो, दुःख हो सौन्दर्य यहाँ, गीतों में गाया जाता है।''** [१३]

इसलिए वे तुकविहीन कविता को गद्य कह कर काव्य के परिसर से बहिष्कृत कर देते हैं-

> **लाख चला अतुकांत गद्य लो, तुम कविता के भेष में**
> **चल न सकेगा नीरस पद तुलसी-मीरा के देश में।** [१४]

''हिन्दी में छायावाद के ठीक बाद और प्रगतिवाद के समानान्तर जिन महत्त्वपूर्ण कवियों ने राष्ट्रीय भावधारा को ही प्रमुख आधार बनाकर जोश, जवानी और उत्साह-उमंग के गीत लिखे, उनमें बिहार के **रामधारी सिंह दिनकर** और **गोपाल सिंह नेपाली** के नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य हैं। दोनों ने समय-समय पर देश की विविध समस्याओं को अपने गीतों का विषय बनाया और वैयक्तिक सफलता-असफलता की असम्बद्धता के संकीर्ण घेरे से इस विधा को

मुक्ति दिलायी। छायावादी उपचारवक्रता से देह झाड़कर बच निकलने के कारण इनके गीत जन-जन के कण्ठ बन सके तथा लोकप्रियता के मामले में इन्होंने पहले के सारे रिकार्ड ध्वस्त कर दिये।''[१५]

नेपाली मुख्यतः राष्ट्रीय भावधारा के कवि माने गए हैं। इस क्षेत्र में वे **भारतेन्दु, मैथिलीशरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', नीरज, दिनकर, शिवमंगल सिंह 'सुमन'** आदि की कोटि में परिगणनीय हैं। उनकी सम्पूर्ण रचनाओं में राष्ट्रीयता से लबरेज रचनाएँ परिदर्शनीय हैं। वे अपने राष्ट्रीय भावनाओं से अनुप्रेरित गीतों के माध्यम से सदा अलख जगाते रहे हैं। दो-तीन गीत निदर्शनार्थ प्रस्तुत हैं-

- **हुआ देश खातिर जन्म हमारा / कि कवि हैं तड़पना करम है हमारा / कि कमजोर पाकर मिटा दे न कोई / इसी से जगाना धरम है हमारा।''**[१६]
- **''यहाँ न कोई राधा रानी, वृदावन, वंशीवाला / तू आँगन की ज्योति बहन री, मैं घर का पहरे वाला।''**[१७]
- **''है अपूर्व यह युद्ध हमारा, हिंसा की न लड़ाई है / नंगी छाती की तोपों के ऊपर विकट चढ़ाई है / तलवारों की धार मोड़ने गर्दन आगे आई है / सिर की मारों से डण्डों की होती यहाँ सफाई है।''**[१८]

'हिमालय ने पुकारा' संग्रह में संकलित गीत **'मेरा धन है स्वाधीन कलम'**[१९] तो नेपाली की राष्ट्रीय चेतना एवं वैयक्तिक निर्भीकता को सर्वांग रूप में प्रस्तुत कर नेपाली के अहं का विस्तार करता है।

नेपाली की गीतों राष्ट्रीयता का स्वर प्रमुख अवश्य रहा किन्तु **पंत** की भाँति उनके प्रकृति परक गीतों में भी वही ऊर्जा और उत्साह है। प्रकृति सम्बन्धी उनकी रचनाओं को देखकर ही प्रकृति के सुकुमार कवि **पंत** ने लिखा है- ''आपका कवि कण्ठ, निर्मल निर्झर के समान, अवश्य ही मंसूरी की तलहरी में फूटा होगा, इसलिए आपकी रचनाओं में जो उन्मुक्त वातावरण एवं स्निग्ध आलाप मिलता है वह पाठक के हृदय की खिड़की खोलकर, **'नरम दूब'** बिछी राहों से **'विलास की मंसूरी'** से **'जंगल की मंसूरी'** में ले जाकर-प्रकृति की मनोरम क्रीड़ा-भूमि में छोड़ देता है, जहाँ जंगल की हरियाली अंचल पसार कर उसका स्वागत करती है।'' प्रकृति से संबंधित ऐसे गीतों की संख्या बहुत है, इसलिए स्थालीपुलाकन्यायवत् मात्र एक-दो ही स्थल निवेदित हैं- **''मैं प्रभात का पहला झोंका। मैं चला पवन बनकर शीतल-शीतल। मैं उड़ा चला निशि का खिसका आँचल / मेरे स्वर में जगी कुंज की गलियाँ / मुझसे लगकर हँसी नवेली कलियाँ / मैं चला झड़ी पँखड़ियों को चुनता / निर्झर था मेरा गीत कहीं सुनता।''**[२०]

छायावाद के प्रतिनिधि कवियों ने प्रकृति पर चेतना का आरोप करते हुए उसे सजीव माना है। नेपाली के प्रकृति विषयक गीतों में यह प्रवृत्ति विद्यमान है- **''पीपल के पत्ते गोल-गोल / कुछ कहते रहते डोल-डोल।''**[२१] और **''आ मधुप मुकुल मन खोल-खोल / द्रुम के पके दाड़िम गोल-गोल / तरू के नव पल्लव डोल-डोल / वन-वन के पंक, बोल-बोल।''**[२२]

नेपाली ने जिस समय लिखना शुरू किया वह छायावाद का काल था। छायावादी कवियों में वैयक्तिकता की प्रवृत्ति प्रबल थी। वैसे भी गीत की रचना-प्रक्रिया में वैयक्तिकता में व्यापकता और व्यापकता में वैयक्तिकता है। एक उदाहरण देखें- **"जब-जब जनता पर दुःख की बदली छाई है। तब-तब हमने विप्लव बिजली चमकाई है। मानवता का परिहास बदलने वाले हैं। हम तो कवि हैं, इतिहास बदलने वाले हैं।"** [२३]

"इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि गीतिकाव्य या गीत का जन्म ही लोकगीतों से हुआ होगा। अगर न भी हुआ हो, तब भी लय, स्वर और व्यंजना के लिहाज से लोकगीतों ने ही गीत को अधिक रससिक्त और गेय के साथ श्रव्य बनाया। हिन्दी के अनेक गीतकारों ने लोकगीत की धुनों पर गीतों की रचना की। अतः हिन्दी-गीतों का माधुर्य लोकगीतों की ही देन कहा जाएगा।" [२४] नेपाली भी इसके अपवाद नहीं। एक प्रसंग निवेदित है- **"मृगनैनी पिक बैनी तेरे सामने बाँसुरिया झूठी है। रग-रग में ऐसा रंग भरा, रंगीन चुनरिया झूठी है।"** [२५] **'हिमालय ने पुकारा'** के इस गीत में भी नेपाली लोकभाषा और लोकगीतात्मकता के अधिक निकट हैं- **"मौसम है रंगरेज, गुलाबी गाँव-नगरिया रंग दे रे। तीस करोड़ बसे धरती की, हरि चदरिया रंग दे रे।"** [२६]

जब तक गीतकार का व्यक्ति अंतरतम की बात कहता रहा तो उसमें उसका निजत्व अधिक होता था। वह प्रकृति-सौन्दर्य या अपनी व्यथा-कथा का बयान ही अधिक करता रहा। लेकिन जब से उसका प्रगाढ़ संबंध वर्तमान से हुआ, तो उसने संत्रास, कुंठा, दुःख-दर्द, निराशा, टूटन, रिश्तों के भंग होने का दर्द गाया। उसका निजी दर्द ही दुनिया का दर्द बना हुआ है। वह सही अर्थों में रचना को सार्वजनीन स्वरूप देना ही अपना धर्म मानता है।' इस क्रम में ही उसका ध्यान सामाजिक विषमताओं एवं विद्रूपताओं पर ठहरकर पड़ताल करने लगता है तथा वह उन्हें उन्मूलित करने का जन-आह्वान करता है। एक स्थल देखें- **"अब घिस गई समाज की तमाम नीतियाँ / अब घिस गई मनुष्य की अतीत रीतियाँ / हैं दे रहीं चुनौतियाँ तुम्हें कुरीतियाँ। निज राष्ट्र के शरीर के सिंगार के लिए। तुम कल्पना करो नवीन कल्पना करो। तुम कल्पना करो।"** [२७]

नेपाली मूलतः प्रेम और प्रकृति के कवि रहे हैं। उनके प्रेमपरक गीतों में हृदय की रसधारा का सर्वत्र उत्प्लावन हुआ है- **"डोरी के दो मुँह जैसे ही प्राण और तुम प्रिये। जग-जीवन, यौवन अभिलाषा की मृदु-मृदु उद्रेक लिए।"** [२८] 'प्रेम को प्राण का उद्योग' कहते हुए वे गाते हैं- **"ध्यान का गुणगान कर, मृदु प्रेम का यह रोग रे! / शूल पथ के फूल हैं, यह प्राण का उद्योग रे।"** [२९]

बचपन से ही गीत नेपाली के तन-मन में बसा-रसा था, इसलिए वे जीवन पर्यन्त गीत ही गाते रहे। 'विकास' में १५ वर्ष की उम्र वाले बालक नेपाली की प्रकाशित कविता **'तोता'** तथा **'बंदरमामा'** में उनकी गीतिमयता के स्पष्ट दर्शन होते हैं। एक-एक अवतरण देखें-' **आ जा तोता, आ जा तोता / खुला पींजड़ा आ जा तोता / समझो इसको अपना खोंता / इधर-उधर क्यों खाते गोता। इसमें आते तो सुख होता। आ जा तोता, आ जा तोता।"** ....

**बन्दर मामा / मेरी बगिया में तुम आना। खाना, फल मीठे रसवाले।
रहना मौज उड़ाना / छोड़ भटकना डाली-डाली। फल से खाली,
काँटे वाली, इस बगिया की छटा निराली। जरा देख तो जाना।''** [३०]

१९४४ से लेकर १९६०-६१ तक **नेपाली** फिल्मी दुनिया में रहे जहाँ **नेपाली** ने लगभग ५२ फिल्मों के लिए तीन सौ से अधिक गीत लिखे हैं। इसलिए गीतकार **नेपाली** के अवदानों में इसे शुमार न करना न्यायोचित नहीं होगा। क्योंकि इनमें भी साहित्यिकता, मार्मिकता और हार्दिकता है। जब सिनेमा-संसार में नेपाली का पदार्पण हुआ उस समय (१९४४) में फिल्मों में नौटंकी शैली के गीतों का प्रचलन था। **नेपाली** ने अपने गीतों द्वारा फिल्मी-गीतों का संस्कार किया, उन्हें जीवन-दर्शन की अनुभूतियों से जोड़ा। ''उन्होंने हर भाव और भंगिमा के गीत लिखे किन्तु उनके
शृंगारिक और भक्तिपरक गीत विशेष रूप से सराहे गये। नेपाली के शृंगारिक गीतों में संयोग की सरसता भी है और वियोग की विह्वलता भी। उनमें प्रेमजन्य आकर्षण भी है और भंगिमाओं की व्यंजना भी। **'नागचम्पा'** का एक उदाहरण द्रष्टव्य है- **''किसी छलिया के नैनों के जाल में / मोरे नैना उलझ गये मैं क्या करूँ? मैंने सबसे छिपाया जिस बात को, उसे सब कोई समझ गए तो मैं क्या करूँ।''** गोपन का ऐसा प्रकटीकरण अन्यत्र दुर्लभ है। इस गीत में प्रेम की मादकता भी है, गोपन का प्रयास भी है और प्रेम के प्रगाढ़ होने पर निस्संकोच होने की मानसिकता भी है।'' [31] इसी प्रकार के भावव्यंजक शृंगारिक गीत फिल्म **'तुलसीदास'**, **'राजकन्या,' 'नागपंचमी'**, एवं **'गजरे'** आदि में पर्याप्त लोकप्रिय हुए थे। इन फिल्मों में आए फिल्मी गीतों के देखने से ऐसा लगता है कि इनमें चाह है, चाहक है, आह है, कसक है, तन्मयता है, मार्मिकता है, याद है और फिरयाद भी है। ये गीत दर्शकों को नया भावबोध कराते हैं, उनकी अनुभूतियों से तादात्म्य स्थापित करते है।'' [32]

भक्तिपरक फिल्मों के लिए रचित भक्ति-गीतों में भी भावव्यंजकता के साथ भक्त की दीनता और साधक का आत्मनिवेदन नवीन एवं प्रभविष्णु ढंग से प्रस्तुत है। **'हर हर महादेव'**, **'पवनपुत्र'**, **'नरसी भक्त'**, **'नजराना'**, **शिवभक्त** प्रभृति फिल्मों में प्रस्तुत भक्ति-गीतों में इतनी भावप्रवणता, मार्मिकता, सांगीतिकता है कि फिल्म से यदि इन गीतों को निकाल भी दिया जाए तो स्वतंत्र भक्ति-गीत के रूप में इनकी महिमा और गरिमा में कोई अन्तर नहीं आयेगा। **'नरसी भक्त'** एक गीत देखें-

''मंदिर मंदिर मूरत तेरी, फिर न दीखे सूरत तेरी / युग बीते, न आई मिलन की पूरनमासी रे / दर्शन दो घनश्याम आज मेरी अँखियाँ प्यासी रे।'' इस गीत में एक भक्त की आतुरता, निष्ठा और तन्मयता का मणिकांचन संयोग देखते ही बनता है। एवंविध स्पष्ट है कि **'नेपाली'** ने अपने गीतों के माध्यम से फिल्मी गीत-रचना को एक नई भंगिमा दी, एक नया अर्थबोध दिया और एक समर्थ साहित्यिक परिवेश दिया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि एक फिल्मी गीतकार के रूप में **नेपाली** की भूमिका सार्थक, जीवन्त और ऐतिहासिक रही है।'' [33]

हिन्दी-गीतों एवं गीतकारों की परम्परा में **नेपाली** निर्विवादतः अति विशिष्ट स्थान के समर्थ अधिकारी हैं। एक ओर उनमें **तुलसी** के भक्तिगीतों की तन्मयता है, **सूर** और **विद्यापति** की

भावप्रवणता और विदग्धता है तो दूसरी ओर **गीतगोविन्दकार** के गीतों की मादकता, **महादेवी** के गीतों की रागात्मकता एवं **पंत** के गीतों की उन्मुक्तता, तथा **दिनकर** के गीतों की ऊर्जस्विता है।

नेपाली ने अपने गीतों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि 'गीत की जनवादी आकृति, सार्वजनीनता और उसकी बुनियादी विशेषताएँ गीत को अमरत्व देती हैं। गीतकार दिशाएँ भी बदलता है तो कथ्य के मुकाम पर वह गीत के प्रति आस्थामय होता है।' □

लीलाधाम, ३/३०७ न्यू पाटलिपुत्र कॉलनी
पटना - ८०० ०१३

संदर्भः

१. हिन्दी साहित्य परिषद्, अहमदाबाद - 'भाषा-सेतु' त्रैमासिक - अंक २० पृष्ठ - २०
२. हिन्दी साहित्य परिषद्, गर्दनीबाग, पटना - 'रश्मि' त्रैमासिक का नवगीत अंक - पृष्ठ - ३३
३. A History of Sanskrit Literature - P. 29
४. हिन्दी साहित्य संघ, गर्दनीबाग, पटना - त्रैमासिक 'रश्मि' - नवगीत अंक - पृ० २
५. डॉ० भगीरथ मिश्र - नया काव्यशास्त्र (प्र० सं०) पृ० १६२
६. हिन्दी साहित्य संघ, पटना - त्रैमासिक 'रश्मि' - नवगीत अंक - पृ० ३
७. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास -उन्नीसवाँ पुन मुद्रण - पृ० ४८४
८. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास -उन्नीसवाँ पुनर्मुद्रण - पृ० ४८९
९. हिन्दी साहित्य संघ, पटना - त्रैमासिक 'रश्मि' - नवगीत अंक पृ० ४
१०. हिन्दी साहित्य संघ, पटना - त्रैमासिक 'रश्मि' - नवगीत अंक पृ० ५
११. हिन्दी साहित्य संघ, पटना - त्रैमासिक 'रश्मि' - नवगीत अंक पृ० ६
१२. हिन्दी साहित्य संघ, पटना - त्रैमासिक रश्मि - नवगीत अंक - पृष्ठ ५९-६१
१३. 'मुस्कान पुरानी कहाँ हुई' गीत - 'हिमालय ने पुकारा' - पृष्ठ १२
१४. "हिमालय ने पुकारा" - प्रकाशकीय वक्तव्य - पृष्ठ १२
१५. सं० डॉ० बलराम मिश्र - 'नेपाली की काव्य चेतना' - प्र० सं० - पृष्ठ - २८
१६. 'हिमालय ने पुकारा' - पृष्ठ १०१
१७. 'रागिनी' पृ० ६१
१८. 'उमंग' - पृष्ठ १०१
१९. 'हिमालय ने पुकारा' - पृष्ठ ९०
२०. 'नवीन' - पृष्ठ ११
२१. 'उमंग' - पृष्ठ ६३
२२. 'उमंग' - पृष्ठ १३
२३. 'हिमालय ने पुकारा' - पृष्ठ - ९२

२४. हिन्दी साहित्य परिषद्, अहमदाबाद-त्रैमासिक 'भाषा-सेतु' अंक - २०, पृष्ठ २०
२५. दृष्टि (नेपाली विशेषांक) पृष्ठ - ६८
२६. 'हिमालय ने पुकारा' - पृष्ठ ६८
२७. 'नवीन' पृष्ठ १
२८. 'रागिनी' - पृष्ठ १६
२९. 'रागिनी' - पृष्ठ ५८
३०. विकास - वर्ष १ नवम्बर १९३१ संख्या ५ पृष्ठ १४५
३१. डॉ० बलराम मिश्र - नेपाली की काव्य-चेतना (प्र० सं०) पृष्ठ ९२
३२. डॉ० बलराम मिश्र - नेपाली की काव्य-चेतना (प्र० सं०) पृष्ठ ९३
३३. डॉ० बलराम मिश्र - नेपाली की काव्य-चेतना (प्र० सं०) पृष्ठ ९५

अलक्षित राष्ट्रकवि गोपाल सिंह नेपाली

• डॉ० बलराम मिश्र

राष्ट्रीय चेतना भारत की आत्मचेतना है, जिसके फलस्वरूप हमारे ऋषियों ने इस वेद-मंत्र की उद्घोषणा की है-

"माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः ।"
"माता पृथिवी महीयम्"।

यह राष्ट्र-चेतना अन्तःसलिला की तरह जनगण के मन-प्राण में निरंतर प्रवाहित है। कवि-मनीषियों ने इस राष्ट्र-चेतना को निरंतर मुखरित किया है। इसके द्वारा जनमानस को निरंतर उद्वेलित किया है। आधुनिक युग के आरम्भ में सर्वप्रथम **भारतेन्दु** का राष्ट्रीय स्वर सर्वाधिक आकर्षक रूप में उपस्थित हुआ है। उन्होंने राजशक्ति और राष्ट्रभक्ति दोनों की अभिव्यक्ति की है। किन्तु उनकी आत्मा का स्वाभाविक स्वर राष्ट्रीयता के स्वर में ही झंकृत है। उनकी राजभक्ति परिस्थिति एवं परिवेश की विवशता के कारण प्रकट हुई है, जो स्वाभाविक भी नहीं है। **मैथिलीशरण गुप्त की भारत भारती** ने भारतीय संस्कृति चेतना को सर्वाधिक मुखर किया है। **सुभद्रा कुमारी चौहान, माखन लाल चतुर्वेदी- भारतीय आत्मा, दिनकर** ने ओजपूर्ण वाणी में राष्ट्रभावना की अभिव्यंजना में भारतीय जन-मानस को विदेशी शासन के विरुद्ध उत्प्रेरणा दी है। **पंत** ने भारत भूमि, भारतीय संस्कृति की करुण माँ की- भारतमाता ग्रामवासिनी- प्रस्तुत की है, तो उसकी मधुर प्राकृतिक छवि का अंकन भी किया है। **निराला** ने भारत को सुख-समृद्धि से भर देने के लिए भारतमाता का भव्य रूप उपस्थित किया है। **प्रसाद** ने सांस्कृतिक चेतना के साथ ही भारतभूमि की चिर शाश्वत राष्ट्र प्रवृत्ति का महान् चित्र उपस्थित करते हुए भारतीय स्वतंत्रता के निमित्त अमर्त्यवीर पुत्रों का आह्वान किया है। **गोपाल सिंह नेपाली** में एक ओर ग्राम्य-जीवन के प्रति आकर्षण है, तो दूसरी ओर सम्पूर्ण भारत के धर्म-प्रांत-जाति को एक भावनात्मक सूत्र में आबद्ध करने का सफल प्रयास भी परिलक्षित होता है। उन्होंने अति मुखर, उग्र-शौर्यपूर्ण स्वरों में शत्रुओं से जूझने के लिए भारत के नवनिर्माण के लिए, नवीन कल्पना के लिए-शौर्यभाव को जनमानस की उद्वेलित करने की सफल चेष्टा की है।

राष्ट्र के कुछ आवश्यक, अनिवार्य, महत्त्वपूर्ण तत्व हैं- राष्ट्रभूमि, राष्ट्रीय सभ्यता, संस्कृति, समष्टिजनमानस, शासन, शासन की सम्प्रभुता आदि।

नेपाली ने इन सभी को अपने काव्य का प्रसाद दिया है।

नेपाली के काव्य के मुख्य पक्ष हैं-सौंदर्य चेतना, राष्ट्रीय चेतना तथा भक्ति चेतना। इनमें कवि की सहजात प्रवृत्ति निरन्तर सक्रिय रही है, रमण करती रही है। इसके लिए परिवेश और राष्ट्रीय परिस्थितियाँ भी सतत् सहयोग देती रही हैं. कवि का बचपन सैनिक शिविरों में व्यतीत हुआ था, जहाँ उसके पिताश्री एक सक्रिय सैनिक थे। बचपन में एक ओर बन्दूकों की आवाज उसे उत्प्रेरित करती थी, तो दूसरी ओर देहरादून की प्राकृतिक सम्पदा एवं परिवेश से उपलब्ध **'मधुर बेर'** बालमन को सहज ही आकृष्ट कर लेते थे-

देहरादून के मधुरबेर। जंगल में मिलते ढेर-ढेर ।
पड़ता लाने में बड़ा फेर, देहरादून के मधुर बेर ।
दूँ मैं बिखेर रे, कई सेर, देहरादून के मधुर बेर ॥

कवि ने कहा है कि मेरे हाथ में यदि कलम न होती तो बन्दूक अवश्य होती। इस प्रवृत्ति के कारण कवि **''वन मैन आर्मी''** बनकर चीनी आक्रमणकारियों के विरुद्ध काव्यमय ललकार देते हुए निकल पड़ा था और इसी अभियान में अपने जीवन को राष्ट्र के चरणों में अर्पित कर दिया था। देहरादून की मधुर प्रकृति ने और ग्रामीण भोले-भाले नर-नारियों ने उसके मन में सौंदर्य-चेतना का बीजारोपण किया था। कवि सहज ही ग्रामीण परिवेश के प्रति आकर्षित है। भारत गाँवों का देश है। आज के वैज्ञानिक विकास के बाद भी यह गाँवों का ही देश बना हुआ है। कवि भारतमाता के रूप की कल्पना, भारतमाता के सहज-सरल पुत्रों के रूप में ग्रामजन को ही उपस्थिति करता है। शहर में रहकर भी कवि बाहरी आकर्षण से अभिभूत नहीं हो पाया है। उसकी बाल्यावस्था का अधिकांश चम्पारण के बेतिया नगर में व्यतीत हुआ था, जहाँ उसका जन्म ही नहीं हुआ था। बल्कि यह शैशव की क्रीड़ा भूमि भी बनी थी, किशोरावस्था से यौवनकाल तक कवि का आरम्भिक विकास बेतिया में ही हुआ था। यह छोटा शहर आज भी शहर कम ग्राम ही अधिक प्रतीत होता है। कालीबाग मंदिर की देवमूर्त्तियों ने शिशु रूप में अज्ञात रूप से भक्ति-भाव भर दिया था, तो ग्राम जीवन के परिवेश ने उसके मन-प्राण में सौंदर्य और प्रेम का सृजन किया था। कवि का सहज-सरल अभिधात्मक भाषा में प्रयुक्त 'उमरिया, डगरिया, बिजुरिया, कमरिया, नजरिया आदि शब्द इसके संकेतक हैं।

राष्ट्रीय कवियों में राष्ट्रीय चेतना से सर्वाधिक उद्वेलित **कविवर नेपाली** के काव्य का समुचित प्रसार-प्रसार तथा मूल्यांकन नहीं हो सका, जिसके कारण यह **'राष्ट्रकवि'** 'उलक्षित' ही रह गया। इसके कुछ महत्त्वपूर्ण पक्ष भी हैं। पहला प्रबल पक्ष यह है कि कवि में आत्मसम्मान का भाव सर्वाधिक प्रबल है। उसने आत्मसम्मान बेचा नहीं है। वह किसी के सामने झुकना नहीं चाहता। न तो उसे सत्ता की चाह है, न महलों में रहने की अभिलाषा ही है। फलतः समाज के ठेकेदारों से उसे उपेक्षा मिली है-

तुझ-सा लहरों में बह लेता, तो मैं भी सत्ता गह लेता।
ईमान बेचता चलता तो, मैं भी महलों में रह लेता।
मेरा धन है स्वाधीन कलम।

स्वाधीन कलम वाले इस विद्रोही कवि का यह स्वभाव उसके बचपन-किशोरावस्था से ही सक्रिय रहा है, जिसके कारण उसे राज उच्च विद्यालय, बेतिया से प्रवेशिका परीक्षा के निमित्त उत्पेषित नहीं किया गया और जीविका के क्षीण साधन 'राज-प्रेस' की नौकरी से भी हाथ धोना पड़ा, किन्तु कवि ने कहीं भी आत्मसम्मान बेच कर सौदा नहीं किया। भले ही स्वार्थी तत्त्वों ने उसकी उपेक्षा की, किन्तु जनमानस ने उसे असीम प्यार दिया, अपने हृदय के सिंहासन पर कवि को बिठाया। ईमान न बेचने की घोषणा करने वाले कवि के मन में भी एक बार महलों में रहने की मृगतृष्णा जाग्रत हुई थी, ᅟर वह सिनेमा की चकाचौंध भरी दुनिया की ओर आकृष्ट हुआ

था। कवि सिनेमा के गीतों में भी कविता करने लगा था। टके में बिकने वालों की प्रतिस्पर्धा में कवि टिक नहीं पाया महलों में रहने की अभिलाषा धूलि धूसरित हो गयी, किन्तु उसने ईमान नहीं बेचा। इस काल में भी उसकी कविता सुगबुगाती रही, करवट बदलती रही और पत्र-पत्रिकाओं का आर्कषण बनी रही। इसी बीच चीन ने भारत की पवित्र भूमि पर आक्रमण कर दिया और कवि **'वन मैन आर्मी'** बनकर युद्ध के निमित्त भारत के अमर्त्यवीरों को उत्प्रेरित करने, ललकारने निकल पड़ा।

शंकर की पुरी, चीन ने सेना को उतारा।
चालीस करोड़ों को, हिमालय ने पुकारा।
हो जाए पराधीन नहीं गंग की धारा।
गंगा के किनारों को शिवालय ने पुकारा।

कवि की आस्था है कि-

जो शिव का पुजारी है, शिवालय है उसी का,
जो हिन्द में जन्मा है, हिमालय है उसी का।

कवि ने भारतमाता की भव्य कल्पना की है, जो हिमालय ने कन्या-कुमारी, पंजाब-गुजरात से बंगाल तक का भव्य बिम्ब उपस्थित करती है-

गंगा लेकर चली अर्घ्यजल, यमुना लेकर फूल,
सागर लेने चला उमड़कर, जननी की पग-धूल।
भारतमाता के मंदिर में, आज जननि पद पूजन।

कवि की आत्मा राष्ट्रीय भावना से परिपूर्ण है। वह अपने को हिमालय का स्वच्छन्द गायक मानता है-

मैं गायक हूँ स्वछन्द हिमालय का,
मैं पथिक सदा प्यासा, गंगा जल का,
गिरिराज हिमालय मेरा है प्रहरी,
प्रेमांजलि मेरी सागर की लहरी।
मैं इसी देश की मिट्टी का पुतला।
इसको जिसने कुचला, मुझको कुचला।
मेरी स्नेहमयी आँखों में देखो,
श्यामल यमुना का निर्मल जल उछला।

कवि की दृष्टि में ग्राम-नगर, सम्पूर्ण भारत का चित्र उपस्थित है। वह ग्राम जीवन को अधिक स्नेह दे पाता है-

पौ फटते ही चमक उठे जब, गाँव खेत खलिहान।
कँधे पर हल डाल कुटी से, चला गरीब किसान।

उसके स्वेद सधिर ने सींची जल बन क्यारी-क्यारी,
जैसे उसकी मुट्ठी से ही, निकली फसलें सारी।"

लेकिन कवि को इस बात की मार्मिक व्यथा है कि श्रमिक पिस रहे हैं और सामंती वर्ग उनका निरंतर शोषण करता जा रहा है। इसलिए उसकी अभिलाषा है कि-

मुसकान ही नहीं, कपोल अश्रु भी हँसे,
ये हँस रहीं अटारियाँ, कुटीर भी हँसे।

लेकिन वास्तविकता कितनी भिन्न है। गरीबों को न शिक्षा मिल रही है, न उनका स्वास्थ्य सुधार रहा है, न उन्हें भर-पेट भोजन मिल पाता है, न पूरे अंग वस्त्र। आवास और निवास का तो निशान नहीं है, क्योंकि-

उथला-उथला हो गया है, गाँव का कुँआ।
सारा पानी पी गया है, आग का धुँआ।
ठोकरों के सामने लुढ़क रहे हैं डोल,
कोयला और राख में, जिन्दगी का मोल।

शोषण के इसं भयानक ताण्डव से मुक्ति प्रार्थना, निवेदन, गुहार, पुकार से संम्भव नहीं है। इसके लिए संघर्ष आवश्यक है। कवि ने स्वतंत्रतापूर्व नवीन भारत बनाने की नवीन कल्पना की थी और प्रेरणा दी थी कि अश्रु बहाने से भारत नया नहीं बन सकता है इसके लिए संघर्ष करने की ही आवश्यकता पड़ेगी।

जंजीर टूटती न कभी अश्रुधार से,
दुःख-दर्द दूर भगते नहीं दुलार से।
हटती न दासता, पुकार से, गुहार से।

कवि यह जानता है कि-

जो काटता प्रगाढ़ घटा वक्रइन्दु वह।

इसके निमित्त कवि की भावना सर्वदा उद्वेलित रही है-

अब घिस गयी, समाज की तमाम नीतियाँ,
अब घिस गयीं, मनुष्य की अतीत रीतियाँ,
हैं दे रहीं चुनौतियाँ, तुम्हें कुरीतियाँ,
निज राष्ट्र के सिंगार के लिए,
तुम कल्पना करो, नवीन कल्पना करो।

कवि को इस बात की वेदना है कि-

खा-खा के मरती है दुनिया,
कितने बेखाए जीते हैं।

यह हाहाकार सर्वत्र है। कोई सुखी नहीं है। गरीब निरंतर गरीबी में ही आकण्ठ डूबा है। विकास का ढोंग सर्वत्र है। सर्वत्र देश की विडम्बना का ही आधिपत्य है-

घनश्याम कहाँ जाकर बरसे, हर घाट गगरिया प्यासी है।
उस ओर ग्राम, इस ओर नगर, चहुँ ओर नजरिया प्यासी है।
धरती प्यासी, परती प्यासी, प्यासी है आस लगी खेती,
जब ताल-तलैया भी सूखी है, क्या पाये प्यास लगी रेती।
बागों की चर्चा कौन करे, जब यहाँ डगरिया प्यासी है।

भारत भूमि के प्रति जो महान श्रद्धा कवि के हृदय में हैं, वह राष्ट्रभक्ति के स्तर तक पहुँच चुकी है, जिसके कारण कवि कहता है-

यही है जग का प्यारा देश, देश का यही प्रान्त वीरान,
यही है दलितों का संसार, यहीं पर रहते हैं भगवान।
फूस का यहीं बसा घाट बार, प्रकृति का यही सदन अभिराम।
यही है सब तीर्थों का तीर्थ, यहीं पर नर देवों का धाम॥

अब भारत स्वतंत्र है, किन्तु परतंत्रता की विडम्बना का सर्वत्र साम्राज्य है। हमने स्वतंत्रता तो प्राप्त कर ली है किन्तु स्वतंत्रता को बचाना अभी तक सीख नहीं पाये हैं। इसीलिए कवि चेतावनी देता है-

तन की स्वतंत्रता चरित्र का निखार है। मन की स्वतंत्रता विचार की बहार है।
घर की स्वतंत्रता समाज का सिंगार है। या देश की स्वतंत्रता अमर पुकार है।
टूट कभी न तार यह अमर पुकार का।

और सावधानी इसमें हैं कि हम सदा ध्यान में रखें कि-

हम थे अभी-अभी गुलाम, यह न भूलना,
करना पड़े हमें सलाम, यह न भूलना,
रोते फिरे उमर तमाम, यह न भूलना,
था फूट का मिला इनाम, यह न भूलना,
बीती गुलामियाँ लौट आए न फिर कभी,
तुम भावना भरो, स्वतंत्र भावना भरो।

राष्ट्र के प्रति अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा-भक्ति को समर्पित करते हुए कविवर गोपाल सिंह नेपाली ने मातृभूमि की रक्षा के निमित्त वीरों का आह्वान करते हुए मातृभूमि के धूलि कणों का अंश अपने को बना लिया। इस 'अलक्षित राष्ट्रकवि' को शत् बार नमन् है। □

आलोक भारती, बेतिया
(बिहार)

नेपाली की प्रेम-भावना

• डॉ० सतीश कुमार राय

अपनी सहज अभिव्यक्ति, तीव्र अनुभूति और प्रखर सौन्दर्य-चेतना से आधुनिक हिन्दी-कविता को एक नयी गीति भंगिमा देकर उसे लोकप्रिय बनाने का श्रेय जिन कवियों को दिया जाता है, उनमें गोपाल सिंह नेपाली भी एक हैं। नेपाली की कविता उमंग की कविता है, प्रेम और सौन्दर्य की कविता है। वह जीवन के प्रति गहरे विश्वास की कविता भी है। इसलिए उसमें पलायन का भाव नहीं है, मस्ती और जोश के स्वर हैं।

नेपाली की काव्य-यात्रा १९३० ई० के आस-पास प्रारम्भ होती है और १९३४ ई० में प्रथम काव्य-संग्रह 'उमंग' के प्रकाशन के पूर्व उनकी दशाधिक कविताएँ राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी थीं।[१] अपनी काव्य-यात्रा का प्रारम्भ नेपाली प्रेम का पाथेय लेकर करते हैं। वे स्पष्ट स्वीकार भी करते हैं-

"जीवन में क्षण-क्षण कोलाहल, ज्यों सुख त्यों दुःख, सुख-दुःख समान,
आती सन्ध्या जाता विहान, जाती सन्ध्या आता विहान,
इसलिए जगत् में दो ही तो कुछ शांति कभी देने वाले-
है एक प्रकृति की मृदुल गोद, दूसरा प्रेम का मधुर गान।"[२]

'व्यापक अर्थ में, किसी के प्रति भी प्रसन्नतामय गम्भीर आकर्षण का भाव प्रेम का अनुराग कहलाता है। संकुचित अर्थ में, वह केवल दाम्पत्य प्रेम या रति के लिए प्रयुक्त होता है। ..... इसका आदर्श रूप वह है, जिसमें प्रेमी प्रेम-पात्र से किसी भी आदान की आकांक्षा किए बिना उसके कल्याण के लिए अपना जीवन अर्पित कर देता है। इसे आत्मिक प्रेम कहते हैं। इसके विपरीत प्रेम का एक वह रूप भी है, जिसमें मांसलता और शारीरिकता पायी जाती है।[३] अर्थात् प्रेम की व्यापकता में पूरा ब्रह्माण्ड समाहित हो जाता है, जबकि वह संकुचित होकर आशिक का दिल बन जाता है।[४]

नेपाली के काव्य में प्रेम का, जीवनी शक्ति के रूप में, चित्रण हुआ है। प्रेम प्रारम्भ से ही कवि को शक्ति देता रहा है, उसकी अनुभूति को तीव्रता और दृष्टि को व्यापकता देता रहा है। इसलिए जहाँ प्रेम की पूजा होती है, समर्पण को सम्मान दिया जाता है, वह स्थल कवि को तीर्थ-सा प्रतीत होता है। वह मथुरा-काशी की जगह उस तीर्थ की यात्रा कर अपने जीवन को धन्य करना चाहता है-

"चाहे करूँ पुण्य जनम भर, मिले न यश जग में अक्षय,
चाहे कर पाऊँ न यहाँ मैं, सोने-चाँदी का संचय,
किन्तु, जहाँ भगवान प्रेम की होती है पूजा सविनय
करूँ तीर्थ-यात्रा उस जग की, यह मेरे तन का निश्चय।"[५]

नेपाली की रचनाओं में रूप का आकर्षण भी है, और मन की विह्वलता भी, समर्पण की भावना भी है और मिलन की कामना भी, प्रतीक्षा की पीड़ा भी है और स्मृतियों का दर्द भी।

प्रेयसी का यह रूप द्रष्टव्य है, जो अपनी दीप्ति, अपनी कान्ति से मन को मोह लेता है। लावण्य-सागर की ज्योति लहर में कल्पना का आकाश डूबने लगता है-

"सुमुखि तुम्हारे रूप दीप में भरा हुआ इतना प्रकाश था
जिसकी ज्योति लहर में मेरा डूब रहा कल्पनाकाश था" [६]

सच्चा प्रेम बाँधता नहीं, मुक्ति देता है। उसके मौन में भी एक गहरी अभिव्यंजना होती है। नेपाली के ही शब्दों में-

"प्रेम की यह कामना, पत्थर तनिक तो बोल दे!
शैल बन, पाषाण बन, पर आज बन्धन खोल दे!
प्रेम की यह भूमिका, वाचालता भी मौन है!
कौन है बहरा यहाँ, गूँगा यहाँ पर कौन है!" [७]

प्रेम दो हृदयों का निर्विकार मिलन है। यह दो धड़कनों के एक होने की प्रक्रिया है। इसीलिए प्रेम में आत्म-समर्पण की भूमिका अनिवार्य होती है। आत्मसमर्पण के बिना प्रेम और प्रेम के बिना आत्मसमर्पण की कल्पना तक नहीं की जा सकती है। प्रेम में आत्मसर्म्पण की भूमिका को स्वीकार करते हुए कवि का कथन है-

"तन चाहे, तो दे अपना तन
मन चाहे, तो दे अपना मन
धन चाहे तो दे अपना धन
आलिंगन से ले आलिंगन

है प्रेम प्रेम के ही अधीन
यह तो युग जग का नवीन" [८]

नेपाली की कविताओं में प्रेम की मांसलता भी कम नहीं है। उनके प्रेम में यदि जीवन का सम्पूर्ण संगीत है तो उसका एकान्त राग भी है। इसीलिए प्रिया के बाह्य सौन्दर्य चित्रण पर भी कवि ने पर्याप्त बल दिया है-

"मुख तुम्हारा अँधेरी डगर की शमा
रात बढ़ती गयी तो हुआ चन्द्रमा
याद तुमको किया रोज हमने जहाँ
आँधियों में वहीं छा गयी पूर्णिमा

बादलों की झड़ी में जली फुलझड़ी,
बिजलियों में कमल मुस्कुराते रहे

दो तुम्हारे नयन, दो हमारे नयन,
चार दीपक सदा जगमगाते रहे।" [९]

नेपाली की प्रेम-दृष्टि एक समग्र दृष्टि है। उसमें कल्पना से अधिक अनुभूति है, आत्मीयता है। प्रिया और प्राण उन्हें एक ही डोरी के दो मुँह की तरह दिखायी देते हैं-

"डोरी के दो मुँह जैसे ही प्राण और तुम एक प्रिय!
जग-जीवन यौवन अभिलाषा की मृदु-मृदु उद्रेक प्रिय!" [१०]

नेपाली के लिए प्रेम जवानी का ज्वार ही नहीं, जीवन की हर अवस्था के लिए उमंग, उल्लास और उत्साह की बौछार है। उनके लिए प्रेम शाश्वत है, चिर नवीन है। जीवन के वसन्त में चाहने और साथ देने वाले तो बहुत मिलते हैं किन्तु जो पतझड़ में, दुर्दिन में सहचर बन सके, वही सच्चा प्रेमी है। नेपाली प्रेम को उसकी सम्पूर्णता में देखने के पक्षपाती है। इसलिए उनकी उक्ति है-

"मधुऋतु में जैसे तुम आए, पतझड़ में भी आना
पीले झरने हुए पात का गाना सुनते जाना" [११]

नेपाली के प्रेम-वर्णन में उन्मुक्त प्रेमी की मादकता भी है और दाम्पत्य प्रेम की उज्ज्वलता की व्यंजना [१२] भी। उदाहरणार्थ-

"दिल चुराकर न हमको भुलाया करो, गुनगुना कर गम को सुलाया करो
दो दिलों का मिलन है यहाँ का चलन, तुम न आया करो तो बुलाया करो।"

जिन्दगी के सफर में चलो साथ दो, कामना की लहर में डुबो रात दो
दो नयन में नयन, हाथ में हाथ दो, हाथ देकर न ऊँगली छुड़ाया करो [१३]

और-

"आधी दुनिया मैं हूँ, आधी तुम हो मेरी रानी!
तुमने हमने मिलकर कर दी पूरी एक कहानी।" [१४]

कवि प्रेम की महत्ता का गायक, उसका उद्घोषक ही नहीं है, वह प्रेम का पाचक भी है। इस पाचना में लज्जा नहीं है, संकोच नहीं है, कुण्ठा और हीनभावना नहीं है, बल्कि एक विश्वास है, संकल्प है-

"मै प्यार माँगता हूँ
मनुहार माँगता हूँ
बस दो युवा हृदय का
संसार माँगता हूँ" [१५]

नेपाली की प्रेम-दृष्टि संकीर्ण नहीं है। उसमें व्यापकता है, गहराई है। इसलिए प्रिय के विरह में उनका प्रेम आशिक का हाहाकार नहीं बनता, एक नयी जीवन दृष्टि के रूप में परिणत हो जाता है-

"तुम हो दूर, दूर हूँ मैं भी
जीने की यह रीति निकालें
तुम प्रेमी हो प्रेम पसारो
मैं प्रेमी हूँ जीवन वारूँ।" [१६]

प्रेम के विस्तार की यह कमाना नेपाली की परिवर्तित चेतना का आभास भी देती है उनकी प्रारम्भिक कविताओं में प्रेम का मांसल चित्रण है। वह कवि के 'स्व' तक सीमित है। किन्तु धीरे-धीरे वह व्यापक होता है, परिपक्व होता है और शुद्ध भी होता है। प्रेम के सन्दर्भ में, नेपाली की काव्य-यात्रा भावुकता से चिन्तन तक की एक सार्थक काव्य-यात्रा है। प्रारम्भ में जो भोग की आकांक्षा है, वह बाद में साधना बन जाती है। मनुष्यता के संरक्षण के लिए, हृदय के विस्तार के लिए, विश्व शांति की स्थापना के लिए नेपाली प्रेम को अनिवार्य मानने लगते हैं। प्रेम उनको प्रकृति के कण-कण में व्यापक लगने लगता है-

''होती है बर्फ पहाड़ों में,
रेतों में जल का सोता है।
पत्थर पर पौधे लगते हैं
सीपी में मोती होता है।
दुनिया के बाग-बग़ीचे सब
हम देख रहे हैं घूम-घूम!
हर रोज प्रेम की चर्चा है,
हर घड़ी प्यार की मची घूम।'' [१७]

नेपाली के काव्य में प्रायः प्रेम के सारे आयाम मिलते हैं, उसका हर रंग मिलता है, इसकी हर छवि मिलती है। प्रेम नेपाली काव्य का मेरूदण्ड है और वह अपनी समग्रता में उनकी रचनाओं में विद्यमान है। रूप के आकर्षण से मुक्त होकर नेपाली दीन, संतप्त और हताश मानव-समुदाय की ओर न केवल देखते हैं, बल्कि उसके सहयात्री भी बनते हैं उसकी मुक्ति के लिए, जग के उद्धार हेतु उसका आह्वान भी करते हैं। यह मानव-प्रेम का जीवन्त उदाहरण है-

''अपने साथ समस्त जग का मानव अब उद्धार करो तुम!
छोड़ चले मझधार जिसे अब उस बेड़े को पार करो तुम!
उठो तुम्हें जग में करना है अब सुधार भी और क्रान्ति भी,
उठो तुम्हें फैला लेना है प्रेमभाव भी और शान्ति भी।'' [१८]

नेपाली के काव्य में यत्र-तत्र ईश्वरीय प्रेम का भी रूप मिलता है। ईश्वर को वे परम प्रेमी मानते हैं। प्रेम के ही कारण ईश्वर जग का निर्माण करता है, उसका पोषण और संरक्षण करता है-

''यह मोहक संसार बसाया जड़-जंगम का मेल मिलाकर
बना दिया फिर चंचल-पागल मूर्ति-मूर्ति को सुरा पिलाकर
मिट्टी की दीवाल खड़ी कर दी आँखों में बत्ती धर दी
मानव की सुन्दर प्रतिमा में अपनी उज्ज्वल आत्मा भर दी
निमिष-निमिष में हँसा-रुलाकर प्रेमी खेल रहा है कोई।'' [१९]

नेपाली की प्रेमभावना के दो अलग रूप उनकी प्रकृति और राष्ट्र सम्बन्धी रचनाओं में भी मिलते हैं। नेपाली प्रकृति के जीवन्त कवि माने गए हैं। प्रकृति के साथ कवि इतना एकाकार हो गया है, इतना तल्लीन हो गया है कि स्वयं को उसका एक अंश मानने लगा है-

"मैं सरस सोम रस घोल-घोल
तारों-सा खिड़की खोल-खोल
पीपल पल्लव-सा डोल-डोल
विहगों की बोली बोल-बोल
करता रहता हूँ अभिनन्दन
तुम कब समझोगे मेरे मन!
मैं तो पूजा का एक सुमन!" [२०]

नेपाली का 'देश-प्रेम' एक सजग कवि का, एक भावुक युवक का और एक समर्थ योद्धा का देश-प्रेम है। उनके पहले संग्रह **'उमंग'** से ही इस प्रेम की झलक मिलने लगती है और **'हिमालय ने पुकारा'** में उसका प्रखर रूप मिलता है।

इस प्रकार नेपाली प्रेम की सम्पूर्णता के कवि हैं। प्रेम के सारे पक्ष, उसके सारे रूप, उसकी सारी भंगिमाएँ नेपाली के काव्य में सहज उपलब्ध हैं। ☐

सी/८६, टीचर्स हॉस्टल संख्या ३
विश्वविद्यालय परिसर
मुजफ्फरपुर (बिहार)

सन्दर्भ :

१. 'हंस' में प्रकाशित कविताएँ हैं-
(क) 'वसन्त', मार्च-१९३२ ई० (ख) 'मस्ती', अप्रैल-१९३२ ई० (ग) 'उलझन', अप्रैल-१९३२ ई०
(घ) 'अन्तर', मई-१९३२ ई० (ङ) 'निश्चय', फरवरी- १९३३ ई० (च) 'पश्चिम', अप्रैल-१९३३ ई०
(छ) 'चित्र', सितम्बर-१९३३ ई० (ज) 'वचन', मार्च-१९३४ ई० (झ) 'जवानी', अप्रैल १९३४ ई०।
ये सारी कविताएँ 'उमंग' में संगृहीत हैं।
'जागरण' में प्रकाशित रचनाएँ हैं-
(क) 'होली- २२', मार्च, १९३२ ई० (ख) 'मधुऋतु-५', अप्रैल, १९३२ ई०
(ग) 'मधु'- १७, जुलाई, १९३२ ई०

२. 'नौका-विहार' शीर्षक कविता से, 'उमंग'-ज्ञान प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-१९३४ ई०, पृष्ठ-७७।

३. मानविकी पारिभाषिक कोश, साहित्य खण्ड, सम्पादक- डॉ० नगेन्द्र, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, आवृत्ति १९९८ ई०, पृष्ठ-१६२।

४. बकौल जिगर मुरादाबादी-

इक लफ्जे-मुहब्बत का अदना ये फसाना है
सिमटे तो दिल के आशिक, फैले तो जमाना है,

जिगर मुराबादी: मोहब्बतों का शायर, सम्पादक- निदा फाजली, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-१९९७ ई० पृष्ठ-३७।

५. 'निश्चय' शीर्षक कविताएँ, 'उमंग', पृष्ठ-२३

६. 'रूप दीप' शीर्षक कविताएँ, 'उमंग' पृष्ठ-२४

७. 'प्रेम पूर्णिमा' शीर्षक कविताएँ, 'रागिनी', युगान्तर प्रकाशन समिति, पटना, प्रथम संस्करण-१९३५ ई०, पृष्ठ-५९

८. 'आगमन' शीर्षक कविता, 'उमंग', पृष्ठ-१७

९. 'दो तुम्हारे नयन' शीर्षक कविता- 'दृष्टि'-नेपाली विशेषांक, अप्रैल-दिसम्बर १९८७, सम्पादक- डॉ० दिवाकर, पृष्ठ-२६९।

१०. 'पगध्वनि' शीर्षक कविता, 'रागिनी', पृष्ठ-१६

११. 'पतझड़ में भी आना' शीर्षक कविता, 'पंचमी'- कविवासर, बेतिया, प्रथम संस्करण, पृष्ठ-४७।

१२. 'नीलिमा' का समर्पण नेपाली के दाम्पत्य प्रेम को व्यंजित करता है। यह कृति उन्होंने अपनी पत्नी को समर्पित की है।

१३. 'दिल चुराकर न हमको भुलाया करो' शीर्षक कविता, नेपाली, 'दृष्टि'-नेपाली विशेषांक, पृष्ठ-२७२-२७३।

१४. 'दबे पाँव तुम आयी रानी' शीर्षक कविता से, 'नीलिमा' वैशाली निकुंज, मुजफ्फरपुर, प्रथम संस्करण, १९४४ ई०, पृष्ठ-४३।

१५. 'मैं प्यार माँगता हूँ' शीर्षक कविता से 'पंचमी', पृष्ठ-१०७।

१६. 'मैं विद्युत में तुम्हें निहारूँ' शीर्षक कविता से, 'नीलिमा', पृष्ठ-४६

१७. 'खेतों की चादर हरी-हरी' शीर्षक कविता से, 'नीलिमा', पृष्ठ-३८

१८. 'देख रहे हैं महल तमाशा' शीर्षक कविता से, 'नीलिमा', पृष्ठ - ७१

१९. 'कोई' शीर्षक कविता से, 'नीलिमा', पृष्ठ-८२-८२

२०. 'परिचय' शीर्षक कविता से, 'उमंग', पृष्ठ-३१

गोपाल सिंह नेपाली के जीवनादर्श उनके पत्रों के दर्पण में

● डॉ० दिवाकर

पत्र पारस्परिक संवाद-सम्प्रेषण का श्रेष्ठ साधन ही नहीं, अपितु कलात्मकता की दृष्टि से उच्च कोटि की साधना है। यह साधना भावी पीढ़ी के लिए प्रकाश-स्तम्भ का काम करती है।

व्यक्ति जिसे सीधे नहीं कह पाता, वह पत्रों में स्वत: अभिव्यक्त हो जाता है, जिससे पाठक को पत्र-लेखक की मन:स्थिति का सहज ही ज्ञान होता है। पत्र उसके अन्त:करण और चिन्तन के दर्पण होते हैं, जिनके माध्यम से पत्र-लेखक के अंतरंग और बाह्य दोनों रूपों का दर्शन किया जा सकता है। इसलिए विशिष्ट व्यक्तियों, विचारकों, दार्शनिकों, साहित्यकारों, वैज्ञानिकों के पत्रों का महत्त्व स्वीकार किया गया है। **'बेटी के नाम पिता का पत्र' नेहरू** द्वारा लिखे गए **इन्दिरा जी** को पत्र हैं, **डॉ० कमल किशोर गोयनका** द्वारा संपादित **'दिनकर के पत्र एवं शिवपूजन सहाय** प्रकाशित पत्र आदि इसके प्रमाण हैं।'

विभिन्न व्यक्तियों के नाम **नेपाली** द्वारा लिखे गए पत्रों से सम्बन्धित प्रस्तुत लेख नेपाली जी पर शोध करने वाले अनुसंधायकों को उनके जीवन, रचना-धर्म, और व्यवहार आदि की महत्त्वपूर्ण जानकारी दे सकेगा, यह विश्वास है। □

- सम्पादक

सत्यत: मनुष्य अपनी निश्छल-निष्कपट विचारों की सहज अभिव्यक्ति अपने निजी पत्रों में ही करता है। वह कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि विधाओं अथवा वादों में अपनी सहजता एवं स्वाभाविकता का निर्वाह नहीं कर पाता है। उसे इन विधाओं अथवा वादों के सन्दर्भ में कहीं-न-कहीं असहज रूप धारण करना ही पड़ता है। अस्तु, साहित्यकार के निर्मल-धवल विचारों की सहज अभिव्यक्ति उनके निजी पत्रों में हो पाती है। उनके जीवन-दर्शन का सहज रूप स्वच्छ दर्पण की तरह उनके पत्रों में देखने को मिल जाता है। ऐसी स्थिति में **गोपाल सिंह नेपाली** के जीवनादर्शों की विवेचना उनके पत्रों के सन्दर्भ में समुचित एवं सटीक होगी।

गोपाल सिंह नेपाली एक सिद्धांतवादी - आदर्शवादी गीतकार हैं। इन्होंने अपने गीतों अथवा कविताओं में अपने जीवनगत आदर्शों को ही मूर्त रूप दिया है। आदर्शविहीन अथवा सिद्धान्तहीन साहित्य की संरचना **नेपाली जी** की काव्य-साधना का लक्ष्य नहीं है। उन्होंने जीवन में जिस कठोर सत्य का साक्षात्कार किया है, उन्हीं सत्यों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। फलत: उनकी अनुभूति सम्पन्न रचनाएँ सहृदय पाठक समाज को पकड़ती हैं और प्रभावित ही नहीं करती हैं, अपितु आन्दोलित भी कर देती हैं। इनके रचनागत सौन्दर्य के सुख-स्पर्श जादू से पाठक-वर्ग विमोहित हो जाता है।

अब यदि **गोपाल सिंह नेपाली** जी के जीवनादर्शों को उनके पत्रों के सन्दर्भ में मुखर किया जाए तो पहली बात यह सामने आएगी कि **नेपाली जी आस्तिक हैं। उन्हें ईश्वर के प्रति अगाध भक्ति है।** उन्हें कष्ट-काल में ईश्वर-भक्ति से अपार बल मिलता है। उसी का फल है कि **नेपाली जी** अपने पत्रों में ईश्वर-स्तुति अथवा ईश्वर-स्मरण अवश्यमेव करते हैं। उन्हें जहाँ

भी अवसर मिलता है, वहाँ ईश्वर को स्मरण किए बिना नहीं रह पाते हैं। उसी का फल है कि **नेपाली जी विमल राजस्थानी** को पत्र लिखते हुए कहते हैं-

प्रिय विमल ! बेतिया

स्नेहाशीष, २४.१२.४३

तुम अब नई सर्विस में लगे, भगवान तुम्हारी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाकर तुम्हें साहित्य-सेवा के लिए आर्थिक सुविधाएँ प्रदान करें- यही कामना है।'' इसके साथ ही नेपाली जी **विमल राजस्थानी** को एक पत्र में यह भी संकेत देते हैं-

प्रिय विमल ! ९७/१, जी० बी० रोड

स्नेहाशीष, P.O. Malad, Bombay (S.D.)

6.4.46

लगन न टूटे, नहीं तो भगवान रूठ जाएँगे। सच्ची साधना एक दिन जरूर सफल होती है। विश्वास न हो, तो मेरी ओर देख लेना।'' इतना ही नहीं, नेपाली जी यह भी स्पष्ट करते हैं कि तथाकथित प्लानिंग से जीवन में कुछ होता- जाता नहीं है। मनुष्यों को प्लानिंग से बचना चाहिए।

प्रिय विमल! 97/1 G B Road, P. O. Malad

स्नेहाशीष, Bombay (S.D.)

6th August, 1947

मैं यहाँ सपरिवार सकुशल हूँ और मेरी कामना है कि तुम भी वहाँ फूलो-फलो। इस भरी जवानी में यह प्लानिंग कहाँ से ले बैठे हो। मेरे भाई कुछ करो-धरो, कुछ जमके करो, कुछ करके मरो, यह प्लानिंग जल्द भाग जाए, ऐसा करो। भगवान जल्द स्वच्छ, सबल सुन्दर बनाएँ।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना अनुचित नहीं होगा कि नेपाली जी की यह अगाध ईश्वर-भक्ति आर्थिक विपत्ति पड़ने पर अस्थिर तो हो जाती है, लेकिन टूट नहीं पाती है। वे मात्र भगवान को निष्ठुर भगवान कहकर सन्तोष कर लेते हैं और अपनी उस ईश्वर-भक्ति को आगे बढ़ा देते हैं।

प्रियवर!

स्नेहाशीष, 97/1 G. B. Road, P. O. Malad

Bombay (S.D.)

बम्बई- ६४

10.11.1956

तुम्हारे प्रति वे भाव वही हैं जो बेतिया में रहते समय रहे।..... बेतिया में अपने घरवाले चैन से बैठने ही नहीं देते। ...... अब बेतिया से खबर आयी है कि जो टूटा-फूटा घर था वह भी नीलाम हो रहा है या हो चुका है। ...... **गोयनका** जी मिले थे। तुम्हारा हाल भी जाना। यह लबड़ घोंघों जिसने फैला रखी है उसी निष्ठुर भगवान को याद करो। बेतिया आने पर मुझसे कोई हल निकल सकेगा तो ठीक है।''

चिचोली, मलाड
बम्बई - ६४
१६.१.६३

प्यारे सुमन!

दोनों पत्र मिले। धन्यवाद ....

मुझे अध्यक्ष बनाया है तो सम्मेलन बढ़िया और सफल करो।

परेशानियाँ खत्म कर दें। बहुत बड़ा दिल रखते सीने में। भगवान निश्चय सफल करेगा।" इस प्रकार यह सुस्पष्ट है कि नेपाली जी के जीवनादर्शों में उनकी ईश्वरीयता की विशिष्ट भूमिका है। उनका व्यक्तित्व ईश्वर-भक्ति पर कायम है।

गोपाल सिंह नेपाली के जीवनादर्शों के सम्बन्ध में दूसरी बात यह सामने आती है कि **नेपाली जी जीवन में परिश्रम को एकमात्र स्थान देते हैं।** उनका विश्वास है कि **जीवन की सफलता के मूल में परिश्रम है, लगन है और है साधना।** जो व्यक्ति जितना ही परिश्रम करता है उसको उतनी ही सफलता मिलती है।

अस्तु, उनके सारे पत्रों में यह जीवनादर्श स्पष्टतया दृष्टिगोचर हो जाता है-

बेतिया
२४.१२.४३

प्रिय विमल!

स्नेहाशीष,

घबराना नहीं चाहिए। मर्द की तरह जीवन की समस्याओं का सामना करो। कल्याण ही होगा। तुम्हारी आत्मा मजबूत हो तो बन्धन फूल बनेंगे।

९७/१, जी० बी० रोड
पी० ओ० मलाड, बम्बई
१०.११.५६

प्रियवर!

स्नेहाशीष,

मूर्ख कहीं के, यहाँ सुरा-सुन्दरी का फेर कहाँ है? जीवन-यापन की कठोरता को रंग-रेलियाँ नहीं कहना चाहिए। ......

आत्म-बल त्यागो नहीं। कुकुरमुत्ता झंझटों से भागो नहीं। एक दिन तुम्हारा भी जमाना आएगा।

चिन्चोली, पी० ओ० मलाड
बम्बई (एस० डी०)
१२ सितम्बर, १९५७

भाई का मेरा!

स्नेहाशीष,

तुम्हारा पत्र मिला

इसबार तुमने तापकर जैसा पत्र दिया, अनुगृहित हूँ। मैंने कहा था, तुम्हारी यही तत्परता तुम्हें बराबर ग्रेटनेस की ओर ले जाएगी। यह मुँह देखी बात नहीं है, सरल निर्मल सत्य है। टाईम विल टेल। मेरा सहज अनुमान कहाँ तक निशान पर बैठा है। अस्तु, इसी तरह लगन की आग जलाए चलो, धुनी रमाते चलो, युग और साहित्य के तरुण प्रतिनिधि के रूप में अपनी यह अलमस्ती लोक-कल्याण के लिए फैलाते चलो। यह याद रखो कि **श्री सी० वी० रमण, नॉबेल पुरस्कर विजेता वैज्ञानिक पहले पचास रुपए मासिक पर कलकत्ते में क्लर्क थे।"**

इतना होते हुए भी नेपाली जी उन दुश्मनों तथा दुष्टों को स्मरण किए बिना नहीं रह पाते हैं, जिन्होंने उनकी प्रगति में अवरोध उत्पन्न करने का कार्य किया था। उन दुष्टों को नेपाली जी

गोस्वामी तुलसीदास की तरह आदर-भाव के साथ स्मरण करते हैं। ऐसे लोगों को नेपाली जी नमस्कार किए बिना नहीं रह पाते हैं, भला चाहे बिना नहीं रह पाते हैं-

प्रिय विमल! बम्बई

स्नेहाशीष, ५.०२.४५

खैर, यह **ब्रजकिशोर** क्यों हाथ धो के मेरे पीछे पड़ा है? सचमुच अपनी साहित्यिक किशोरावस्था में वह बड़ा ही वज्र हो गया है साधना करे, तपस्या करे, बढ़िया चीजें लिखने की कोशिश करे, एक साहित्यिक भले आदमी की तरह शान से रहे, क्यों समय नष्ट करता है। अब वह जमाना गया, यह ईर्ष्या-द्वेष की भावना, विरोध की भाव-भंगी और गालियों की वर्षा मेरे जीवन के दिग्विजय करने वाले रथ को रोक सकती थी; अब मैं उन बातों से मीलों अलग हूँ। दुनिया की कोई शक्ति मुझे इधर से उधर नहीं कर सकती। मेरा पतन ही होगा तो अपनी करनी से, जिसके लिए मैं शायद ही तैयार हूँ।''...... मगर विमल, एक बात है। अच्छे हैं ये दुश्मन, प्यारे हैं ये विरोधी, इससे हमारी शक्ति बढ़ती है। .... अब तो खैर चम्पारण की झुरमुट से उछलकर देश की गोद में आ बैठा हूँ। मेरे दुश्मन इस सत्य से कब तक इन्कार करते रहेंगे ? ...... भगवान इनका भला करे।

प्रिय विमल! ९७/१, जी० बी० रोड

स्नेहाशीष, पी० ओ० मलाड, बम्बई (एस० डी०)

६.४.४६

पत्र मिला, अनेक धन्यवाद।

तुम्हारी कोई खास शिकायत मेरे पास नहीं पहुँची। मेरे प्रति तुम्हारी श्रद्धा जो कुछ भी हो- मुझे मालूम है। और फिर अब इस उमर में मैं सुनी-सुनाई बातों पर नहीं दौड़ता हूँ- इसका विश्वास रखना। ...... मुझे जो सफलता मिली, उसपर हमारे बुद्धिमान दुश्मनों को विश्वास भी नहीं होगा। ....

वैसे ये बेतिया वाले भी क्या हैं ? आधुनिक-हिन्दी-साहित्य के मानचित्र में गरीब कवि ने बेतिया का नाम अंकित करवाया, उसका स्थापित किया हुआ **'कवि-वासर'** कुछ डिप्टियों के फेर में पड़कर तोड़-फोड़ डालते हैं, कहीं से किसी धामिन साँप को बुलाकर ताने कसवाते हैं और अन्त तक यह जानने से साफ इन्कार करते हैं कि वर्तमान हिन्दी-साहित्य में **नेपाली** का क्या स्थान है? खैर, मियाँ तुम मजे में रहो। धन्धे भी चमके। **हिम्मत न हारो**। मैं दूर नहीं हूँ। और बातें घर पर होंगी। दोस्त-दुश्मन सबों को प्रेम पूर्वक नमस्कार करता हूँ।'' इतना ही नहीं, नेपाली जी सविश्वास यह भी संकेत देते हैं-

प्रिय विमल! जी० बी० रोड, मलाड

स्नेहाशीष, बम्बई (एस० डी०) ४.९.४७

धनयवाद। ....

मैं चम्पारण का हूँ, बेतिया मेरी जन्म-भूमि है- यह मेरा अपराध नहीं। भूगोल का निश्चय है। अब तो इसको स्वयं भूगोल भी नहीं बदल सकता । यार लोग हैरान हुए तो क्या हुए।

इस प्रकार नेपाली जी संघर्षों के बीच जीकर साधना करने में विश्वास करते हैं। उनका जीवनादर्श है कि **संघर्ष में ही जीवन है, पलायन में नहीं। जो व्यक्ति जितना संघर्ष करता है, उसकी साधना उतनी ही सुगंधित होती है।**

गोपाल सिंह नेपाली जी के जीवनदर्श के सन्दर्भ में तीसरी बात यह सामने आती है कि **नेपाली जी साहित्य को साहित्य के लिए नहीं मानकर, जीवन और समाज के लिए मानते हैं। साहित्य की सार्थकता उन्हें समाज-सेवा में अनुभूत होती है, लोक-कल्याण में दृष्टिगत होती है।** इसी का फल है कि उन्हें **एकान्त साधना की अपेक्षा लोक-साधना में अधिक विश्वास है।** वे जनता-जनार्दन के बीच जाने और रहने में गौरव का अनुभव करते हैं। उन्हें छोटे-बड़े सभी प्रकार के आयोजनों में, गोष्ठियों में आनन्द मिलता है। उन्हें घूम-घूमाकर काव्य-पाठ करना अत्यधिक सुखकर अनुभूत होता है। अस्तु, वे **कामेश** को आपने एक लम्बे पत्र में अपने इस विश्वास को इस रूप में रखते हैं-

भाई कामेश! चिन्वोली, पी० ओ० मलाड

स्नेहाशीष, बम्बई (एस० डी०) १२ सितम्बर, ५७

जीवनभर तो यही चाहता रहा हूँ कि मुझसे लोग सेवाएँ लें, जो कुछ भी अच्छा हो, उसपर अपना स्नेह बरसाएँ। मगर जब उपेक्षा ही मिलेगी तो क्यों न सिनेमा में एकान्त वास करूँ ? ....

मैं ठीक पहली अक्टूबर को मुंगेर पहुँच जाऊँगा और उस अवसर के लिए प्रोग्राम रखा जा सकता है, मुंगेर में चाहे जितनी जगह कार्यक्रम हो, मुझे स्वीकार है। मेरा कविता-पाठ किसी छोटे-बड़े सम्मेलन में हो, या सीमित गोष्ठियों में या किसी एक संभ्रान्त व्यक्ति के सम्मान पर, मुझे सब स्वीकार है। निश्चय तुम्हारे हाथ, जो जैसा उचित बताओ। कविता पढ़ने में और एक कवि भी शामिल हो, तो मेरा सम्मान ....।

नहीं तो नेपाली अकेला हिन्दी-कविता की शोभा-यात्रा घर-घर पहुँचाएगा। **अश्वमेघ यज्ञ की तरह कविता यज्ञ है।**

आगे चलकर नेपाली जी यह भी सुस्पष्ट संकेत देते हैं-

बुलाने वाले १०१ रुपए के साथ कन्वेनियेन्स दे दिया करें, तो मेहरबानी। ...... प्रत्येक स्थान के कविता-पाठ के लिए मुझे १०१ रुपए मिलना चाहिए। यह प्रोग्राम दिन में एक जगह और रात्रि के आठ बजे दूसरी जगह रखा जा सकता है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना अनुचित नहीं होगा कि नेपाली जी मसिजीवी कवि हैं। उन्हें कविता पर ही जीना है। ऐसी स्थिति में समाज से आर्थिक सहयोग अपेक्षित ही नहीं अनिवार्य भी है। इन्हें घर-परिवार, आना-जाना आदि कार्यों को इसी अर्थ से पूरा करना पड़ता है। अस्तु, **नेपाली जी** के इस आग्रह को अन्यथा नहीं लेना चाहिए। नेपाली जी इस मामले में कठोर भी हैं। क्योंकि दूध का जला मट्ठे को फूँक-फूँककर पीता है'' वाली कहावत इनके जीवन में अनेक बार साकार हो चुकी है। और कहना न होगा कि इसी कठोरता के कारण **नेपाली जी क्षेमचन्द्र सुमन** को लिखते हैं-

चिन्वोली, मलाड,
बम्बई-६४, १६.१.६३

प्यारे सुमन!

दोनों पत्र मिले, धन्यवाद।

तदनुसार मैंने बुकिंग कर ली थी। २२.१.६३ को सुबह दिल्ली जंक्शन पहुँच जाऊँगा। इस सम्बन्ध में तुम्हारी चेतावनी नोट कर ली है। कोई कुछ भी कहे, मैं रुकने को नहीं। सीधा तुम्हारे यहाँ आ जाऊँगा। आने पर कहीं मामला Cancelled हो, तो तुम्हें भुगतान करना होगा, २५१ रुपए। बस यही निवेदन है।" स्पष्ट है उसी विश्वास के कारण नेपाली जी चीनी आक्रमण के समय घर-परिवार की सारी सुविधाओं का परित्याग कर जनता-जनार्दन के बीच कूद पड़े थे। इन्होंने ऐतिहासिक यात्रा की थी, जिसका फल था कि चीनी सरकार की नींद हराम ही नहीं हो गयी थी, अपितु भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का भी जनाजा निकल गया था। और कहना न होगा कि **अन्तर्राष्ट्रीय षड्यंत्र का शिकार हो, नेपाली जी राष्ट्र के लिए शहीद हो गए थे।**

गोपाल सिंह नेपाली के जीवनादर्श के संदर्भ में चौथी बात यह यह सामने आती है कि नेपाली जी **काल को ही सबसे बड़ा आलोचक-निर्णायक मानते हैं।** उन्हें तथाकथित समीक्षकों के प्रति आस्था नहीं है। फलतः समीक्षकों की टिप्पणियों के प्रति उन्हें किसी भी प्रकार का आकर्षण नहीं है। उनकी सुस्पष्ट धारणा है कि **काल के प्रवाह में जो कविता स्थिर रह जाएगी वही कविता सच्ची कही जाएगी और उसका कवि अक्षर और अमर हो जाएगा।** उन्हें किंचित् मात्र इस बात को लेकर कष्ट नहीं है कि समीक्षक उनकी कविताओं की प्रशंसा नहीं करते हैं। यह कठोर सत्य है कि नेपाली जी ने हिन्दी-कविता को नए छन्द ही नहीं दिए हैं, अपितु हिन्दी गीति को नयी भंगिमा भी दी है, नया तेज भी दिया है। उनकी कविताओं अथवा गीतों को सामने रखकर कई गीतकार यशस्वी होने में सक्षम हो सके हैं। **'नीरज'** और **'बच्चन'** के संदर्भ में इस सत्य की परीक्षा की जा सकती है। अस्तु, नेपाली जी अपने पत्र में लिखते हैं-

चिन्वोली, पी० ओ० मलाड
बम्बई (एस० डी०)
१२ सितम्बर १९५७

भाई कामेश!

स्नेहाशीष,

तुम्हारा पत्र मिला। बिहार के एक कवि सुन्दर या असुन्दर में मेरी लहर-लहर कविता की नकल की तो तुमको दुःख हुआ, यह स्वाभाविक है। पर ऐसी चोरियों का तो हिन्दी में कबसे बाजार गर्म है। और तो और, **कवि नीरज ने तो मेरी एक पंक्ति पर जिन्दगी की धार को पहाड़ से उतार दो- 'नवीन' में प्रकाशित पूरी कविता रचकर चारों ओर सुनाई। जब उसका ध्यान उधर दिलाया गया, तो उसने कहा है कि अगले संकलन से यह हटा दूँगा।** .... हिन्दी में **'नवीन कल्पना करो'** छन्द मैंने ही पहले-पहले इन्ट्रोड्यूस किया था। बाद तो इस छन्द में कई लाख कविताएँ रची गई होंगी। फिर भी हमारे स्वनामधन्य समालोचक कुछ मरे और कुछ अधमरे लोगों का संगीत गाकर इस दुनिया से चल बसते हैं। मगर मैं अपनी तारीफ के पीछे नहीं मरता, यह तुम जानते ही होगे। वह उमर ही पीछे छूट गई, जब किसी की तारीफ गुदगुदाती

है और शिकायत रुलाती है। सबकी असली परीक्षा तो काल के हाथ में होती है। जैसा कि मैंने इधर एक कविता लिखी है-

धन्य अमरता होगा किसके नाम से
काल बली बतला देगा आराम से

फिर दूसरी कविता लिखी है-

लाख रचो अतुकान्त गद्य, नित घूमो कवि भेष में
चल ना सकेगा नीरस पद, तुलसी-मीरा के देश में।

इसी विश्वास का फल है कि नेपाली जी इसी पत्र में यह भी स्पष्ट करते हैं- सो भाई मेरे, इस ओर हमें जीवन की बाजी लगाकर ...... क्योंकि आज हिन्दी में कविता के नाम पर जो अंट-संट चल रहा है। जो दिल-दिमाग खराब किए जा रहे हैं, जो काँटों को गुलाब समझने और समझाने का सामूहिक पागलपन चल रहा है, उसके सामने सच्ची कविता की तस्वीर रखनी होगी। प्रतिरोध के लिये सभा करके नहीं, सब जगह सच्ची कविता का मधुर रस प्यार से। ......

वसन्त आज नहीं भी आया, तो कल उसे आना ही पड़ेगा। इस प्रकार एक सच्चे कवि की भूमिका का निर्वाह **नेपाली जी** प्रशंसा-अप्रशंसा की सीमा को पार करते हुए निःसंकोच जीवन-पर्यन्त करते रहे। इसमें दो मत नहीं है।

गोपाल सिंह नेपाली के जीवनादर्श के सन्दर्भ में पाँचवी बात यह सामने आती है कि **जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नवीन प्रतिभा को स्थान मिलना चाहिए। साहित्य हो अथवा राजनीति वृद्धों को संन्यास ले लेना चाहिए।** इसका यह अर्थ नहीं है कि नेपाली जी को वृद्धों के प्रति उपेक्षा भाव अथवा अनादर भाव है। वे उनके प्रति अपार श्रद्धा रखते हैं और उनके ज्ञान और अनुभवों से लाभ उठाने में भी विश्वास रखते हैं। इसलिए वे **कामेश जी** के पत्र में स्पष्टतया यह लिखते हैं-

चिन्वोली, मलाड,
बम्बई, (एस० डी०) १२ सितम्बर, १९५७

भाई कामेश!

स्नेहाशीष,

मेरा बस चले तो मैं भारत के तमाम जिलों में सर्वत्र नौजवानों को ही सभापतित्व करते देखना चाहता हूँ, तभी चहुँमुखी क्रांति संभव है। हाँ! **ज्ञान वयोवृद्ध और अनुभवी लोगों की सलाहकार समिति सब जगह बैक ग्राउण्ड में रहकर सहयोग दे सकती है।** फोरफ्राण्ट पर जो अमर तारूण्य ही रहे, जीवन के अन्त में संन्यास की प्रथा चलाने वाले इस महान् चिन्तक के भारतवर्ष में यही होता था। मगर मेरे जैसे अराजनीतिक व्यक्ति का राजनीतिक परामर्श कौन सुनेगा, नहीं सुनता है। इसी विश्वास का फल है कि **नेपाली जी** कई प्रतिभाओं को बढ़कर सहयोग देते हैं। अपनी शक्ति भर वे उन्हें प्रगति-पथ पर बढ़ने के लिए उत्साह देते हैं। **विमल राजस्थानी, उमाशंकर निःशेष** तथा **अवध भूषण मिश्र** जैसे नवोदित कवियों को उन्होंने सराहनीय सहायता दी है। जहाँ भी इन्हें अवसर मिला है, वहाँ इन्होंने दिल खोल कर सभी तरह का सहयोग दिया है-

९७/१ जी० बी० रोड, पी० ओ० मलाड
बम्बई (एस० टी०) ११ अगस्त, १९४४

प्रिय विमल!

स्नेहाशीष,

तुम्हारी चिट्ठी यथा समय मिल गई थी। पढ़कर प्रसन्न हुआ, अनेक धन्यवाद। पत्रोत्तर में कुछ ज्यादा विलम्ब हुआ, क्षमा-प्रार्थी हूँ। मुझे तुम्हारा सदा ध्यान है। बात सिर्फ इतनी है कि यहाँ पहले मेरा स्वर जमने दो। यह लाइन मजे की तो है, मगर यहाँ पोलिटिक्स भी खूब चलती है। हमलोग सीधे-सादे आदमी हैं। खैर, और हाल लिखते रहना।

प्रिय विमल! बम्बई, ५.२.४५

पत्र मिला धन्यवाद। सुबह नहा-धोकर ज्यों ही खाना खाने बैठा, त्यों ही तुम्हारा पत्र पढ़ने को मिला, बड़ी प्रसन्नता हुई-शांति तो दुगनी मिली। .... चम्पारण के साहित्यिक मौन के साथ, समाचार से दुःख हुआ, परमात्मा करे वह कुछ दिनों का मौन ही हो, मौत न हो। जागृति फिर भी लायी जा सकती है। लोग पहले ही से ऐसे ही हैं, कुछ उज्ज्वल आदर्श है ही नहीं, तुम्हीं बताओ उन्नति क्या हो, प्रगति क्या हो ? खैर, मिलने पर यह भी सोचा जाए। ....

तुमको मैं रेडियो में इण्ट्रोड्यूस कर दूँगा निश्चय ही 'रुद्र' को मैंने ही इण्ट्रोड्यूस किया था। अभी कुछ ठहरना पड़ेगा, क्योंकि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का विरोध-आन्दोलन चल रहा है। अभी जाओगे तो बदनाम हो जाओगे। इसी कारण बन्दा भी उदासीन है। करना ही चाहो तो कहो, ठीक करवा दूँ, मगर बदनामी होगी। सोचो! .... तुमने मेरी चिन्ताएँ दूर करने के लिए जो कष्ट उठाया, उसके लिए अनेक धन्यवाद। मैं भी तुम्हारे लिए जो कर सकूँगा, जरूर करूँगा।

९७/१, जी० बी० रोड, पी० ओ० मलाड
बम्बई (एस० डी०), ७ फरवरी १९५६

भाई विमल!

स्नेहाशीष,

तुम्हारे पत्र मिलते रहे समाचार जानता रहा, उत्तर में कुछ लिख इसलिए न सका कि यहाँ भी उधेड़-बुन कुछ कम नहीं है। तुम्हारे प्रति मेरे भाव, वही है जो बेतिया में रहते समय रहे। ..... हाँ, कभी-कभी टीस उठती है कि मैं तुम्हारे लिए कुछ कर नहीं सका। सोचता हूँ शायद आगे कुछ कर सकूँ। अभी तो मैं ही भंवर में पड़ा हूँ।

प्रिय निःशेष! बम्बई, ६.१२.६२

आशीर्वाद,

पत्र मिला। पाण्डुलिपि भेजने में तो तुम्हें बेकार कष्ट होगा। प्रत्येक कवि का नाम और उसकी कविता की शुरू की दो पंक्तियाँ लिखकर भेज दो। मैं भूमिका लिखकर भेज दूँगा।"

97/1, Chodbunder Road
P.O. Malad, 13.12.50

My dear Awadh Bhushan Ji,

Thanking you very much for your letter dated 5.12.50. .... You have written some times of your songs which are really very good. May God

bless you with the happiness, you are desirous of, I may be in whatever corner of the Barth. I shall always wish you and other good men of Bihar well.

Yours Sincerely

Gopal Singh Nepali

इतना ही नहीं, नेपाली जी नवोदित साहित्यकारों द्वारा प्रकाशित **'आरती'** पत्रिका पर भी अपनी सम्मति दिए बिना नहीं रह पाते हैं:-

''इस बार जमालपुर आने पर मुझे **आरती** के दर्शन मिले। धरती के इस कोने में हमारे कुछ मस्त-मतवाले तरुण, साहित्य की ज्योति इस सरल-सहज रीति से जगाते चल रहे हैं, यह सत्य किस साहित्य-सेवी को पुलकित नहीं करेगा! मेरी हार्दिक शुभकामना यह है कि **आरती** शीघ्रताशीघ्र छपने लगे और यह सुन्दर पत्रिका दूर-दूर तक फैलती चली जाए। अपने तरुण सहकर्मियों को उत्साहित करते हुए मुझे असीम आनन्द का अनुभव हो रहा है।''

गोपाल सिंह नेपाली

६.११.५७

इस प्रकार नेपाली जी वैसे साहित्यकारों की परम्परा को प्रगति देते हैं, जो नई प्रतिभाओं को आगे बढ़ाने में आस्था रखती है। नेपाली जी स्वयं बनने में विश्वास नहीं रखकर समाज को बनाने में विश्वास रखते हैं। इसमें दो मत नहीं है।

गोपाल सिंह नेपाली के जीवनादर्श के सन्दर्भ में छठी बात यह सामने आती है कि **नेपाली जी को अपनी जन्मभूमि के प्रति निश्छल प्रेम है।** उन्हें जन्मभूमि की सौंधी मिट्टी अतिशय संवेदित करती है वे चाहकर भी बेतिया को भुला नहीं पाते हैं। तारिकाओं की नगरी-बम्बई में रहकर भी उनकी आत्मा चम्पारण के लिए बेतरह व्याकुल रहती है। द्रष्टव्य है, नेपाली जी का पत्र-

बम्बई, ५.१२.४५

प्रिय विमल!

स्नेहाशीष, तुम्हारी चिट्ठी यथासम्भव मिल गई थी, पढ़कर प्रसन्न हुआ। अनेक धन्यवाद।

बेतिया का क्या हाल है?

हमारी यह झुरमुट चम्पारण कितनी अच्छी है।
आकाश न चूमे, फैक्टरी का मुकाबला न करे,
मगर कितनी प्यारी है ?''

स्पष्ट है, इस झुरमुट के प्रति नेपाली जी का यह प्रेम इस समय उग्ररूप धारण कर लेता है, जिस समय घर नीलाम करने की बात सामने आती है। अर्थात् सागर पोखर स्थित टूटा-फूटा घर नीलाम होने जा रहा है। नेपाली जी को ज्यों ही यह पता चलता है, त्यों ही वे बौखला उठते हैं और आक्रोश पूर्ण मुद्रा में पत्र लिखते हैं-

भाई विमल! ९७/१ Chod Bandar Road

पी. ओ., मलाड, बम्बई

स्नेहाशीष, ७ फरवरी १९५६

तुम्हारे पत्र मिलते ही समाचार जानता रहा। ..... अब बेतिया से खबर आयी है कि एक जो टूटा-फूटा घर था, वह भी नीलाम हो रहा है या हो चुका है। ...... क्या दुनिया है! जिसने अपने गीतों और कविताओं से बेतिया और चम्पारण के नाम की दुंदुभी सारे हिन्दुस्तान में बजा दी, उसी महाकवि की झोपड़ी बेतिया वाले नीलाम कर रहे हैं। जय हो पैसा भगवान की! तुम भी शिक्षा लो इन्सानियत की माँ पर जो चढ़ा है, उसी का नाम पैसा है।'' इसके साथ ही अपने टूटे-फूटे घर के प्रति ममता व्यक्त करते हुए **दिनेश भ्रमर** के नाम एक पत्र लिखते हैं-

प्रियवर! चिन्चोली, पो० मलाड

स्नेहाशीष, बम्बई-६४, १०.११.५८

यहाँ मुझे खबर मिली है कि मेरे पिता जी को छोटा .... उनके ग्रेन मरचेन्ट शिवबरन राम को १५ सौ रुपए देना है। अस्तु, इसी पर शिवबरन राम इसी १५ नवम्बर के बाद ही हमारा सागर पोखरा (बेतिया) वाला मकान नीलाम करवा रहा है। अब समय बिल्कुल नहीं है सो, भाई पत्र पाते ही तुम घर से पन्द्रह सौ लेकर बेतिया चले आओ और पिताजी तथा शिवबरन राम से मिलकर १५०० रुपए चुकता करके कागज तुम अपने नाम बनवा लो। ...... मुझे इस दुनिया से जोड़ने वाला वही एक मकान है। उसे भी सभी हथियाना चाहते हैं। तुम्हें कुछ नुकसान नहीं। १०-२० हजार की सम्पति १५०० रुपए में हड़पी जा रही है। इसलिए रुकना जो भी हो भूलकर फौरन एक्शन लो और मास के अन्त में या दिसम्बर में मैं उधर आऊँगा निश्चय।

आशा है, तुम स्थिति समझ गए हो। चाहो तो घर वालों से मिल लो, बातें कर लो और यह मकान डाकुओं के हाथ बच जाए। फिर कहता हूँ इसमें नुकसान कुछ नहीं। १०-२० हजार की चीज १५०० रुपए में हड़पने का षड्यंत्र है। जल्दी करो।'' स्पष्ट है नेपाली जी का यह टूटा-फूटा घर शत्रुओं डाकुओं से बच नहीं पाता है। बेतिया वाले **नेपाली जी** के घर को नीलाम करवा लेते हैं।

गोपाल सिंह नेपाली के जीवनादर्श के सन्दर्भ में एक बात यह भी सामने आती है कि नेपाली जी ठोस कार्य करने में विश्वास रखते हैं, उनका विचार है कि **जो भी कार्य सम्पन्न किया जाए वह लट-पट अथवा ढीला-ढाला नहीं हो। चुस्त-दुरुस्त तथा वजनी कार्य को ही** नेपाली जी महत्त्व देते हैं। इसी का फल है कि **क्षेमचन्द्र सुमन** को दो टूक शब्दों में पत्र लिखे हैं-

चिन्चोली, पी० ओ० मलाड

बम्बई-६४, २४.९.६२

प्यारे सुमन जी!

सप्रेम, पत्रों के लिए धन्यवाद।

आपके संकेतों के अनुसार ही चीज भेज दूँगा- निश्चय। पुस्तक निकले तो जबरदस्त निकले, मजे आ जाए। आधा तीतर आधा बटेर वाला हिसाब अपने को अच्छा नहीं लगता। इसलिए ध्यान दे रहा हूँ। प्रसन्न रहिए।''

इसी भावभूमि में यह भी बात सामने आती है कि नेपाली जी आत्मप्रशंसा के भूखे नहीं हैं। उनकी यह अपेक्षा नहीं है कि कोई उनपर पुस्तक लिखे अथवा आलेख तैयार करे। लेकिन उन्हें जब यह आत्मबोध होता है कि इस प्रसंग में लोग उनके साथ ज्यादती कर रहे हैं, तब वे इस प्रसंग में कुछ सोचने को विवश हो जाते हैं। वे अपने इस विश्वास को विस्तार के साथ इस पत्र में रखते हैं-

चिन्चोली, मलाड
बम्बई-६४, ३० मार्च, ६२

प्रिय दर्शन!

स्नेहाशीष, ९/३ और २६/३ के दोनों पत्र मिले, आजमगढ़ से तो मैं बहुत पहले ही आया था, किंतु संकोच में तुम्हें कुछ लिख न सका। संकोच इसलिए कि पुस्तक मुझ पर लिखी जाएगी और दिशा-निर्देश भी मैं ही करूँ, तो जलने वालों को और भी सामाग्री मिल जाएगी। बहुत सोचने पर गलती अपनी ही मालूम हो रही है। संसार में जीना है तो **लाईम लाईट से दूर भागना कब्रिस्तान में जाकर सोना है।** अनेक बार लोगों ने मुझ पर पुस्तक लिखने का संकल्प करके मुझसे दिशा-निर्देश करने के लिए कहा। पर मैं सदा पल्ला छुड़ाता रहा पर अब ऐसा लगता है, सूरज-चाँद-सितारों की परछाइयों में घूमते फिरना और अपने को लोगों से छिपाते फिरना ठीक नहीं, इसलिए दिल खोलकर आज मैं तुम्हें लिख रहा हूँ, तुम्हारे पत्रों के उत्तर दे रहा हूँ। इससे कुछ बात बन जाए तो बहुत अच्छा।" .... **"तुम कल्पना करो नवीन कल्पना करो"** वाला छन्द आधुनिक हिन्दी-साहित्य में पहले पहल मैं ही ले आया था। बाद में तो दर्जनों कविताएँ इस छन्द में लिखी गईं। **बच्चन** ने भी मुझसे दो साल बाद इसी छन्द में वह कविता लिखी- **"मैं इसीलिए खड़ा रहा कि तुम मुझे पुकार लो।"**

स्पष्ट है **नेपाली जी** एक संघर्षशील साहित्यकार हैं। उन्हें सस्ती लोकप्रियता में आस्था नहीं है। वे कर्मयोगी हैं। इन्हें कर्म में विश्वास है। कर्म-कर्म के लिए नहीं, **कर्म जीवन के लिए हो।** ऐसी धारणा **नेपालीजी** की है।

इस प्रकार **नेपाली जी** के जीवनादर्श उनके पत्रों के सन्दर्भ में मुखर होते हैं। निश्चय है पाठक-वर्ग नेपाली जी के इन जीवनादर्शों से प्रभावित हो, इन्हें अपने जीवन में स्थान देंगे। कारण ऐसे ही जीवनादर्शों से मनुष्यता को शक्ति मिलती है, समाज को बल मिलता है और मिलती है अपार ऊर्जा। आवश्यकता है, आज के इस संक्रांति काल में **नेपाली जी** के आदर्शों को जीवन से उतारने की और साहित्य में लाने की। जब तक वे आदर्श जीवन और साहित्य में नहीं उतरेंगे तब तक साहित्य, समाज और राष्ट्र प्रगति-विमुख बना रहेगा। बस!

□

मिर्जापुर (लाइन पार)
नवादा-८०५ ११०
बिहार

स्वातंत्र्योत्तर राष्ट्रचेतना और नेपाली

● डॉ० शत्रुघ्न प्रसाद

नवम्बर, १९९२ ई० में पटना में आयोजित उत्तर छायावाद काव्य की मूल्यांकन संगोष्ठी के संयोजक **डॉ० नन्दकिशोर 'नवल'** ने कहा था कि उत्तर छायावाद का आकलन नहीं हो सका है जब कि इसने हिन्दी-काव्य को लोकोन्मुख किया है।

निस्सन्देह **नवल** जी का कथन सही है। वैसे **प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद** का समीक्षा ग्रंथ-**'छायावादोत्तर काव्य'** सन् १९६६ ई० में प्रकाशित हो गया था। इसमें उन्होंने लिखा है- 'सन् १९३५ के आसपास प्रकाशित नवयुवक कवियों की रचनाओं में ईषत् भिन्न प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। नवयुवकों की रचनाओं में एक ओर सामाजिकता का अधिक आग्रह और दूसरी ओर अभिव्यक्ति की लोकग्राह्यता का। यदि वर्ण्यवस्तु की दृष्टि से देखें तो कुछ कवियों में राष्ट्रीय भावनाएँ उफन-उबल रही थीं और कुछ प्रेम का तराना गाने में मस्त थे।' (पृष्ठ ४८)

सच है कि कविवर **गोपाल सिंह नेपाली** ने प्रकृति के प्रांगण में प्रकृति के सौन्दर्य पर तन्मय होकर गुनगुनाना आरम्भ किया था। उन्होंने छायावाद युग से ही भाव और भाषा की सहजता के साथ लिखना शुरू कर दिया था। प्रमाण है कि **'उमंग'** और **'पंछी'** का प्रकाशन सन् १९३४ ई० में ही हुआ था। **'पंछी'** की भूमिका में **निराला** जी ने लिखा है- 'इधर दो वर्षों से नवीन तारकों के सदृश जितने कवि हिन्दी के काव्याकाश में चमकते हुए मुझे देख पड़े, सौन्दर्य के सुख-स्पर्श-जादू से जिन्होंने मन को वशीभूत कर लिया तथा प्रकाश और तृप्ति दी, **श्री गोपाल सिंह जी नेपाली** उन्हीं में से एक हैं।' सन् १९३४ में प्रकाशित **'उमंग'** की एक कविता **'मंसूरी की तलहटी'** में कवि ने अपनी प्रेरणा के सम्बन्ध में बताया है कि उसने प्रकृति से ही मृदु सरल गान गाना सीखा है।

फूटा है मेरा कण्ठ यहीं रे निर्मल निर्झर के समान
सीखा है मैंने यहीं तीर पर सरिता के मृदु सरल गान

सन् १९३५ में प्रकाशित **'रागिनी'** की भूमिका में कवि ने स्पष्ट किया है- 'देहरादून से मेरा मतलब मन्सूरी के आसपास से ही है। सुरम्य हरियाली की गोद में फौजी छावनी टिकी हुई है। चारों ओर खेत हैं, वन हैं, नदी-नाले हैं और पहाड़-पहाड़ियाँ हैं। यह हरी-हरी दूबों की महिमा है कि आज मेरे हाथ में बन्दूक के बदले लेखनी है।' तात्पर्य यह है कि हिमालय, हिमालय की उपत्यका, वन-प्रान्तर, पंछी-गीत, निर्झर-संगीत, गंगा-यमुना की धाराएँ और गाँव-इन सबने रागात्मक अनुभूति के रूप में नेपाली के हृदय में स्थान पा लिया था।

प्रकृति और जन-जीवन की अनुभूतियों की सरल गीतात्मक अभिव्यक्ति नेपाली का काव्य है। जो पंत जी के प्रकृति काव्य से भिन्न है। तरुणाई का प्रेमभाव प्रकृति एवं जीवन में उमड़ उठा था। गाँव का आत्मीय जीवन प्रिय था। शोषण और विषमता से संघर्ष के साथ हिमालय एवं गंगा के देश की स्वाधीनता का अहिंसात्मक संग्राम उनके काव्य के मुख्य विषय रहे हैं। एक ओर वे छायावाद के आँसू, रहस्यवाद और भाषा की अलंकृति से मुक्त हैं, तो दूसरी ओर वे

प्रगतिवाद की राजनीतिक प्रतिबद्धता और राष्ट्रबोध की निषेधमुद्रा से बहुत दूर हैं। हिमालय, वन-प्रान्तर, गंगा और गाँव से जुड़कर जीने वाला कवि अपनी मातृभूमि की पराधीनता और अपने स्वाधीन देश पर हुए आक्रमण को कैसे भूल जाएगा? इस दृष्टि से नेपाली उत्तर छायावाद की सहज स्वच्छन्द काव्यधारा के प्रगतिशील कवि हैं।

उत्तर छायावाद संगोष्ठी में **नेपाली** पर प्रस्तुत निबंध में **डॉ० रेवती रमण** ने माना है कि **'नवीन'** और **'सुभद्रा'** वाली देशभक्ति, **भगवतीचरण वर्मा** का यथार्थबोध, **दिनकर** और **बच्चन** की दार्शनिकता और **सुमन** का भाववेग **नेपाली** काव्य में भी उपलब्ध है।' परन्तु इन सब से भिन्न है इनके काव्य की अपनी पहचान है। इनमें प्रकृति, प्रेम और देशभाव की गीतात्मक त्रिवेणी है। यह कहना आवश्यक है कि छायावाद के बाद उत्तर छायावाद या छायावादोत्तर के कवियों ने भी प्रकृति, प्रेम और देशभाव का राष्ट्रबोध से हिन्दी-काव्य को समृद्ध किया था। साथ ही शोषण, विषमता और गरीबी के प्रति इनका मानववादी हृदय जागृत था। छायावाद के **निराला** का आक्रोश **नेपाली** में उभर आया था। परन्तु प्रगतिवादी कवियों की सीमा है कि वे अपनी मातृभूमि की पराधीनता, स्वाधीनता और राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति पूर्ण उदासीन रहकर सर्वहारा की क्रान्ति के कवि बन गए थे। **कविवर नेपाली** इस सीमा से बँधे नहीं थे। अतः कवि ने लिखा-

लिखता हूँ अपनी मर्जी से
बचता हूँ कैंची दर्जी से
आदत न रही कुछ लिखने की
निन्दा-वन्दन खुदगर्जी से
कोई छेड़े तो तन जाती है, बन जाती है संगीन कलम
मेरा धन है स्वाधीन कलम।

सचमुच **'आँसू वाली नमकीन कलम'** स्वाधीन कलम बन गयी थी। गरीबी से निरन्तर जुझते हुए नेपाली ने अपनी स्वाधीन कलम को ही अपना धन माना था। इसलिए वह आरम्भ से राष्ट्रचेतना का जागृत कवि रहा है। परिणाम स्वरूप वह पराधीनता, अन्याय और उत्पीड़न के खिलाफ अपनी स्वाधीन कलम से संघर्ष करता रहा है। वह प्रकृति और प्रेम में खो नहीं गया था। इसीलिए अपनी प्रथम रचना **'उमंग'** में नेपाली ने युगान्तर की घोषणा कर दी है। कवि ने **'युगान्तर'** से निवेदन किया है -

अरे, युगान्तर! आ जल्दी अब खोल, खोल मेरा बन्धन
बँधा हुआ इन जंजीरों से तड़प रहा कब से जीवन
आजा ला दे कण-कण में अब फिर से ऐसा परिवर्तन
मरता जहाँ आज यह जीवन वहाँ करे यौवन नर्तन।

यौवन के प्रतीक नेपाली ने विप्लव का सिंहनाद करते हुए अपने भारतीय व्यक्तित्व के तेज को प्रकट कर दिया है। यह भारतीय व्यक्तित्व ही नेपाली की राष्ट्रीय चेतना का आधार हैं। अतः लिखा है-

भारत के लाल हमीं
दुनिया की बाँह विशाल हमीं
हैं पृथ्वी के महिपाल हमीं।

यदि माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा' हैं तो नेपाली भारत के लाल। सन् १९३१-१९३२ में भारत गान्धी के नेतृत्व में अहिंसात्मक लड़ाई लड़ रहा था। विश्व के लिए सत्याग्रह अद्भुत प्रयोग था। देशभक्तों में मर-मिटने का अभिमान उच्छलित होने लगा था। इस नयी रणनीति को नेपाली ने गौरवपूर्ण हर्ष के साथ शब्दायित किया है-

है अपूर्व यह युद्ध हमारा, हिंसा की न लड़ाई है
नंगी छाती की तोपों के ऊपर विकल चढ़ाई है
तलवारों की धार मोड़ने गर्दन आगे आई है।

जब छायावाद के अवसान की घोषणा हो चुकी तो प्रगतिवाद के आगमन का स्वागत हुआ। कुछ ही वर्षों के बाद सन् ४० में पाकिस्तान का प्रस्ताव पारित हो गया। सन् १९४२ की अगस्त क्रान्ति देश को आन्दोलित करने के बाद बन्दीगृह में बन्द कर दी गयी। नेताजी सुभाष का सैनिक अभियान भी असफल हो गया। इस विषम स्थिति में कवि नेपाली नयी पीढ़ी में प्रगतिशील राष्ट्रीय दृष्टि उन्मेषित कर रहा था। वह गंगातट पर बैठ कर नूतन राष्ट्रशक्ति की कल्पना-उद्भावना कर रहा था।

जंजीर टूटती कभी न अश्रुधार से
दुःख दर्द दूर भागते नहीं दुलार से
हटती न दासता पुकार से गुहार से
इस गङ्गतीर बैठ आज राष्ट्रशक्ति की
तुम कल्पना करो, किशोर कामना करो
तुम कल्पना करो, नवीन कल्पना करो।

स्पष्ट है कि कवि प्रस्ताव और सत्याग्रह की नीति से निराश होकर नयी शक्ति के उन्मेष की कामना कर रहा है। वह गरीबी से संघर्ष करते-करते आजीविका के लिए सन् १९४४ में बम्बई की फिल्म-नगरी में चला गया पर उसकी लेखनी की आत्मा जीवित रही। कवि सन् ४५ में पुरस्कृत हुआ। वह अपनी जीवंत चेतना के साथ देश की विषम स्थितियों को देख रहा था प्रगतिवाद की वाम राजनीति में लीग के पाकिस्तान-प्रस्ताव याने देश-विभाजन का समर्थन कर दिया था। उसने देश की स्वाधीनता के लिए लड़े गए युद्धों - गान्धी और सुभाष के युद्धों का विरोध किया था। कारण है - राष्ट्रबोध के प्रति निषेधमुद्रा और राष्ट्रीयता के विरोध के साथ सर्वहारा की क्रान्ति का निनाद। परन्तु कविवर निराला और नेपाली ने राष्ट्रीय चेतना के साथ शोषित दीनहीन की पीड़ा को अभिव्यक्ति दी। समतामूलक परिवर्तन का आवाहन किया। मध्यकाल में कबीर और नानक ने अद्वैतवाद के आधार पर समता की साधना की थी। आधुनिक युग में प्रगतिवाद ने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के आधार पर साम्यवादी समाज की रचना के लिए क्रान्ति का बिगुल बजाया है। चीन ने इस सिद्धान्त के आधार पर प्रयोग किया। और फिर पड़ोसी तिब्बत पर अधिकार कर भारत पर भी आक्रमण कर दिया। प्रगतिवादी इसका विरोध नहीं कर

सके। ये तो वर्षों से लालचीन की प्रशंसा में लिख रहे थे। साहित्य, पत्रकारिता और राजनीति-सर्वत्र चीन की प्रशस्ति हो रही थी। भाई-भाई और पंचशील के नारे गूँज रहे थे। चीन के प्रति इसी मुग्धता के मदहोश वातावरण में सन् १९६२ ई० में उत्तर से आक्रमण हुआ। अपनी सुरक्षा की दुर्बलता में उनकी प्रवंचना का प्रहार हुआ। यह उल्लेखनीय है कि प्रगतिवादी काव्यधारा के प्रबल वेग के कारण राष्ट्रीय काव्यधारा दब गयी थी। परन्तु, **माखनलाल चतुर्वेदी, महादेवी वर्मा, आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री, दिनकर, नेपाली, गुलाब, पोद्दार अरुण, सोहनलाल द्विवेदी, रामदयाल पाण्डेय** आदि प्रमुख कवियों की राष्ट्रीय आत्मा जग गयी। राष्ट्रबोध ऊर्जस्वित हो उठा। अपनी मातृभूमि की स्वाधीनता, अखण्डता तथा अस्मिता का प्रश्न उठकर खड़ा हो गया था। स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी-काव्य में राष्ट्रचेतना के विकास का यह प्रधान कारण बना। वैसे देश विभाजन की पीड़ा, **गान्धीजी** की हत्या, फैलते भ्रष्टाचार और विकास योजनाओं की आर्थिक सफलता से राष्ट्र-चेतना का नया रूप उभर रहा था। पर चीनी आक्रमण ने दबी-दबी राष्ट्रचेतना को क्षुब्ध कर दिया। इसीलिए तो भारतीय आत्मा के वृद्ध शरीर में तरुणाई का नया रक्त उबल पड़ा। उन्होंने लिखा-

चलो, सजाओ सैन्य, समय की
भरपाई के दिन आए हैं
आज प्राण देने के युग की
तरुणाई के दिन आए हैं।

दिनकर ने **'परशुराम की प्रतीक्षा'** को लिखकर एक ओर पंचशील नीति और सुरक्षा की दुर्बलता की स्थिति की कटु आलोचना की और प्रगतिवाद के चीन के प्रतिमोह पर प्रहार किया। दूसरी ओर नए भारत के लिए कुठारधारी परशुराम के अवतरण का अभिनन्दन किया, जिससे हमारा तेज प्रकट हो सके।

ताण्डवी तेज फिर से हुँकार उठा है
लोहित में था जो गिरा, कुठार उठा है।

स्मरणीय है कि चीनी आक्रमण के बाद लाल किले में विराट ललकार कवि-सम्मेलन हुआ था। संघर्ष का स्वर ऊँचा हुआ था। परन्तु **'नई कहानियाँ'** में इसकी कटु आलोचना हुई थी। **भगवत शरण उपाध्याय** ने **'कल्पना'** भाषा में लिखा कि यह काव्य का काढ़ा हैं, विजय के लिए तिलस्माती ताबीज है। कवि **दिनकर** ने मेष को शेर बनने के लिए ललकारा था और अशोक के बदले चाणक्य की परम्परा को अपनाने का आह्वान किया था, पर प्रगतिवादी **उपाध्याय** की दृष्टि में 'ऐसा साहित्य किसी भी राष्ट्रभाषा को कलंकित करने के लिए पर्याप्त है।' वे चाहते थे कि दुर्बलता का परित्याग कर सिंह-गर्जन न करे। पर ऐसा नहीं हो सका।

हिमालय की उपत्य का निवासी अपने प्राण प्रिय हिमालय पर आए संकट को देख कर बम्बई की मायानगरी में नहीं रुक सका। उसने फिल्मी गीतों की रचना छोड़ कर और अपनी आजीविका से मुँह मोड़ कर हिमालय और गंगा की रक्षा के लिए आवाज दी। यदि जन्मभूमि भी माँ है, तो संकटग्रस्त माँ को देखकर पुत्र का हृदय उद्वेलित होगा ही। यह संवेदनशीलता ही कवि-हृदय की पहचान है। आक्रमण और युद्ध से आहत मातृभूमि के प्रति कवि का भाव हृदयस्पर्शी गीतों में व्यक्त होने लगा। **कवि नेपाली** ने आरम्भ से राष्ट्र-चेतना को मुखरित किया

था। पहले वह पराधीनता के विरुद्ध जागरण गीत गा रहा था। अब वह स्वाधीनता एवं अखण्डता के लिए शौर्य-गीत गाने लगा। इस प्रकार **कविवर नेपाली स्वातंत्र्योत्तर राष्ट्र-चेतना का चैतन्य एवं प्रबुद्ध कवि बन गया। मातृभूमि की वेदी पर कवि के व्यक्तित्व एवं कवि-कर्म-दोनों का सम्पूर्ण समर्पण हो गया।** यह स्वाधीन भारत का उल्लेखनीय ऐतिहासिक प्रसंग है। परन्तु **नेपाली** के जीवन के इस प्रसंग की उपेक्षा होती रही है।

कवि की प्रत्येक साँस से देश जागरण याने जन-जागरण की कविता मुखरित होने लगी। वे घायल हिमालय की ओर से सारे देश को जगाने लगे। उल्लेखनीय है कि पेकिंग रेडियो नेपाली के नवजागरण काव्य की विद्युत गूँज से परेशान हो उठा। हिन्दी के एक कवि की वाणी से इतनी शक्ति का संचार हो रहा था कि पेकिंग रेडियो ने भयभीत होकर कवि पर हमला बोल दिया। नेपाली जी ने अपने मित्र **राबिन शॉ पुष्प** से बताया - ''मैं तो इसी दिन का इंतजार कर रहा था। यह सरकार मुझे पद्मश्री, पद्मभूषण नहीं देती और पेकिंग रेडियो गालियाँ देता है, वाह! पेकिंग ने भी क्या सोचा होगा कि है कोई **'वन मैन आरमी'** .... अरे, ये गालियाँ तो पद्मश्री भारत रत्न-वत्न से बहुत बड़ी हैं। मैं तो नगर-नगर, गाँव-गाँव चिन्गारी भर रहा हूँ।'' (साप्ताहिक हिन्दुस्तान १५.५.१९६३)

मेरी दृष्टि में स्वातंत्र्योत्तर राष्ट्रीय काव्य की नूतन उज्ज्वलधारा का सबसे बड़ा प्रमाण है- नेपाली और अन्य कवियों का काव्य। हिमालयवासी नेपाली ने आहत हिमालय की पुकार को सुना। वह सब कुछ छोड़ कर आया। उसने हिमालय की पुकार को सबको सुनाना आरंभ किया। वह अहिंसा, भाई-भाई और पंचशील की असफलता की चर्चा कर जनजीवन को जागृत करने लगा। वस्तुतः वह **'वन मैन आर्मी'** बन गया। नगर-नगर और गाँव-गाँव उसका उसकी निर्भीक वाणी गूँजने लगी। वह हिमालय, कैलाश और गंगा की ओर से चालीस करोड़ भारतीयों को मोह प्रमाद और भ्रम से मुक्त करने लगा।

शंकर की पुरी, चीन ने सेना को उतारा।
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा॥
हो जाए पराधीन नहीं गङ्गा की धारा।
गङ्गा के किनारे को शिवालय ने पुकारा॥

इस राष्ट्रीय काव्य-धारा की मूल प्रेरणा अपनी मातृभूमि के प्रति सहज-स्वाभाविक निष्ठा-श्रद्धा है। अपने निःसर्ग सुन्दर देश की विशालता, अखण्डता और पावनता पर मुग्ध समर्पण इस काव्य की प्राणशक्ति है। कवि नेपाली ने लिखा है-

धवल हिमांचल/निर्झर चंचल/गंगा का जल/यमुना का जल
गौरी शंकर/खड़ा धरा पर/अपने सिर पर/विश्व मुकुट पर
है चँवर डुलाती/मेघ-माल/भारत अखण्ड/भारत विशाल।

अपने स्वाधीन देश की रक्षा में असमर्थ सरकार की अविवेकपूर्ण नीति पर प्रहार करके कवि ने कुंठित जीवन के नूतन तेजस्वी व्यक्तित्व को ही प्रस्तुत कर दिया है। कवि ने इतनी निर्भीकता से संघोष किया है कि भ्रम एवं प्रमाद का कुहासा छँटने लगा-

ओ राही! दिल्ली जाना तो कहना अपनी सरकार से
चर्खा चलता है हाथों से, शासन चलता तलवार से।

ऐसा लगा कि अहिंसा, पंचशील और चीन के प्रति मोहमुग्धता ने अंधकार का वितान तान दिया था। सत्य का सूरज उस कुहासे में छिप गया था। चिंतन की दिशा भटक गयी थी। इसी अँधेरे में आक्रमण हो गया था। अतः **कविवर नेपाली** का स्वर-**हिमालय ने पुकारा**- नए आलोक का स्वर बनकर गुंजरित होने लगा। भारत की जागृत आत्मा का स्वर बन गया। यह स्वर ऊँचा उठता गया। धरती से आकाश तक स्वर गूँजने लगा। उसने घर के द्वार पर शत्रु की ललकार को चुनौती दे दी। ऐसे तो वह सन् १९४४-४५ में ही अहिंसा-नीति पर संशय करने लगा था। सन् १९६२-६३ में उसने शूर-धर्म को मुखरित किया। वह देश का चारण कवि बन गया।

दुश्मन तेरे घर में, खेल रहा होली है
पर तेरे हाथों में, भिक्षुक की झोली है
हथियारों के बदले, फूलों की छड़ियाँ हैं
आज आत्मरक्षा में मरने की घड़ियाँ हैं
इसलिए कहता हूँ जागो ओ दीवानो
दुश्मन को पहचानो, लड़ने का ढंग जानो।

नेपाली की राष्ट्रीय चेतना अतीत गौरव और सांस्कृतिक गरिमा की प्रशस्ति में नहीं बँधी थी। इनकी राष्ट्रीय चेतना **निराला की चेतना की अगली अभिव्यक्ति है।** इसीलिए **कवि ने शोषण मुक्त समतामूलक समाज की रचना के संकल्प को बार-बार ध्वनित किया है।** मातृभूमि के नैसार्गिक रूप पर मुग्ध होना, स्वाधीनता के लिए संघर्ष और समतापूर्ण नए समाज की रचना का संकल्प नेपाली की राष्ट्रीय चेतना की विशेषताएँ हैं। एतदर्थ कवि ने कहीं भी समझौता नहीं किया है। किसी पूर्वाग्रह को स्वीकार नहीं किया है। स्वातंत्र्योत्तर संघर्ष के सन्दर्भ में किसी दबाव को बर्दाश्त नहीं किया है– **यह उत्तर छायावादी नेपाली की पहचान है–**

स्वराज्य के विधान में नवीन राग चाहिए
कि अर्थ का, जमीन का समान भाग चाहिए
समाज पर कभी रहे न व्यक्ति की प्रधानता
कि हो समाज राज में मनुष्य की समानता।

प्रगतिवाद और प्रयोगवाद नेपाली के यथार्थबोध को अपना नहीं सके। वे दोनों पश्चिमी दृष्टि के समष्टिवाद और व्यष्टिवाद के द्वन्द्व में राष्ट्रीय यथार्थ की उपेक्षा कर रहे थे। सच्चाई यही है कि बिहार की भूमि ने उत्तर छायावाद को सही पहचान प्रदान कर दी थी। परन्तु इसका सम्यक् विवेचन-विश्लेषण नहीं हो सका है। अतः यह एक लघु प्रयास है।

□

'त्रिपाठी भवन'
राजेन्द्रनगर, पथ सं. - १३ए
पटना - ८०० ०१६

मुझको तो वे पहचानेंगे ....

● डॉ० नंदकिशोर नंदन

साहित्य सरस्वती का वह मंदिर है, जहाँ प्रवेश के लिए कोई चोर-द्वार नहीं है कि हर कोई प्रवेश कर पाए। यहाँ प्रवेश के लिए कबीर के शब्दों में **"जो घर जारे आपनो चलै हमारे साथ"** की शर्त लगी है। यही कारण है कि **कबीर** हों या **तुलसी, प्रेमचंद** हों या **निराला, मुक्तिबोध** हों या **नेपाली**- यहाँ सबको अभावों की दारुण ज्वाला में जलते हुए साहित्य-सृजन करना पड़ा है। यहाँ व्यक्तिवाद अथवा अवसरवाद के लिए न अवकाश है, और न स्थान। साहित्य-सृजन का बिरवा व्यक्तिगत कामना की कब्र पर ही पल्लवित और पुष्पित होता है। कवि **गोपाल सिंह नेपाली** ने भी अभावों के बीच अपनी काव्य-यात्रा की, जो बीच में ही दुर्भाग्यपूर्ण ढंग से समाप्त कर दी गई। यह सच है कि उन्होंने आजीविका के लिए फिल्मों में गीत लिखना तक स्वीकार किया किन्तु, बम्बई के उर्दू शायरों और कव्वाल किस्म के गीतकारों के बीच न केवल हिन्दी को प्रतिष्ठित किया, वरन् हिन्दी-फिल्मी गीतों के स्तर को गम्भीरता और ऊँचाई भी दी। फिल्मों में जाने के कारण हिन्दी के अनेक नकचढ़े आलोचकों ने उनकी कविताओं की अन्तर्यात्रा किए बगैर यह फतवा दे डाला कि नेपाली के काव्य में गम्भीरता नहीं है। इनमें कुछ ऐसे स्वनामधन्य आलोचक हैं, जो प्रगतिशील लेखक संघ की उधार की सीढ़ी पर चढ़कर **नेपाली** ही नहीं, **अरुण कमल** जैसे मानवीय संवेदना के महत्त्वपूर्ण कवि पर भी फतवा देने से बाज नहीं आते। उनके लिए वक्तव्यों की तुकबन्दी और गर्जन-तर्जन वाली तथाकथित कविताएँ ही महान् कविताएँ हैं, लेकिन जीवन-मर्म से गहन स्तर पर साक्षात्कार कराने वाली कविताएँ बचकानी हैं। बहरहाल, यहाँ हम **नेपाली** की कविताओं से गुजरते हुए यह देखने का प्रयास करेंगे कि ऐसे स्वयम्भू आलोचकों की टिप्पणियों के संदर्भ में **नेपाली** का काव्य गम्भीर है अथवा नहीं?

कवि **नेपाली** की **काव्य-यात्रा सन् १९२९ से ही आरम्भ हो गई थी** और उनकी **संदेहास्पद मृत्यु १९६३ के १७ अप्रैल को भागलपुर में हुई थी।** तीन दशकों से भी अधिक बड़े काल-खण्ड में लिखी गई उनकी कविताएँ उनकी अप्रतिम काव्य-प्रतिभा के सुन्दर उदाहरण हैं। **श्रीपाल सिंह क्षेम** ने उनके विशिष्ट अवदान को रेखांकित करते हुए लिखा है **"छायावाद के तृतीय उत्थान" के मानववादी-स्वच्छन्दतावादी कवियों में 'नेपाली' का प्रमुख एवं अविस्मरणीय स्थान है। नरेन्द्र शर्मा** के मानववाद को **नेपाली** ने प्रकृति की सहज सुषमा का मधुरालोक और प्रेम की तरल हार्दिकता प्रदान कर लोक-निकटतर बनाया है। प्रकृति के सहज अनगढ़ स्वरूप के प्रति जो तन्मयता **नेपाली** की रचनाओं में है, वह इस उत्थान के कवियों में ही नहीं, प्रथम और द्वितीय उत्थान के कवियों में भी दुर्लभ है।" (साहित्य कोश, द्वितीय भाग, पृष्ट १३८)।

यहाँ प्रकृति-सम्बन्धी दो कविताओं की विशेष रूप से चर्चा करना चाहूँगा, जिन पर क्रमश; **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (घास)** और **महाकवि प्रसाद (बेर)** मुग्ध थे और जिनकी प्रशंसा करते हुए अघाते नहीं थे। **'घास'** शीर्षक कविता हिन्दी की अद्वितीय कविताओं में है।

'**घास**' पर विश्व-साहित्य में अनेक कविताएँ लिखी गई हैं, जिनमें **वर्ड्सवर्थ** और **वॉल्ट कीट मैन** की कविताएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। लेकिन **नेपाली** की '**घास**' कविता एक अलग प्रकार की कविता है। प्रकृति की तरह सहजता **नेपाली** की कविता में भी है। कवि **घास** को उस परम सत्ता की असीम करुणा के रूप में अनुभव करता है और इसी **घास** ने तो उसे सैनिक पिता की तरह हाथ में बन्दूक की जगह लेखनी दे दी है। यह हरी घास की ही महिमा है कि कवि के अन्तःकरण से कोटि-कोटि मनुष्यों के विषाद और दुःख मिटाने वाले मधुर गीत मुखरित होते हैं। जब बिना किसी प्रयत्न के उसके आँगन में सहज रूप में हरीतिमा बिखेरने वाली जीवनेच्छा की प्रतीक हरी **घास** शीत ओलों और प्रखर ताप से जूझते हुए पनप उठती है, तब फिर क्यों नहीं उसके जीवन में भी निर्मल प्रेम की मन्दाकिनी प्रवाहित होती रहेगी-

इन घासों पर लेटे-लेटे क्यों हूँ, निराश, चिन्तित, उदास चाहिए
सदा सरिता-समान करना इस जीवन-भर प्रयास
करके प्रयत्न फिर उगा सकूँगा क्यों न हृदय में विकल प्रेम
जब बिना यत्न के उगती है मेरे आँगन में हरी घास
कितने लाते मंजुल मोती सागर से नित करके प्रयास
कितने चुनते हैं बालू में हीरे सागर के आस-पास
मैं इन रत्नों के लिए व्यर्थ क्यों दौड़-दौड़ कर करूँ यत्न
भर लाती है जब ओस-बूँद मेरे आँगन में हरी घास
मुर्झा जाते हैं फूल तुरंत होते ही कलियों का विकास
सारा उपवन का उपवन ही हो जाता है छन में उदास
पर, सदा रहूँगा जीवन में मैं मुस्काता, गाता, प्रसन्न
ऐसी ही थी, वैसी ही है मेरे आँगन में हरी घास
यह घास नहीं, पनप उठी मेरे जीवन की मधुर आस
मैं तो रहता हूँ महलों में, पर प्राण यहीं करते निवास
बस गया यहाँ तो गलती से उस प्रभु की, सुन्दर, सुखद, स्वर्ग
क्या समझ लगा दी थी उसने मेरे आँगन में हरी घास

(उमंग, पृष्ठ संख्या ६३)।

कहना न होगा कि **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी अभिनंदन-समारोह** में जब नेपाली ने यह कविता पढ़ी, तो **द्विवेदी** जी उन्हें प्रकृति के महान कवि के रूप में स्मरण किया था। इसी तरह **प्रसाद** जी उनकी इसी संग्रह की कविता '**बेर**' अक्सर गुनगुनाया करते थे। एक बार कविवर **पं० नरेन्द्र शर्मा** नेपाली जी के साथ **प्रसाद** जी से मिलने गए तो **प्रसाद** जी स्नान करते हुए गा रहे थे-

''देहरादून के मधुर बेर
जंगल में मिलते ढेर-ढेर।''

जब बाहर निकले तो **प्रसाद जी** ने **नरेन्द्र शर्मा** से **नेपाली जी** का परिचय पूछा, तो उन्होंने बतलाया कि जिनका गीत अभी आप गुनगुना रहे थे, वही **श्री गोपाल सिंह नेपाली** हैं। **प्रसाद** जी ने नेपाली जी को गले लगा लिया था। तात्पर्य यह कि नेपाली काव्य-सृजन की नैसर्गिक प्रतिभा के धनी कवि थे। उनकी काव्य-शैली उनकी अपनी और मौलिक काव्य-शैली थी। यहाँ यह तथ्य भी उल्लेखनीय-स्मरणीय है कि नेपाली के कवि-व्यक्तित्व में अक्खड़ता और स्वाभिमान की प्रखरता का कारण एक ओर लड़ाकू सैनिक का पुत्र होना है, तो दूसरी ओर **'सुधा'** पत्रिका के सम्पादन-काल में पौरुष के प्रतिमान **निराला** के साथ उनका निकटतम साहचर्य है। कविता कवि के जीवनानुभावों से निर्मित व्यक्तित्व की ही अभिव्यक्ति है, वह जो है, उसी का प्रक्षेपण उसका काव्य है। जहाँ कवि के जीने और रचने में दूरी होती है, वहाँ कविता आरोपित और कृत्रिम हो जाती है। **इलियट** ने भी बाद में यही अनुभव किया था। **'उमंग'** में जीवन के अनेक भावों की मर्मस्पर्शी व्यंजना द्रष्टव्य है। प्रकृति उनकी प्रायः सभी तरह की कविताओं में अपनी उपस्थिति से जीवनानुभव को गहन और मार्मिक अभिव्यंजना प्रदान करने में सहायक हुई है। उदाहरण के लिए **'उमंग', प्रेम, प्रतीक्षा, लालसा, करुणा** और **'मस्ती'** शीर्षक कविताएँ द्रष्टव्य हैं। **'करुणा'** शीर्षक कविता में कवि ने करुणा की सूक्ष्म भावना को जैसे एक सजीव मानवीय व्यक्तित्व ही नहीं दिया है, जीवन के लिए उनकी अनिवार्यता को भी इस हृदयस्पर्शी रूप प्रदान किया है। प्रस्तुत पंक्तियों में करुणा की यह सरल और उदात्त व्यंजना चिरस्मरणीय है :

बिछड़े की साथी बनकर जग में रहती है करुणा
सुख यहाँ और ही पाते, पर दुःख सहती है करुणा
सहकर भी इतने दुःखड़े, क्या कुछ कहती है करुणा
बस सींच दुःखी का बिरवा घर-घर बहती है करुणा
पीड़ित मन की थोड़ी-सी पीड़ा रहती है करुणा
इस जग में बोझ दुःखी का कुछ कम करती है करुणा
अन्तर की गागर इतना छल-छल भरती है करुणा
हल्का-सा धक्का लगते ही दृग से झरती है करुणा

(उमंग, पृष्ट ५३)।

कवि नेपाली ने स्वतंत्र भारत में एक समर्पित जनकवि की भूमिका में **'वन मैन आर्मी,** की भूमिका में अपना सर्वस्व न्योच्छावर कर दिया। फिर भी उन्हें वह सम्मान जीवन पर्यन्त नहीं मिला, जिसके वे सच्चे उत्तराधिकारी थे। देश स्वतंत्र हुआ तो करोड़ों उपेक्षित जन की आकांक्षाएँ आसमान छूने लगीं कि वे भी अब सुखी, स्वतंत्र और मानवीय गौरव का जीवन व्यतीत कर सकेंगे। लेकिन राजसत्ता का चरित्र वही रहा है जो अग्रेजों का था। गरीब, गरीब होते चले गए, और अमीर, अमीर होते चले गए। कवि **नेपाली** ने **'रोटियों का चन्द्रमा'** शीर्षक कविता में कोटि-कोटि भारतीयों की यातना को मार्मिक स्वर दिया है :

दिन गए, बरस गए, यातना गयी नहीं,
रोटियाँ गरीब की, प्रार्थना बनी रहीं।

विश्व के अधिक दु:खी हो रहे अधिक दु:खी, विश्व के अधिक सुखी हो रहे अधिक सुखी कागजों में रह गई क्रान्तियाँ, चतुर्मुखी तख्त भी उलट गया याचना गई नहीं, रोटियों गरीब की, प्रार्थना बनी रहीं।

आज के समाज में व्याप्त अराजकता, हिंसकता और लूट-पाट की भविष्य वाणी बहुत पहले अर्थात् १९५५ में ही इस कवि ने की थी और एक प्रहरी राष्ट्र कवि के रूप में राष्ट्र के कर्णधारों को चेतावनी दी थी;

कर्णधार तू बना, तो हाथ में लगाम ले
क्रान्ति को सफल बना, नसीब का न नाम ले
भेद सर उठा रहा, मनुष्य को मिटा रहा
गिर रहा समाज, आज बाजुओं में थाम ले
त्याग का न दाम ले।
यह स्वतंत्रता नहीं कि एक तो अमीर हो
दूसरा मनुष्य तो रहे, मगर फकीर हो
न्याय हो तो आर-पार एक ही लकीर हो
वर्ग की तनातनी, न मानती है चाँदनी
चाँदनी लिए चला तो घूम हर मुकाम ले
दे बदल नसीब तो गरीब का सलाम ले
त्याग का न दाम ले।

सन् १९५९ में जब चीनी-सैनिकों के हमले में हमारे भारतीय सैनिक शहीद हुए तो भारतीय स्वाभिमान के मूर्तिमान प्रतिनिधि नेपाली ने हमें सचेष्ट करते हुए राष्ट्र को ललकारा था और संकेत दिया था कि चीन भारत पर आक्रमण करेगा। कहना असंगत नहीं कि उस समय हमारे एक राष्ट्रीय कवि स्वर्ग की अप्सरा की प्रणय-गाथा लिखकर 'कामाध्यात्म' का दर्शन दे रहे थे, मगर यह कवि देश में घूम-घूम कर अलख जगा रहा था :

शंकर की पुरी में चीन ने सेना को उतारा,
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा।

है भूल हमारी वह छुरी क्यों न निकाले
तिब्बत को अगर चीन के करते न हवाले
पड़ते न हिमालय के शिखर चोर के पाले
समझा न सितारों ने घटाओं का इशारा,
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा।

इतिहास पढ़ो-लिखो तो यह मिलती है शिक्षा
होती न अहिंसा से कभी देश की रक्षा
क्या लाज बची जबकि मिली प्राण की भिक्षा,
तलवार उठा लो तो बदल जाए नजारा,
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा।

(हिमालय ने पुकारा, पृष्ठ २०)

स्पष्टतः कवि नेपाली का सम्पूर्ण काव्य, सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र-देवता के चरणों में समर्पित सदैव सौन्दर्य और सुगंध बिखेरने वाले पुष्पों की मनोरम माला है।

यह इसलिए सम्भव हुआ कि इस कवि की कामना भी यही रही है कि वह इस वसुधा के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दे।

यह विस्तृत वसुधा सुन्दर है, मेरा सुख-दुःख का घर जगमग-जगमग रे आँगन, झिलमिल-झिलमिल छत अम्बर कर, मैं गली-गली इस जीवन की फिरता हूँ जीवन लेकर, कर दूँ इसके चरणों पर यह एक विश्व न्योछावर। (उमंग, पृष्ठ ३३) □

हिन्दी-विभाग
बी० आर० ए० बिहार विश्वविद्यालय
मुजफ्फरपुर (बिहार)

फिल्मी गीतों की दुनिया में जी० एस० नेपाली

● डॉ० सतीशराज पुष्करणा

बिहार के ऐतिहासिक जिले पश्चिम चम्पारण के बेतिया शहर में कालीबाग दरबार (नेपाली रानी महल) में १/९ गोरखा राइफल्स के हवलदार मेजर **श्री रेल बहादुर सिंह (स्व०)** के यहाँ ११ अगस्त, १९११ (जन्माष्टमी विक्रम संवत् १९६८) को एक शिशु का जन्म हुआ, जिसे **गोपाल बहादुर सिंह** नाम दिया गया। इस होनहार शिशु को आगे चलकर हिन्दी-साहित्य में **गोपाल सिंह नेपाली** के नाम से जाना गया।

सन् १९४४ में भारत की उद्योग-राजधानी मुंबई (तब बम्बई) में संस्कृत के महाकवि कालिदास शताब्दी समारोह का भव्य आयोजन किया गया था। इस महत्त्वपूर्ण एवं पुनीत अवसर पर गीतों के राजकुमार **गोपाल सिंह नेपाली** को भी काव्य-पाठ हेतु आमंत्रित किया गया था। इस भव्य समारोह के अवसर पर आयोजित भव्य कवि-सम्मेलन में **नेपाली** के गीतों का ऐसा रंग जमा कि इस सम्मेलन में उपस्थित **पी० एल० सन्तोषी**, जो स्वयं भी फिल्मिस्तान के निर्माताओं में एक होने के साथ-साथ एक श्रेष्ठ गीतकार भी थे, **नेपाली** के गीतों से प्रभावित होकर उन्हें फिल्मिस्तान में आकर उनसे भेंट करने हेतु आमंत्रित किया। **नेपाली** ने इस यात्रा की उसे उपलब्धि माना और अगले ही दिन **संतोषी** से जा मिले। **संतोषी** ने अपने मित्र निर्माता **एस० मुखर्जी** से भी इन्हें न मात्र मिलवाया, अपितु इनके काव्य-पाठ की भूरि-भूरि प्रशंसा भी की और इन्हें चार वर्षों हेतु दो हजार रुपए प्रति माह पर अनुबंधित कर लिया। १९४८ तक अनुबंध के अनुसार **नेपाली** ने मात्र फिल्मिस्तान के लिए ही गीत लिखे।

तत्कालीन समय में हिन्दी-कवियों में **प्रदीप, शैलेन्द** और **भरत व्यास** ही अधिक लोकप्रिय थे। शायरों के साम्राज्य में अपने लिए स्थान बना पाना, किसी हिन्दी के साहित्यिक कवि के लिए इतना सरल कार्य न था। **शैलेन्द्र** के अतिरिक्त प्रायः हिन्दी-गीतकारों को धार्मिक फिल्मों के लिए ही स्मरण किया जाता था। नेपाली जी के साथ भी यही हुआ। सर्वप्रथम **'तिलोत्तमा'** फिल्म हेतु गीत लिखे। बाजार में आते ही इन गीतों की धूम मच गयी और **हिन्दी का कवि गोपाल सिंह नेपाली फिल्मों में जी० एस० नेपाली नाम से लोकप्रिय गीतकार हुआ।** १९४८ से १९५६ तक नेपाली ने बिना किसी अन्य अनुबन्ध के, स्वतंत्र होकर गीत लिखने आरंभ किए। भक्ति फिल्मों के अतिरिक्त इनको अनेक अन्य सामाजिक फिल्मों के गीत लिखने का सुअवसर भी मिला, जिसमें यह पूर्णतः सफल रहे।

नेपाली ने १९४४ ई० से १९५६ ई० तक लगभग **४५ फिल्मों** हेतु करीबन **३५० गीत** लिखे। **'जय भवानी'** इनकी अन्तिम फिल्म थी। इस फिल्म का एक गीत जो **मुकेश** एवं **लता मंगेश्कर** के युगल स्वरों में स्वरबद्ध था, बहुत अधिक लोकप्रिय हुआ था-

शमा से कोई कह दे, कि उसके रहते-रहते
अन्धेरा हो रहा ......
कि तुम हो कहाँ, कि मिलने को यहाँ
परवाना रो रहा .....

यह फिल्म भले ही धार्मिक पृष्ठभूमि पर थी, किन्तु इसका यह गीत प्रेमपरक वियोग गीत था। नेपाली ने यों तो प्राय: सभी प्रकार, मूड और शड्स के गीत लिखे, किन्तु प्रेम एवं भक्ति गीतों में इनकी अलग एवं विशिष्ट पहचान बनी।

'प्रेम' शब्द अपने में बहुत व्यापक शब्द है। इसी कारण इसके अनेक-अनेक अर्थ एवं रूप हैं। प्रेम में श्रृंगार रस की प्रधानता होती है और उसमें करुण-रस भी परोक्ष रूप से आ ही जाता है। यही स्थिति भक्ति-गीतों की भी है। प्रेमपरक गीतों एवं भक्तिपरक गीतों में श्रृंगार एवं करुण रस कॉमन हैं। नेपाली ने अपने फिल्मी जीवन में इन दो महत्त्वपूर्ण रसों का भरपूर एवं सटीक उपयोग किया।

उस काल में एक गीत-

कभी आर करके, कभी पार करके, चले आओ हमारे अंगना।
राजा के मन में, रानी तेरी बनके, चली आऊँ तुम्हारे अंगना॥

लोकप्रियता के शिखर का स्पर्श कर रहा था। यह युगल गीत फिल्म **'सफर'** का था। इस गीत के माध्यम से प्रेमी-प्रेमिका की श्रृंगारिक भावनाओं को इतने सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त किया गया था कि प्रत्येक प्रेमी-प्रेमिका को ऐसा प्रतीत होता था, जैसे वह उन्हीं के मन की भावनाओं को कवि ने सार्थक शब्द दे दिए हों। प्रेमी अपनी प्रेमिका को मिलन हेतु आमंत्रित करता है और प्रेमिका उस स्नेहिल एवं आत्मीय आमंत्रण को अति सहजता से स्वीकार कर लेती है। और प्रेमी उस स्वीकार से उस सीमा तक अभिभूत हो उठता है कि वह प्रेम की मृदुल उमंग एवं उष्म साहस के वशीभूत होकर कह उठता है-

अंधियारी रात में मैं हूँ किनारे, घर मेरा सूना तुम को पुकारे।
घड़ी गिन-गिन के जरा बन-ठनके, चली आना हमारे अंगना॥

नेपाली के प्रेमपरक गीतों में **'नाग पंचमी'** के गीतों को तो विस्मृत किया ही नहीं जा सकता। सन् १९५५ के आसपास इस फिल्म का यह गीत भी लोकप्रियता के शिखर तक पहुँचा था। उस गीत की कतिपय पंक्तियाँ इस प्रकार थीं-

ओ नाग कहीं जा बसियो रे,
मेरे पिया को न डसियो रे!

ख्यातिलब्ध गायिका **आशा भोंसले** के स्वर में इसको चार-चाँद लग गए थे। उन्होंने अपने स्वर के माध्यम से गीत की भावना को इतनी गहराई तक उतार दिया था कि जहाँ तक कवि की भावना पहुँची थी। यही वह फिल्म थी जिस फिल्म से अनेक असफलताओं के पश्चात् बिहार के ही पुत्र **चित्रगुप्त** की संगीत-निदेशक के रूप में पहचान हुयी और फिर **चित्रगुप्त** ने जीवन पर्यान्त पीछे मुड़कर नहीं देखा।

इसी फिल्म का इनका निम्न वियोग गीत भी बहुत लोकप्रिय हुआ था। इस फिल्म में **सती विह्वला** अपने पति का शव लेकर विक्षिप्त-सी हुयी वन-वन, गली-गली गाती फिरती है- कि दर्शक रो-रो उठते हैं। **नेपाली** जहाँ साहित्य की नब्ज को ठीक से समझते थे, वहीं उन्होंने फिल्मी गीतों की परम्परा को भी सही ढंग से समझा-पकड़ा और अपने साहित्यानुभव का फिल्मी-गीतों में भरपूर उपयोग किया। इस कथन की सत्यता हेतु **'नागपंचमी'** के निम्न गीत को पूरी गहराई में जाकर देखा-परखा जा सकता है-

धरती से गगन तक ढूँढूँ रे, मोरे पिया गए तो कहाँ गए
मैं रो-रो उन्हें पुकारूँ रे, मुझे रुला गए तो कहाँ गए

ओ! चाँद-सितारो तुम बोलो, ओ! मेह-मल्हारो तुम बोलो
आशा का दिया जला कर वो, फिर बुझा गए तो कहाँ गए
मोरे पिया गए तो कहाँ गए.....

नेपाली के साहित्यिक गीतों में जितना वैविध्य था, फिल्मी गीतों में भी कुछ कम वैविध्य नहीं था। हालाँकि यह सत्य है कि साहित्य में जहाँ कवि अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने हेतु पूर्णतः स्वतंत्र होता है, वहीं फिल्मी गीतों में स्वतंत्रता की गुंजाइश लगभग नगण्य होती है, किन्तु साहित्य-जगत् से इस दुनिया में आए कवि की यह अपनी प्रतिभा एवं विशेषता होती है कि वह फिल्म की माँग को पूरा करते हुए भी अपनी अभिव्यक्ति और साहित्यिकता हेतु बहुत ही कुशलता एवं चतुराई से अवसर निकाल लेता है। फिल्म **'नागपंचमी'** का निम्न गीत देखिए-

अरथी नहीं, नारी का संसार जा रहा है
भगवान तेरे घर का, सिंगार जा रहा है।

बजता था जीवन-गीत, दो साँसों के तारों में
टूटा है जिसका तार, वो सितार जा रहा है
भगवान तेरे घर का, सिंगार जा रहा है

भवसागर की लहरों में, ऐसे बिछुड़े दो साथी
सजनी मझधार, साजन उस पार जा रहा है
भगवान तेरे घर का, सिंगार जा रहा है

गीत की अपनी जो एक विशेषता होती है कि वह सीधा हृदय में उतर जाता है। उसमें मार्मिकता का पुट इतना घना होता है कि वह पत्थर दिल को भी पिघलने हेतु विवश कर देता है। यही विशेषता इस उपर्युक्त गीत की भी है। इस गीत की प्रत्येक पंक्ति में साहित्यिकता स्पष्ट झलकती है। मैं **सती विह्वला** की ही बात नहीं करता, यह स्थिति तो किसी भी प्रेमिका के प्रेमी से बिछुड़ने की स्थिति है। प्रेम की इतनी सघन अभिव्यक्ति तो साहित्यिक गीतों में भी ढूँढ़ने पर ही कहीं संभव हो पाएगी। इस गीत का एक-एक शब्द संवेदित करता है। यही कारण है कि यह गीत भी अपने समय में अत्यधिक लोकप्रिय हुआ था।

नेपाली के फिल्मी गीतों का संसार यद्यपि बहुत बड़ा नहीं, तो बहुत छोटा भी नहीं है। साढ़े तीन-सौ गीत कम नहीं होते। उन सभी गीतों की चर्चा किसी एक आलेख में संभव भी नहीं है और उनके सारे फिल्मी गीतों को ढूँढ़ निकालना भी यदि असम्भव नहीं, तो कठिन अवश्य ही है। वस्तुतः यह पूरी तरह से एक शोध का विषय है। फिर भी कुछ गीत अपनी चर्चा हेतु किसी को भी बाध्य कर सकते हैं।

'तुलसीदास' के जीवन पर बनी, इसी नाम से एक फिल्म थी। इस फिल्म की लोकप्रियता का कारण जहाँ इसकी प्रस्तुति एवं कथानक थे, वहीं उस कथानक को दर्शकों तक ठीक-ठीक ढंग से सम्प्रेषित करने में इसके गीतों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। जैसा कि सर्वविदित है कि महाकवि तुलसीदास अपनी धर्मपत्नी रत्नावली से इतना अधिक प्रेम करते थे कि वह उनका एक क्षण तक का वियोग सहन नहीं कर पाते थे। पत्नी की दुत्कार ने ही उन्हें राम-भक्ति की प्रेरणा दी थी। किन्तु प्रेम की उस अवस्था को अभिव्यक्ति देने हेतु नेपाली ने लिखा-

नैया जल्दी ले चलो, मुझे सैयां के अंगना।
उसके लिए दौड़ के, ले आया हूँ मैं कंगना॥

आस लेके जनम की, पास मेरे आयी है
मेंहदी के हाथों में, नंगी कलाई है।
लाज से बेचारी, बैठी सखियों के संग ना
उसके लिए दौड़ के, ले आया हूँ मैं कंगना।

तुलसी के प्यार में, रतना दीवानी
तुलसी की रतना को कंगना निशानी
सोने जैसा प्यार मेरा, कभी लगे जंग ना
उसके लिए दौड़ के, ले आया हूँ मैं कंगना

प्रेमी के रूप में तुलसी हों या स्वयं कवि- या फिर कोई अन्य- प्रेमिका से मिलने की बेताबी और उसे भेंट करने हेतु कंगना को दे देने की उत्सुकता, इस गीत में सुन्दरतम ढंग से अभिव्यक्त हुयी है। इस पूरे गीत में कहीं भी ऐसा प्रतीत नहीं होता कि कवि की ओर से कहीं भी जोड़-तोड़ या दबाव दिया जा रहा है, अपितु ऐसा प्रतीत होता है, जैसे झरने के पानी की तरह कल-कल करता यह गीत स्वयं अपने आप अपना विकास पाते हुए आगे बढ़ता जा रहा है। यही सहजता और स्वाभाविकता ही वस्तुतः किसी भी गीत के प्राण होती है। कोई भी गीत अपने ऊपर किसी प्रकार का कोई आरोपन या दबाव, न तो पसंद करता है और न ही दबाव चाहता है। 'तुलसीदास' फिल्म का ही एक अन्य गीत का उद्धरण यहाँ इस संदर्भ में प्रासंगिक होगा-

सावन में बदरा को देखे पपीहरा
मुख से पिया-पिया बोले
अपने साजन के आगे जनम भर
नाचूँ मैं पिया पुकार के
मेरे नयनों में दीप जले प्यार के

गीत साहित्यिक हो या फिल्मी, **नेपाली** अपने गीतों में प्रत्येक दृष्टिकोण से गीत को प्रकृति के अनुसार उसे स्वच्छन्द विचरण करने देते हैं और स्वयं उसके पीछे चलते हैं- किन्तु उनकी देख-रेख में गीत स्वतः अपने गंतव्य तक बिना किसी भटकाव के पहुँच जाता है। गीत की अपनी एक और विशेषता होती है कि वह ग़ज़ल की तरह ही बहुत नाजुक एवं मासूम तो होता ही है- उसके साथ-साथ वह अनुशासित एवं संयमित भी होता है। जो गीत इन परिधियों में न समा सके, उसे कोई कुछ कहे किन्तु **'गीत'** नहीं कहा जा सकता।

नेपाली के गीतों में सादगी, उन्हें अपने समकालीनों में अलग पहचान प्रदान करती है। नेपाली का यह गुण फिल्मी गीतों में तो है ही- साहित्यिक गीतों में भी है। उनके साहित्यिक गीतों एवं फिल्मी गीतों में स्वाभाविक अन्तर के अतिरिक्त अन्य कोई अन्तर नहीं है। इस संदर्भ में **'राजकन्या'** फिल्म का यह गीत देखा जा सकता है-

पहचान हुई अनजाने में, जब साथ हुआ, हम बिछुड़ गए
तस्वीर नयन में भी जिनकी, वो आँसू बनकर बिखर गए

नेपाली एक ऐसे जन-कवि थे, जो आम आदमी की, किसी भी मनोदशा को बहुत सहजता के साथ गीतों में बड़ी सुगमता से ढाल देते थे। उन्होंने एक तरह से अपने जीवन के फक्कड़पन और मस्तमौलेपन को भी गीतों में ढाल दिया था। उनके गीतों का यदि अद्योपान्त अध्ययन कर लिया जाए, तो शायद उनकी आत्मकथा की कमी नहीं अखरेगी। उन्होंने अपने साथ-साथ दूसरे के सुख-दुःख को न मात्र बहुत निकट से देखा था, अपितु समझा भी था, उसे पचाया भी था। तब उसे अपने गीतों के माध्यम से, जिससे जो कुछ लिया था, बड़ी विनम्रता-किन्तु स्वाभिमान के साथ लौटा भी दिया था। इस संदर्भ में **'नाग चम्पा'** के गीत की गहराई में जाकर उसे सहज ही महसूस किया जा सकता है-

किसी छलिये के नैनों के जाल में
मोरे नैना उलझ गए, मैं क्या करूँ
मैंने सबसे छुपाया जिस बात को
उसे सब कोई समझ गए, तो मैं क्या करूँ ?

फिल्मों के **जी० एस० नेपाली** ने भक्ति-गीत अधिक लिखे। इसके दो कारण हैं- एक तो तत्कालीन फिल्मी माहौल, जिसमें कवियों को भक्तिभाव की फिल्मों में ही अधिकतर उपयोग किया जाता था। दूसरा कारण यह है कि इनके घर-परिवार का माहौल पूर्णरूपेण अस्तिक था। इनके परिवार के सभी जन ईश्वर की सत्ता में विश्वास करते थे। किन्तु साहित्य में **नेपाली** ने जन-समाज, राष्ट्र और प्रकृति को ही अपने काव्य का विषय बनाया था। चूँकि वहाँ इन्हें भक्तिगीत लिखने का अवसर नहीं मिला। अतः फिल्मों में जब ऐसा सुअवसर इनके हाथ में आया, तो इन्होंने उसका भरपूर लाभ उठाया।

सन् १९५५-५६ में फिल्म **'नाग पंचमी'** में भगवान शंकर की यह स्तुति बहुत लोकप्रिय हुयी थी-

ॐ नमो शिवाय, ॐ नमो शिवाय
आरती करो, हर-हर की करो, नटवर की
भोले शंकर की, आरती करो शंकर की

सिर पर शशि का मुकुट संवारे, तारों की पायल झंकारे
धरती अम्बर डोल रहे, ताण्डव लीला से नटवर की
आरती करो शंकर की, भोले शंकर की

प्रो० नागरूप प्रसाद के अनुसार- "गोपाल सिंह नेपाली का जन्म बेतिया के रानी महल की बाहरी तंग कोठरी में हुआ था। रानी महल के निकट ही काली-मंदिर है। बेतिया शहर में स्थान-स्थान पर शिव के अनेक-अनेक मंदिर हैं। भगवान शिव का एक भव्य मंदिर आज भी उनके तत्कालीन घर के सामने यथावत् विराजमान् है। लगता है, जीवन के प्रारम्भ से ही नेपाली जी इस शिव मंदिर में आते-जाते रहे होंगे और शिव की कथाओं-गीतों से अवश्य ही प्रभावित हुए होंगे। फलतः **नेपाली** ने अपने फिल्मी भक्तिपरक शिव-सम्बंधी गीतों में अपनी इस भक्ति-भावना का सुन्दर प्रयोग किया है। इसका श्रेष्ठ उदाहरण फिल्म **'हर-हर महादेव'** के निम्न गीत में देखा जा सकता है-

शिव शंकर भोले-भाले, तुम तो भक्तों के रखवाले
तुमको लाखों प्रणाम, तुमको मेरा प्रणाम

हर-हर-हर महादेव का नारा, नर-नारी घर-घर का प्यारा
दीप तुम्हारा, तेल तुम्हारा, दुनिया है सब खेल तुम्हारा
हे खेल खेलने वाले! त्रिभुवन को बचाने वाले
तुमको लाखों प्रणाम, तुमको मेरा प्रणाम!!"

प्रो० प्रसाद के वक्तव्य से असहमति का कोई प्रश्न ही नहीं है। शंकरजी के प्रति उनकी आस्था काफी गहरी प्रतीत होती है। कारण, बिना आस्था, निष्ठा और श्रद्धा के किसी की भी भक्ति में कोई व्यक्ति न तो इतना डूब सकता है, और न ही ऐसी उत्कृष्ट भक्ति-भावना से ओत-प्रोत रचना रच सकता है। रचना करना और बात है, लोगों द्वारा उसे पसंद किया जाना नितान्त भिन्न बात है। **नेपाली जी** की यही विशेषता उन्हें लोकप्रियता के शिखर पर पहुँचा देती है। फिल्म **'हर-हर महादेव'** का ही एक अन्य गीत भी देखा जा सकता है। इस गीत को भी लोक-कण्ठ प्राप्त हो गया था। गीत देखें-

भोले नाथ से निराला, गौरी नाथ से निराला
ऐसी बिगड़ी बनाने वाला, कोई और नहीं

तुमने जग का कष्ट मिटाया, मुझको स्वामी क्यों बिसराया
अब तो मुझको बचाने वाला, कोई और नहीं
ऐसी बिगड़ी बनाने वाला, कोई और नहीं

नेपाली जी के शिव-भक्ति से ओत-प्रोत अनेक गीत लोकप्रिय हुए हैं। **नेपाली जी** को अपने परिवार से जो संस्कार मिले, उन्होंने उसे पूरी आस्था के साथ आत्मसात् कर लिया था। वह भारतीय सभ्यता-संस्कृति के रक्षक एवं पोषक हैं। किन्तु वह अडम्बरों के चक्कर में नहीं पड़ते और न ही उसे स्वीकार करते हैं। उनकी भक्ति सही एवं सीधी राह पर चलती है- कर्मकांड में उनका कोई विश्वास नहीं है। इस संदर्भ उनका एक गीत फिल्म **'शिव-भक्त'** से देखा जा सकता है-

मुझे तो शिवशंकर मिल गए
किया न जप-तप, तीर्थ न घूमा
अपने ही घर मिल गए
मुझे तो शिवशंकर मिल गए।

पाते हैं मुनि जिन्हें करके तपस्या
बातों में सुलझी मेरी समस्या
गगन में दीप दिखाने वाले
धरती पर मिल गए
मुझे शिवशंकर मिल गए।

संभव है **नेपाली जी** को भगवान शिव के प्रति अधिक आस्था रही हो, किन्तु अस्तिक व्यक्ति तो किसी भी देवी-देवता को पूजनीय ही मानता है। अन्य अराध्यों के प्रति भी आस्था-भक्ति वैसी ही होती है। जिस माहौल या जिस गली-मुहल्ले एवं नगर में मनुष्य जन्म लेता है, उसके संस्कारों का प्रभाव भी उस पर पड़ता ही है, उससे बच पाना किसी के लिए भी संभव नहीं होता। गीतकार **नेपाली** भी इस तथ्य का अपवाद नहीं हैं। तभी तो **'जय भवानी'** फिल्म में माँ की शान में लिखी यह **भेंट** विशेष रूप से द्रष्टव्य है-

मैया तेरी आरती से अन्धेरा टले
भक्त के अन्धेरे-घर में रोशनी जले
जय-जय भवानी, जय-जय भवानी
राजा की हवेली या निर्धन की झोपड़ी
तेरी दया है तो, वो धरती पे है खड़ी
जो तुम्हें पुकारे, उसे पाप क्या छले
जय-जय भवानी, जय-जय भवानी

बहुत पहले एक फिल्म आयी थी **'पवन-पुत्र हनुमान'** जिसका एक गीत बहुत ही लोकप्रिय हुआ था। वस्तुतः यह एक निवेदन या - एक प्रार्थना थी, भगवान राम से कि-

हे राम ! मुझे अपनी शरण में ले लो राम
तुमने लाखों पापी तारे, मेरी बारी बाजी हारे
मेरे पास न पुण्य की पूँजी, पद-पूजन में ले लो राम
हे राम ! मुझे अपनी शरण में ले लो राम।

फिल्म के संबंध में यह गीत तो प्रासंगिक रहा ही होगा, किन्तु नेपाली जी के अपने जीवन में भी यह कितना प्रासंगिक रहा होगा- कहना मुश्किल है, किन्तु कवि की विनम्रता तो एक

सच्चे भक्त के रूप में अवश्य ही मुखर होती है। भगवान को पाने हेतु अपने को शून्य एवं गौण बनाना ही पड़ता है। वस्तुतः भक्ति तभी प्राप्त होती है, हो सकती है। भक्ति ही वह सही रास्ता है, जो भक्त को भगवान के निकट ला देता है। एक भक्त के रूप में कवि की विनम्रता निम्न भजन में भी देखी जा सकती है- यह भजन भी **'हर-हर महादेव'** फिल्म से लिया गया है। इस भजन में भी कवि की निष्ठा देखते ही बनती है-

ओ दुनिया के मालिक राम, तेरी मरजी के हम हैं गुलाम
तुम्हें लाखों प्रणाम, कोटि-कोटि प्रणाम!!

तेरी इच्छा से हम जग में आए
सदियों से चलता है ये आना-जाना
ये जीने-मरने के काम
तेरी मरजी के हम हैं गुलाम !

कवि की भाषा इतनी सरल, सम्प्रेष्य और प्रांजल है कि इसके विश्लेषण की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। जो कुछ भी है- सामने, सीधा और स्पष्ट है। किन्तु फिर भी **नेपाली जी** का यह गीत इस दर्शन और अध्यात्म को बल देता है कि व्यक्ति का पुनर्जन्म होता है। कुछेक सम्प्रदाय इसे नहीं मानते, किन्तु नेपाली जी ने जिस परिवार में जन्म लिया, निस्संदेह उसकी आस्था उसी दर्शन में है, होगी। जो व्यक्ति **राम** का भक्त हो, या उसकी भक्ति एवं स्तुति करे, वह **कृष्ण** की स्तुति भी करेगा ही। सनातन धर्म के अनुसार **राम** एवं **कृष्ण** दोनों **विष्णु** के ही अवतार हैं। **राम** ने यदि त्रेता में जन्म लिया, तो **कृष्ण** द्वापर में पैदा हुए। **राम** ने **रावण** का वध किया, तो **कृष्ण** ने **कंस** का। दोनों का अवतार बुराई को मिटाने हेतु ही हुआ था। शायद यही कारण है **नेपाली** ने **कृष्ण** की स्तुति भी की। **'नरसी भक्त'** का यह भजन गायक **हेमन्त कुमार** के स्वर में पर्याप्त लोकप्रिय हुआ था। इस लोकप्रिय भजन की कतिपय पंक्तियाँ यहाँ प्रासंगिक रहेंगी-

दर्शन दो घनश्याम, आज मेरी अंखियाँ प्यारी रे
मन-मंदिर की ज्योति जगा दो, घट-घट वासी रे
दर्शन दो घनश्याम ....

मंदिर-मंदिर मूरत तेरी, फिर न दिखे सूरत तेरी
युग बीते न आई मिलन की पूरनमासी रे
दर्शन दो घनश्याम......

नेपाली जी ने कम समय में ही फिल्मों को बहुत कुछ दिया। इतना दिया कि यदि फिल्मी दुनिया तटस्थ होकर इस कवि के योगदान पर पूरी गंभीरता से विचार करे, तो इनके योगदान को सुन्दर शब्दों में विस्तार से रेखांकित किया जा सकता है। नेपालीजी को जब मौका मिला तो फिल्म **'तुलसीदास'** में तुलसी के प्रति जो आदर भाव प्रकट किया है, वह **निराला** के अतिरिक्त अन्य शायद ही किसी ने किया हो। इस संदर्भ में निम्न पंक्तियों का अवलोकन अनिवार्य प्रतीत होता है-

सच मानो तुलसी नहीं होते, तो हिन्दी कहीं पड़ी होती
उसके माथे पर रामायण की बिन्दी नहीं जड़ी होती

हमको वसन्त देकर जिसने, है बदले में संन्यास लिया
है धन्य सुहागन वो जिसने, भारत को तुलसीदास दिया।

जाओ कवि जब तक राम अमर, दुनिया में तेरा नाम अमर
दुनिया पूजेगी रघुवर को, गूंजेगा तेरा स्वर घर-घर
प्रभु ने तुमको दिया, तुमने हरि लीला को विस्तार दिया
है धन्य सुहागन वो जिसने भारत को तुलसीदास दिया।

नेपाली जी ने **'हिमालय फिल्म** एवं **'नेपाली पिक्चर्स'** नामक दो संस्थाएँ बनायीं, जिनमें उन्होंने गीत तो लिखे ही, उसके साथ-साथ इन फिल्मों का निर्माण एवं निदेशन भी किया। १९४९ में उनकी पहली फिल्म बनी **'नजराना'** उसके बाद **'सनसनी'** १९५१ में तथा **'खुश्बू'** १९५६ में तैयार हुयी। इन फिल्मों के असफल हो जाने के साथ ही नेपाली जी को पुनः बम्बई से बिहार लौट आना पड़ा और पुनः साहित्य को उसके गीतों का राजकुमार मिल गया। काश! उनकी ये निजी फिल्में सफल हो गयी होतीं तो अपने गीतों के माध्यम से नेपाली फिल्मी गीतों को और समृद्ध करते। परन्तु फिल्मों को अपने गीतों से जितना ही दिया वह भी कम उल्लेखनीय नहीं है।

नेपाली के अन्य गीत जो चर्चित रहे उनकी फिल्में क्रमशः इस प्रकार हैं- **मजदूर, लीला, बेगम, शिकारी, खिड़की, शिव रात्रि, शिव भक्त, गौरी पूजा, नवरात्रि, सती मदालसा, दुर्गा-पूजा, जयश्री, सती नाग कन्या, माया बाजार, नयी राहें आदि।**

अन्त में, उनकी निजी फिल्म **'नजराना'** के एक गीत की कतिपय पंक्तियाँ देखें-

दुनियाँ में जन्म लेते ही कोई अमीर है
कोई जनम से मौत तक बना फकीर है

हम इस जनम में भोगते हैं इस जनम का घेर
भगवान तेरे राज में अन्धेर है, अन्धेर।

इस गीत में साहित्य की तरह ही विद्रोही तेवर दिखायी देते हैं। कवि तो कवि ही होता है, उसे जो जब जैसा भाव या फिल्म के अनुकूल अवसर प्राप्त होता है, तो कवि खुलकर अपनी बात कहने से कहाँ चूकता है।

फिल्मी दुनिया एक ऐसी माया नगरी है, जहाँ पाँव फिसलने की पूरी-पूरी गुंजाइश रहती है, किन्तु **नेपाली** ने अपने फिल्मी गीतों में भी साहित्य की अस्मिता पर आँच नहीं आने दी, अपितु उसे अक्षुण्ण रखा। ऐसे गीत-मनीषी को, जिसने विकास दिया, हिन्दी-फिल्म-उद्योग सदैव-सदैव स्मरण करेगा, ऐसी महान् हस्ती की पुण्य-स्मृति को पुनः-पुनः श्रद्धा-सुमन। ☐

'लघुकथानगर', महेन्द्रू
पटना- ८०० ००६ (बिहार)

राष्ट्रीय स्वाभिमान के कवि : नेपाली

● डॉ० ओम प्रकाश साह 'प्रियम्वद'

नेपाली ने **'चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा'** जैसे ओजस्वी गीत से इस देश के तमाम वासियों को आन्दोलित कर दिया था और अपने-आप में एक राष्ट्र-सदृश्य दीखने लगे थे। नेपाली अपने को **'वन मैन आर्मी'** कहते थे और सचमुच वे थे भी ऐसे ही। उनकी स्मृति को श्रद्धांजलि देते हुए आकाशवाणी केन्द्र से **राष्ट्रकवि दिनकर** ने कहा था- 'नेफा और लद्दाख का एक सैनिक मारा गया जिनके नाम के साथ स्वर्गीय शब्द जोड़ने में हृदय आज भी फटने लगता है, वे हमारे रससिद्ध कवि और जनता के हृदयहार थे।' **भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद खाली वक्त में भजन की तरह नेपाली की इन पंक्तियों को गुनगुनाया करते थे-**

'गोरे रंग पे भस्म लगाये, डाल गले में मुण्डों की माला,
युग-युग से इस विश्व मंच पर, नाच रहा है डमरूवाला।'

नेपाली का अपना दर्शन था, स्वतंत्र विचार था, अलग नजरिया था। यों उनका संपर्क **शिवपूजन सहाय, जयशंकर प्रसाद, रामवृक्ष बेनीपुरी, सुमित्रानंदन पंत, हरिवंश राय बच्चन** जैसे रचनाकारों से था, यद्यपि उनके गीतों का अपना अलग रंग है। उन्होंने कहा भी-

'मैं हूँ अपना आप नमूना
मेरा अपना ढंग है।'

सन् १९६२ में चीनी आक्रमण के समय अपने देश पर संकट गहरा गया तो यह जनकवि भला चुप कैसे रहता! राष्ट्रीय संकट की बात निकलती तो **नेपाली** कह उठते- मेरे हाथ में बंदूक न सही, कलम तो है। **हिमालय ने पुकारा और मैं कलम का सिपाही बन गया।** उन्होंने बम्बई में एक प्रकाशन-संस्था भी खोली, जहाँ से राष्ट्रीय गीतों का संकलन **'हिमालय ने पुकारा'** का प्रकाशन किया। इन राष्ट्रीय गीतों को देश-भर में घूम-घूमकर वे गाते फिरते और देशवासियों को जगाने में लगे रहते-

भारत के प्यारे जागो - सोए सितारो जागो
जागो सितारे जागो - बैरी दुआरी आये

लद्दाख चलो, चीन जहाँ घुस के अड़ा है
नेफा को चलो, चोर जहाँ घुस के खड़ा है
हमने ही कभी चीनियों को बुद्ध दिया था
अब युद्ध से तलवार का जलवा दिखा दो।
इन चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो।

नेपाली राजनीतिज्ञों तथा सत्तासीनों के प्रति क्षोभ और आक्रोश से भरे थे। **'हिमालय ने पुकारा'** के माध्यम से उन्होंने भारत के सोये हुए यौवन और दमित पुरुषार्थ को जगाने का प्रयास किया है। कवि का आक्रोश नेताओं के भ्रष्ट चरित्र तथा चाटुकारों-चापलूसों से घिरकर यथार्थ से आँखें बंद किए रहने की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति पर फूट पड़ता है।

अंगरेजी शासनकाल में कवियों में राष्ट्रीय स्वर मुख्य था, किन्तु देश की आजादी के कुछ वर्षों बाद अर्थात् सन् १९५० के पश्चात् राष्ट्रीय रचनाओं का लेखन दो रूपों में होने लगा- पहला रूप था **योजना सम्बन्धी गीतों का** और दूसरा रूप था- **देश में फैले असंतोष को स्वर देने का प्रयास** तथा कभी-कभी देशवासियों की ओर से शासन की आलोचना। राष्ट्रहित के लिए चिन्तित कवि सत्ता और सरकार पर अंकुश बनाए रखते थे। **राष्ट्रकवि दिनकर** की रचना **'समर शेष है'** ऐसी ही मनोदशा की सर्जनात्मक प्रतिक्रिया है। ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

दो राह समय के रथ का घर्घर नाद सुनो
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।

इस सन्दर्भ में **नेपाली** सन् १९५६ में शासन तलवार से शीर्षक रचना में देश की शासन-व्यवस्था को सावधान कर चलते हैं-

ओ राही! दिल्ली जाना तो
कहना अपनी सरकार से
चरखा चलता है हाथों से
शासन चलता तलवार से
तुम उड़ा कबूतर अम्बर में
संदेश शांति का देते हो
चिट्ठी लिखकर रह जाते हो
जब कुछ गड़बड़ सुन लेते हो
वक्तव्य लिखो कि विरोध करो
यह भी कागज, वह भी कागज
कब नाव राष्ट्र की पार लगी
यों कागज की पतवार से
ओ राही! दिल्ली जाना तो
कहना अपनी सरकार से

यह रचना आज भी वैसी ही प्रासंगिक है जैसी अपने रचना-काल में थी।

उल्लेखनीय है कि चीनी आक्रमण के पश्चात् हिन्दी में लगभग सवा लाख रचनाएँ हुईं, जो राष्ट्रीय भाव-धारा से गहरे जुड़ी थीं। इस भाव-धारा के अन्तर्गत की गयी जिन दो रचनाओं का अन्यतम स्थान है वे हैं- **दिनकर** रचित **'परशुराम की प्रतीक्षा'** और **नेपाली** रचित **'हिमालय ने पुकारा'। दिनकर समस्या के समाधान के लिए मुखर रहे तो नेपाली राष्ट्रीय संकट से मुक्ति के लिए राहों की तलाश करते घूमते रहे।** नेपाली द्वारा हिमालय पर लिखी कविता के बारे में दिनकर ने कहा- **'मैं हिमालय' नामक कविता की अनेक पंक्तियों में जिस सौंदर्य की सृष्टि न कर सका; हिन्दी के महान् गीतकार नेपाली ने केवल दो पंक्तियों में कर दी है-**

'भारत को जो कुछ कहना है
उसका उद्गार हिमालय है।''

कवि नेपाली ने साहित्य में उभरती राजनीति और सत्तासीनों की चाटुकारिता पर एक ओर तो खेद प्रकट किया है और दूसरी ओर आत्मगौरव की अभिव्यक्ति की है। स्वतंत्र और **स्वाधीन कलम के धनी नेपाली** ने घोर निर्धनता के बावजूद कभी सत्ता की चाह नहीं की; न ही कभी अपना ईमान बेचा। इन्होंने लिखा-

तुम-सा लहरों में बह लेता
तो मैं भी सत्ता गह लेता
ईमान बेचता चलता तो
मैं भी महलों में रह लेता

अपनी लेखनी के बारे में इन्होंने कहा-

'हर दिल पर झुकती चली मगर, आँसू वाली नमकीन कलम
मेरा धन है स्वाधीन कलम।'

उनकी अंगरेजी हिन्दी से कम अच्छी नहीं थी। फिर भी वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के हिमायती थे। उन्होंने राजनीति की रोटी सेंकने वाले साहित्यकारों को आड़े हाथों लिया-

'औरों की भिक्षा से पहले तुम इसे सहारे अपने दो
हिन्दी है भारत की बोली तो अपने आप पनपने दो।'

हिन्दी राष्ट्रीय स्वाभिमान से जुड़ी है तथा संपूर्ण राष्ट्र की भावात्मक एकता के लिए आवश्यक है। यह चिंतन **नेपाली** की कलम से वर्षों पूर्व अभिव्यक्त हो चुका है-

'एक देश, एक राष्ट्र; एक राष्ट्रभाषा
एकता स्वतंत्र देश की ज्वलंत आशा।'

स्वतंत्रता-संग्राम को प्रखर बनाने की दिशा में भी **नेपाली** सचेष्ट हुए और राष्ट्रीय भावनाओं को जागृत करनेवाली रचनाएँ जोर-जोर से लिखने लगे। देश की चेतना जगाने के काम में भी लगे-

तुम कल्पना करो, नवीन कल्पना करो

नेपाली के उत्तरवर्ती काव्य-व्यक्तित्व पर दृष्टिपात करते हैं तो ज्ञात होता है कि वे पूरी तरह राष्ट्रीय चिंतन-प्रधान तथा ओजस्वी हैं। ये एक जनवादी कवि के रूप में भी उभरकर सामने आए। **'चाँदनी में झोपड़ी'** शीर्षक रचना की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं, **जिनमें जनवादी कवि की मानवतावादी भावना** देखी जा सकती है-

जग में बहुमत निर्धन का है
पर उसपर जग का शासन है
वह अपना राजमुकुट माँगे,
तो कानूनों की उलझन है।
जो कानूनों को तोड़े तो

तलवार लटकती रहती है
झोपड़ियों से चाँदनी लिपट
भर रात सिसकती रहती है।

गणतंत्र कहो या एकतंत्र
यह सारा तंत्र तमाशा है
जो जनता शक्ति देश की है,
वह रातें तकती रहती है
झोपड़ियों से चाँदनी लिपट
भर रात सिसकती रहती है।

वस्तुत: **नेपाली का संपूर्ण काव्य-व्यक्तित्व लोक-चेतना तथा मानवतावादी भावना से संपृक्त उत्तरोत्तर विकासोन्मुखी है।** इन्होंने **उमंग, पंछी, रागिनी, पंचमी, नवीन, नीलिमा, हिमालय ने पुकारा** इत्यादि सात काव्य-संग्रहों की रचना की; साथ ही कई पत्रों का सफल संपादन भी किया।

इनकी भाषा जनपदीय भाषा है, जो संस्कृति की छाप लिए है। गीतों की भावभूमि के अनुरूप ही भाषा में सहज प्रवाह है, गतिशीलता है। भावों के अनुकूल भाषा और शब्द संघठन, प्रचलित तद्भव शब्द उनके गीतों को शक्ति एवं आकर्षण प्रदान करते हैं। हिन्दी के कई श्रेष्ठ गीतकारों ने इसका अनुसरण किया है।

जवानी के उफान और यौवन के ज्वार से छलक उठने वाले अग्निपुंज **नेपाली के गीत रस के गागर हैं** और ये हैं वक्त एवम् राष्ट्र की सही आवाज; कलम और स्वर के जादूगर।

□

अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
जमालपुर कॉलेज, जमालपुर
(बिहार)

नेपाली की सौन्दर्य-चेतना

● डॉ० श्याम बाबू प्रसाद

नेपाली का बचपन देहरादून और मंसूरी जैसे रमणीक स्थलों पर बीता। अतः सौन्दर्य के प्रति प्रारम्भ से ही उनका झुकाव था। वे प्रकृति-सौन्दर्य के ही गायक नहीं हुए, अपितु उन्होंने रूप-सौन्दर्य को भी अपनी रचनाओं में जीवन्त कर दिया। नेपाली की काव्य-कृतियों के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने जीवन और जगत् के समस्त सौन्दर्य को अपने काव्य में चित्रित करने का प्रयत्न किया है। नेपाली जीवन्त सौन्दर्य-बोध के एक महत्त्वपूर्ण हिन्दी-कवि हैं।

नेपाली के काव्य में प्रारम्भ से ही रूप-सौन्दर्य का चित्रण मिलता है। **'उमंग'** में नेपाली प्रकृति-सौन्दर्य के चित्रण पर अधिक बल देते हैं, किन्तु, उनके परवर्त्ती संग्रहों में जीवन्त रूप-चित्रण मिलता है। **'पंचमी'** की **'रूप-दीप'** शीर्षक कविता नारी के सम्पूर्ण सौन्दर्य की सहज काव्यात्मक अभिव्यक्ति है:-

> **''सुमुखि, तुम्हारे रूप-दीप में भरा हुआ इतना प्रकाश था**
> **चहुँ दिशि अन्धकार से था जीवन में ऊब गया मैं**
> **वहीं तुम्हारी ज्योतिधारा सहसा उसमें डूब गया मैं**
> **जब उतराया मैं तरंग पर मंत्र-मुग्ध हो मैंने देखा**
> **काँप रहे तेरे अधरों पर खेल रहा स्वर्णिम सुहास था।''[1]**

रूप के लिए दीप का उपमान अत्यन्त पुराना है। संस्कृत कवियों ने सौन्दर्य के क्रम में दीप और दीप-शिखा का बार-बार उल्लेख किया है। वस्तुतः दीप्ति सौन्दर्य का मुख्य गुण या धर्म है जहाँ दीप्ति है, वहीं सौन्दर्य है। नेपाली ने अपनी कई कविताओं में रूप-दीप का प्रयोग किया है।

इतना ही नहीं, **नेपाली की नायिका सौन्दर्य की साक्षात् प्रतिमा है, लावण्य का जीवन्त प्रतिमान है।** उसके राग-रंग में इतनी रंगीनी है कि रंगीन चुनरी भी फीकी लगने लगती है, उसके कण्ठ में ऐसा संगीत है कि बाँसुरी का माधुर्य भी झूठा लगने लगता है:-

> **''मृग नैनी पिक बैनी तेरे सामने बाँसुरिया झूठी है।**
> **रग-रग में ऐसा रंग भरा, रंगीन चुनरिया झूठी है॥''[2]**

उसका मुख इतना गोरा है कि पूनम का चाँद उसके आगे फीका लगता है और गोरे मुख पर काले लम्बे बाल काले बादलों को भी लज्जित करने वाले हैं:-

> **''मुख भी तेरा इतना गोरा**
> **बिना चाँद का पूनम है**
> **है दरस-परस इतना शीतल**
> **शरीर नहीं है शबनम है**
> **अलकें पलकें इतनी काली घनश्याम बदरिया झूठी है।**
> **रग-रग में ऐसा रंग भरा, रंगीन चुनरिया झूठी है।''[3]**

कविता-कानन के पारिजात पुष्प नेपाली ने सौन्दर्य को एक नूतन जीवन-दृष्टि से देखा है। वह नायिका के रूप-सौन्दर्य को नए उपमानों के द्वारा व्यंजित करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहते हैं:-

मुख तुम्हारा अँधेरी डगर की शमा
रात बढ़ती गयी तो हुआ चन्द्रमा
याद तुमको किया, रोज हमने जहाँ
आँधियों में वहीं छा गयी पूर्णिमा

"तुम अछूती जवानी, अमर प्यार हम
तुम बिना राख की आग, अंगार हम
साथ रहते हुए हम अलग हो गए
तुम पहुँच से परे और संसार हम
तुम गगन से दिए जगमगाते रहे,
हम धरा से दिए झिलमिलाते रहे।
दो तुम्हारे नयन, दो हमारे नयन
चार दीपक सदा जगमगाते रहे।"[४]

इन पंक्तियों में कवि की आकांक्षा अपने तीव्र रूप में व्यक्त हुई है। वह नायिका के नेत्र-दीप के साथ अपनी आँखों में भी विश्वास और प्रेम की ज्योति जलाना चाहता है। कवियों ने नायिका की मोहक मुस्कान को भी उसके सौन्दर्य का उपादान माना है। **नेपाली** के अनुसार:-

"चाँद सूरज दिये, दो घड़ी के लिए
रोज आते रहे और जाते रहे
दो तुम्हारे नयन, दो हमारे नयन
चार दीपक सदा जगमगाते रहे।"[५]

'पंचमी' की **'विश्व सुन्दरी'** शीर्षक कविता में **नेपाली** ने रूप-सौन्दर्य को एक नया आयाम दिया है:-

"कुन्तल में बाँधे श्याम घटा
नयनों में नभ की नील छटा
अधरों पर बालारुण-रंजन
मृदु आनन में शशि-नीराजन।"[६]

इस संदर्भ में **डॉ० सतीश कुमार राय** ने सच ही कहा है- **"रूप-चित्रण की दृष्टि से नेपाली को आधुनिक हिन्दी-कविता का एक प्रतिनिधि कवि माना जा सकता है।** उनके रूप-चित्रण में दीप्ति है, सम्मोहन है, नवीनता है और समग्रता भी है। नायिका के नख-शिख वर्णन के क्रम में प्राकृतिक उपमानों का आश्रय लेकर वे अपनी प्रकृति-प्रियता का प्रमाण ही प्रस्तुत नहीं करते अपितु अपने रूप-चित्रण की संपूर्णता का साक्ष्य भी देते हैं।"

इस तरह **नेपाली** के रूप-वर्णन में **विद्यापति की विलक्षणता भी है, मतिराम की मादकता भी है, बिहारी का चातुर्य भी है और निराला की व्यंजकता भी।**

नेपाली के सौन्दर्य-बोध की दूसरी सजग अभिव्यक्ति उनकी प्रकृति-चित्रण सम्बन्धी कविताओं में मिलती है। नेपाली के पहले छायावादी कवियों ने प्रकृति के अप्रतिम सौन्दर्य को चित्रित किया था, उसका मानवीकरण कर उसे सजीव बना दिया था। **नेपाली मूलतः प्रकृति के कवि हैं** और उनके काव्य का अधिकांश प्रकृति-सौन्दर्य पर ही आधारित है। अपने पहले काव्य संग्रह **'उमंग'** में प्रकृति-सौन्दर्य का ध्यान करते हुए उन्होंने स्पष्ट कहा है:-

> **"मेरे मानस का मुकुल मूल**
> **था डाली पर रे रहा झूल**
> **वन की सुषमा पर रीझ, भूल**
> **खिल उठा तुरंत, हो गया फूल**
> **ये पीले, नीले, लाल रंग**
> **जैसे मेरे मन की उमंग।"**[८]

प्रकृति के साथ उनकी अभिन्नता इन शब्दों में भी व्यक्त हुई है:-

> **"मैं सरस सोम रस घोल-घोल**
> **तारों-सा खिड़की खोल-खोल**
> **पीपल-पल्लव-सा डोल-डोल**
> **विहगों की बोली बोल-बोल**
> **करता रहता हूँ, अभिनन्दन**
> **तुम कब समझोगे मेरे मन।"**[९]

नेपाली ने अपने प्रकृति सौन्दर्य के अन्तर्गत नदियों को, वृक्षों को, फलों को, पर्वतों को, फूलों और तितलियों को प्रायः सबको समेटा है।

पीपल प्रारम्भ से ही भारतीय संस्कृति को, उसकी शक्ति को व्यंजित करने वाला वृक्ष रहा है। इसकी दृढ़ता मूलतः भारतीय संस्कृति की ही दृढ़ता है। इस वृक्ष के सौन्दर्य को चित्रित करते हुए **नेपाली** का कहना है:-

> **"पीपल के पत्ते गोल-गोल**
> **कुछ कहते रहते डोल-डोल"**
>
> **जब-जब आता पंछी तरु पर, जब-जब आता पंछी उड़कर**
> **जब-जब खाता फल चुन-चुनकर**
>
> **पड़ती जब पावस की फुहार, बजते जब पंछी के सितार**
> **बहने लगती शीतल बयार**
>
> **तब-तब कोमल पल्लव हिल-डुल गाते सर्सर, मर्मर मंजुल**
> **लख-लख, सुन-सुन विह्वल बुलबुल**
>
> **बुलबुल गाती रहती चह-चह सरिता गाती रहती बह-बह**
> **पत्ते हिलते रहते रह-रह।"**[१०]

सरिता के सौन्दर्य को उसके जल की गतिशीलता को नेपाली ने इन पंक्तियों में रेखांकित किया है:-

"हिमगिरि के हिम से निकल-निकल
वह विमल दूध-सा हिम का जल
कर-कर निनाद कलकल-छलछल
बहता आता नीचे पल-पल
तन का चंचल, मन का विह्वल
यह लघु सरिता का बहता जल।"[११]

बेर जैसे सहज उपलब्ध फूल के सौन्दर्य को व्यक्त करते हुए नेपाली ने उसके महत्त्व की ओर भी संकेत किया है:-

देहरादून के मधुर बेर
जंगल में मिलते ढेर-ढेर
सामने खड़ा ऊँचा पहाड़
है गर्मी में भी यहाँ जाड़
फैली जंगल में घनी झाड़
हैं बेर नदी की आड़-आड़
पड़ता लाने में बड़ा फेर
देहरादून के मधुर बेर।"[१२]

नेपाली ने अपनी कई कविताओं में पार्वत्य प्रकृति-सौन्दर्य का चित्रण भी किया है। उनकी कई कविताओं में पर्वत अपनी दृढ़ता के साथ प्रस्तुत हुआ है। उनके अंतिम काव्य-संग्रह **'हिमालय ने पुकारा'** में हिमालय के कई रूप सामने आए हैं।

उदाहरणार्थ:-

"अम्बर के तले हिन्द की दीवार हिमालय
सदियों से रहा शान्ति की मीनार हिमालय
अब माँग रहा हिन्द से तलवार हिमालय
भारत की तरफ चीन ने है पाँव पसारा
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा।"[१३]

नेपाली के काव्य में हिमालय एक सांस्कृतिक प्रतीक है। उनके अन्य संग्रहों में भी पर्वतों का उल्लेख मिला है, किन्तु हिमालय उन्हें गौरव, जीवन्त प्रतीक प्रतीत होता है।

गीतों के राजकुमार कविवर गोपाल सिंह नेपाली को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए महाकवि दिनकर ने कहा था:- **"मैं हिमालय नामक कविता की अनेक पंक्तियों में जिस सौन्दर्य की सृष्टि नहीं कर सका, उस सौन्दर्य की सृष्टि हिन्दी के महान् गीतकार नेपाली जी ने केवल दो पंक्तियों में कर दी है:-**

"भारत को जो कुछ कहना है।
उसका उद्‌गार हिमालय है॥"

नेपाली के काव्य में चन्द्र, सूर्य एवं नक्षत्र-सौन्दर्य का भी चित्रण हुआ है:-

"इस रिमझिम में चाँद हँसा है।[१४]"

और

"हँस रही पूनों की रात
डाल पर आकर उलझा चाँद।[१५]"

सूर्य और तारे ईश्वरीय-सौन्दर्य की प्रतिच्छाया हैं। नेपाली ने अपनी दार्शनिकता की अभिव्यक्ति के लिए भी सूर्य और नक्षत्रों को माध्यम बनाया है:-

"सूरज को प्राची में उठकर
पश्चिम ओर चला जाना है
रजनी को हर रोज रात-भर
तारक-दीप जला जाना है।[१६]"

नेपाली के काव्य में सौन्दर्य अपनी जीवन्त सत्ता के साथ उपस्थित है। प्रकृति के एक-एक कण को उन्होंने अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। मुख्य रूप से नेपाली ने **'वसंत'** और **'पावस'** को अपने काव्य का आधार बनाया है, किन्तु यत्र-तत्र उन्होंने प्रतीक ऋतु को उसके सौन्दर्य को अपने काव्य में चित्रित किया है:-

"कुँज रस रूप बाँटता आता है ऋतुराज
कविता गूँज उठी कोकिला की बन पहली आवाज।[१७]"

वसंत के आगमन से कलियाँ खिल उठती हैं, फूल मुस्कुरा उठते हैं और भौंरे प्रेम के सुमधुर गान-गाने लगते हैं। पूरी प्रकृति नव-यौवना की तरह लावण्यमयी प्रतीत होती है:-

"अलि आज झूमता है
पीकर सुधा सुरभि की
वन की किशोर छवि की
वाणी वसन्त-कवि की
बढ़ स्वर्ण-रश्मि रवि की
अलि आज चूमता है।[१८]"

ऋतु वर्णन के साथ कवि ने माह के सौन्दर्य का भी चित्रण किया है। इस क्रम में उन्होंने सावन और रिमझिम फुहार प्रकृति को कितनी शीतलता देती है, कितना उल्लास देती है इसे कवि ही व्यक्त कर सकता है। भादों में प्रियतम की याद सताने लगती है, और विरही-मन प्रतीक्षा में गा उठता है, किन्तु नेपाली ने सावन-भादों को जीवन के सुख-दुःख के रूप में भी रेखांकित किया है:-

"घनी घटा की चमचम बिजली
पिछले दृश्य दिखाती है,
कमल हाथ में देकर हमसे
मन की बात लिखाती है।[१९]"

नेपाली ने ऋतु-सौन्दर्य के अन्तर्गत मेघों का सजीव चित्रण किया है। मेघ प्रारम्भ से ही आस्था और उमंग के प्रतीक रहे हैं। इनके आगमन से तप्त धरती सरस हो जाती है और आहत मन गुनगुना उठता है:-

"उमड़ रहे उस पार क्षितिज पर आज सघन घन श्यामल-श्यामल
हलचल मचा रहे उड़-उड़कर पंछी-दल से मेघों के दल
रोमांचित है मंत्र-मुग्ध है जल-थल-गगन अखिल भूमण्डल
ज्वार उठा-उठ चलीं हिलोरें आज गगन का सागर चंचल
सारा जग-दोलायमान है ज्यों सागर में लहर उछाले
पश्चिम-नभ में धूम मचाकर मेघ उठे सखि, काले-काले।[१०]"

प्रकृति सौन्दर्य के अन्तर्गत ही नेपाली ने पशु-पक्षी एवं वानस्पतिक-सौन्दर्य का चित्रण किया है:-

"फूलों पर मधुपों का गुनगुन
फूल चुग्गी का मंजुल रुनझुन
सुग्गों का फल खाना चुन-चुन
वह सब वन में लख-लख, सुनसुन
कैसा मन जो उठता न डोल
रे पंछी, मंजुल बोल-बोल।[११]"

नेपाली ने यत्र-तत्र मन- सौन्दर्य का वर्णन किया है:-

"नीरस विराग का काट फन्द
रे खोल हृदय का द्वार बन्द
उकसा-उकसा कर मधुर छन्द
बैठा खिड़की में मन्द-मन्द
फिर एक बार गाऊँ विहाग
खोई उमंग, उठ जाग-जाग।[१२]"

यह सच है कि नेपाली ने मनः सौन्दर्य के अन्तर्गत लज्जा, विस्मय आदि का चित्रण नहीं किया है, किन्तु करुणा, चपलता इत्यादि से सम्बद्ध उनकी पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं।

नेपाली की कविता में जो भाव-सौन्दर्य है, वह वस्तुतः मनः सौन्दर्य ही है। नायिका के रूप में जो सम्मोहन है, नेत्रों में जो विलास है, कनखियों में जो देखने की ललक है और मुस्कान में जो आमंत्रण है, उसे लक्ष्य करके नेपाली ने सच ही कहा है:-

"चाँद-सा हुस्न है तो गगन में बसे,
फूल-सा रंग है तो चमन में हँसे,
चैन चोरी न कोई हमारा करे
मन दुबारा-तिबारा पुकारा करे

हम तकें न किसी की नयन खिड़कियाँ,
तीर तेवर सहें ना सुने झिड़कियाँ
कनखियों से न कोई निहारा करे
मन दुबारा-तिबारा पुकारा करे।[२३]''

जयशंकर प्रसाद के अनुसार:- ''काव्य के सौन्दर्य-बोध का मुख्य आधार है– शब्द विन्यास-कौशल।[२४]'' छायावादी काव्य ने काव्य-भाषा के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। वस्तुतः छायावाद युग में भाषा अपना चरमकाव्योत्कर्ष प्राप्त कर सकी। नेपाली की आरम्भिक कविताओं में छायावाद का यह वैशिष्ट्य मिलता है। उनकी भाषा में विलक्षण अर्थ-सौन्दर्य मिलता है। सीधे शब्दों में भी वे विलक्षण अर्थ-सौन्दर्य भर देते हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है:-

''सौ-सौ उजियारी रातों से तेरी मुसकान कहीं सुन्दर
मुख से मुख छवि पर लज्जा का, झीनी मुस्कान कहीं सुन्दर
तेरी मुस्कान कहीं सुन्दर।[२५]''

नेपाली ने संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ बोलचाल के देशज एवं विदेशज शब्दों का प्रयोग किया है। नेपाली की कविता में विलक्षण सम्प्रेषण-शक्ति है और यह उनके काव्य-शिल्प के सौन्दर्य के कारण ही है। चन्द्रमा के लिए उन्होंने चन्द्र, चाँद, शशि का प्रयोग किया है। इसी तरह उन्होंने अनेक पर्यायवाची शब्दों के प्रयोग किए हैं। प्रेम और सौन्दर्य निस्सन्देह उनके प्राण-तत्त्व हैं। नेपाली मूलतः गीतकार हैं और गीतकार सौन्दर्य पर अधिक रीझता है, उसे अपने काव्य में अधिक तीव्रता से अभिव्यक्त करता है। यह जीवन उसके लिए एक संगीत होता है:- प्रेम और सौन्दर्य का संगीत-

''उँगलियों के छूते ही आज
हुई मुखरित जीवन की बीन
अधर पर हास नयन में अश्रु
लिए मैं हुआ गान में लीन
और क्षण-क्षण पर चलते रहे
राग पर राग, गीत पर गीत
कभी आएगी ऐसी घड़ी
बन्द हो जाएगा संगीत
लगेगी ऐसी गहरी नींद, बीन मर सो जाऊँगा मौन।[२६]''

□

'नेपाली निकेतन'
चाणक्यपुरी, अहियापुर
मुजफ्फरपुर

संदर्भ:

१. 'रूप-दीप' शीर्षक कविता, पृष्ठ - २४
२. 'दृष्टि', पृष्ठ - २६७
३. 'दृष्टि', पृष्ठ - २६९
४. 'दृष्टि', पृष्ठ - २६९
५. 'दृष्टि', पृष्ठ - २६९
६. 'पंचमी' पृष्ठ - ९४
७. नेपाली की काव्य-चेतना, पृष्ठ - ९७
८. 'उमंग' : शीर्षक कविता, पृष्ठ - १३
९. 'उमंग' : 'निश्चय' शीर्षक कविता, पृष्ठ - २४
१०. 'उमंग' : 'पीपल' शीर्षक कविता, पृष्ठ - ६५
११. 'उमंग' : 'सरिता' शीर्षक कविता, पृष्ठ - ७०
१२. 'उमंग' : 'बेर' शीर्षक कविता, पृष्ठ - ७५
१३. 'हिमालय ने पुकारा' : 'चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा' शीर्षक कविता, पृष्ठ - २१
१४. 'नीलिमा' : 'इस रिमझिम में चाँद हँसा है' शीर्षक कविता, पृष्ठ - २०
१५. 'पंचमी' : 'पतझार का चाँद' शीर्षक कविता, पृष्ठ - ४९
१६. 'नवीन' : 'दीप जलता रहा रात भर' शीर्षक कविता, पृष्ठ - ५
१७. 'नवीन' : 'कवि और कविता' शीर्षक कविता, पृष्ठ - १७
१८. 'रागिनी' : 'सावन-भादो' शीर्षक कविता, पृष्ठ - ३१
१९. 'पंचमी' : पृष्ठ - ४०
२०. 'पंचमी' : 'मेघ उठे सरित, काले-काले,' पृष्ठ - ६३
२१. 'उमंग' : पृष्ठ - ५०
२२. 'उमंग' : पृष्ठ - १५
२३. दृष्टि : पृष्ठ - २७१
२४. प्रसाद, 'काव्य, कला तथा अन्य निबन्ध' पृष्ठ - ३२७
२५. 'दृष्टि' : पृष्ठ - २६८
२६. 'पंचमी' पृष्ठ - १३३

उत्तर-छायावाद और गोपाल सिंह नेपाली

• हेमंत कुमार हिमांशु

"छायावाद और उत्तर-छायावाद के बीच कुछ वैसा ही संबंध दिखता है, जैसा मध्यकाल में भक्तिकाव्य और रीतिकाव्य के बीच था। दोनों स्थितियों में पूर्ववर्त्ती युग की प्रवृत्तियों में से एक प्रवृत्ति बलवती हो उठती है। और यह संयोग से कुछ अधिक है कि जहाँ भक्तिकाव्य और छायावाद में जीवन को व्यापक रूप से ग्रहण किया गया, वहाँ रीतिकाव्य और उत्तर-छायावाद में शरीर के अनुभवों को अधिक महत्त्व मिला। **जायसी-सूर-तुलसी** के बाद जैसे **बिहारी-मतिराम-देव** का क्रम है, कुछ वैसे ही **प्रसाद-निराला-पंत** के बाद **बच्चन-दिनकर-नरेन्द्र** का। ...... कविता में जो छायावाद युग है, नाटक के क्षेत्र में वह **प्रसाद-युग** है, कथा-साहित्य में **प्रेमचंद-युग** है और आलोचना में **शुक्ल-युग** है। **प्रसाद-निराला-प्रेमचंद-रामचन्द्र शुक्ल एक सम्पूर्ण और समृद्ध साहित्य की नाम-माला है।** उत्तर-छायावाद स्पष्ट ही इस तुलना में हल्का पड़ता है।" [१]

यह सही बिंदु है जहाँ से हम उत्तर-छायावादी साहित्य की पड़ताल आरंभ कर सकते हैं और साथ ही **गोपाल सिंह नेपाली** जैसे भुला दिए गए रचनाकार के काव्य का भी अवलोकन कर सकते हैं।

निश्चय ही छायावादी काव्य और उसके समानान्तर लिखा गया गद्य साहित्य आधुनिक सृजनशीलता की श्रेष्ठतम उपलब्धि है। छायावाद की बुनियादी सांस्कृतिक चिंताएँ उत्तर-छायावादियों के योग्य न थीं। इनकी रुचि तात्कालिक समाधानों में अधिक थी, संदर्भ चाहे प्रेम के हों, राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम के, या फिर मानव-क्रांति के। लेकिन क्या विचार का दृष्टिकोण हमेशा तुलनात्मक ही होना चाहिए? इस आधार पर ही किसी काल-खंड की रचना और रचना-प्रवृत्ति को उपेक्षित कर दिया जाना चाहिए कि उससे पहले या बाद का काल-खंड उस काल-खंड से अधिक समृद्ध रहा है? क्या सचमुच में रीतिकाल और उत्तर-छायावाद का हिन्दी-साहित्य के विकास में कोई योगदान नहीं रहा है? कहना नहीं होगा कि रीतिकाव्य ने हिन्दी-साहित्य के बाग में रसिकता और शास्त्रीयता के मोहक फूल उगाकर उसमें इन्द्रधनुषी छटा बिखेर दी है। भूलना नहीं चाहिए कि **बिहारी-मतिराम-देव** ने हमें **'शब्दों की तराश'** की नई कला सिखायी। इसी तरह उत्तर-छायावादी कवियों ने गहन और संश्लिष्ट भाव को सीधी भाषा और सीधे छंदों में प्रकट कर **'अभिव्यक्ति की मुखरता'** का नया सौंदर्य-शास्त्र गढ़ा तथा जिससे हिन्दी की परवर्ती कविता बहुत दूर तक प्रभावित हुई। इसलिए हमारे लिए भक्तिकाव्य और छायावाद वरेण्य है तो रीतिकाव्य और उत्तर-छायावाद भी।

हिन्दी-आलोचना में आधुनिक-हिन्दी-कविता पर विचार करने की एक आम धारणा यह दिखायी देती है कि **द्विवेदी-युग** की स्थूलता और इतिवृत्तात्मकता के विरुद्ध छायावाद का जन्म हुआ। यानी **छायावाद स्थूलता के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है** तथा छायावाद की सूक्ष्मता और कल्पनाशीलता के विरुद्ध प्रगतिवाद आया। यह धारणा इतनी बद्धमूल हो चुकी है कि इसके

कारण उन कवियों का बड़ा नुकसान हुआ, जो छायावाद से विद्रोह करते हुए नयी काव्य-भाषा और नई काव्य-भूमि लेकर पहले-पहल हिन्दी-कविता के मैदान में आए। ये न तो छायावादी थे और न प्रगतिवादी। 'इनकी हालत' **'सैण्डविच'** जैसी हो गई, जिसके एक ओर छायावाद था, दूसरी ओर प्रगतिवाद।' आलोचकों ने प्राय: इन्हें फुटकल खाते का कवि माना। कभी इन्हें **'स्वच्छन्द धारा'** का कवि माना गया, तो कभी **'मौज और मस्ती'** का। कुछ लोगों ने इन्हें **'उत्तर-छायावादी'** कहा तो कुछ के लिए ये कवि **'छायावादोत्तर'** युग के लोकप्रिय काव्य के प्रणेता भर रहे। निष्कर्ष यह कि ये कवि जिस काव्य-संसार का निर्माण कर रहे थे, उसकी कोई स्वतंत्र और मुकम्मल पहचान ठीक से नहीं हुई। इनका अपना मिजाज है, अपनी जमीन है, अपने सामाजिक मूल्य हैं और अपनी भाषा-शैली है, यह गम्भीरतापूर्वक आधुनिक-हिन्दी-कविता के इतिहास और आलोचना के विचार का विषय न रहा। यह काव्य-प्रवृत्ति **गोपाल सिंह 'नेपाली', हरिवंश राय 'बच्चन', भगवतीचरण वर्मा, रामधारी सिंह 'दिनकर', नरेन्द्र शर्मा, शिवमंगल सिंह 'सुमन'** जैसे कवियों से जन्म ले रही थी। इनमें से कुछ को आलोचकों ने छायावाद का ही अवशिष्ट मान लिया, तो कुछ को प्रगतिवादी काव्यधारा के अन्तर्गत गिना दिया।

आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास-ग्रंथ में आधुनिक काल के काव्य को तीन उत्थानों में बाँटा है। 'प्रथम उत्थान' में उन्होंने मुख्य रूप से **भारतेन्दु-काल** की कविता को रखा है, 'द्वितीय उत्थान' में **श्रीधर पाठक की स्वच्छंदतावादी काव्यधारा** और **द्विवेदी-युग** के काव्य को आधार बनाया है तथा 'तृतीय उत्थान' में छायावाद, रहस्यवाद और दूसरी तत्कालीन काव्य-प्रवृत्तियों को रखा है। **नेपाली, बच्चन, दिनकर आदि कवियों को आचार्य शुक्ल ने तृतीय उत्थान में ही स्थान दिया है।** उन्होंने अपने विवेचन में स्पष्ट किया है कि ये कवि मुख्य रूप से छायावाद के गौण कवि हैं और इनका स्वर छायावादियों से किंचित भिन्न है। वे **'स्वच्छन्द धारा'** शीर्षक से अपने इतिहास के अन्तिम पृष्ठ पर लिखते हैं- ''छायावादी कवियों के अतिरिक्त वर्त्तमान काल में और भी कवि हुए हैं जिनमें से कुछ ने यत्र-तत्र ही रहस्यात्मक भाव व्यक्त किए हैं, उनकी अधिक रचनाएँ छायावाद के अन्तर्गत नहीं आतीं। ऐसे कवियों में समष्टि रूप में **'स्वच्छन्द धारा'** प्रवाहित होती है।'' **आचार्य शुक्ल** के इस उद्धरण से इन कवियों की किसी खास काव्य-प्रवृत्ति का पता नहीं चलता। लेकिन यह पता जरूर चलता है कि ये कवि छायावाद से भिन्न जमीन पर खड़े हैं और भिन्न मिजाज की कविताएँ लिख रहे हैं। वैसे उन्होंने स्वच्छन्द धारा नाम लेकर के इन कवियों की मूल प्रवृत्ति को रेखांकित करने की कोशिश जरूर की है।

इस काव्य-प्रवृत्ति के मूल-स्वर को पहचानने की एक बड़ी कोशिश **आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी** ने अपने इतिहास ग्रंथ **'हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास'** में की है। **आचार्य द्विवेदी** छायावाद के उत्तरार्द्ध में जन्म ले रही काव्य-प्रवृत्ति को रेखांकित करते हुए **इस युग के कवियों को मस्ती, मौज, उल्लास, यौवन आदि का कवि कहते हैं** और साथ ही इस काल की कविता की सामाजिकता की खोज करते हुए **वे इसे 'घोर मंथन' और 'उथल-पुथल' का काल कहते हैं।** वे इन कवियों के सामाजिक स्त्रोत की छानबीन करते हुए लिखते हैं- ''इस काल में भारतवर्ष ने पूरी ताकत लगाकर अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने का

प्रयत्न किया। यह प्रयत्न दस-ग्यारह वर्ष बाद सफल हुआ। परन्तु इस समय तक विदेशी प्रभाव की जड़ें हिल गईं। देश के युवकों में कभी आत्मविश्वास की मात्रा इतनी अधिक नहीं थी, जितनी इस काल में रही। धीरे-धीरे **'व्यक्ति-मानव'** का महत्त्व प्रतिष्ठित होता गया। यह काल एक ओर सामूहिक आन्दोलन में विश्वास करता है, तो दूसरी ओर सामाजिक उत्थान के प्रति आकृष्ट होने में भी विश्वास रखता है। भारतवर्ष का शिक्षित चित्त अब अनुभव करने लगा था कि कल्याण का मार्ग व्यक्ति की सुख-सुविधा की साधना के भीतर से नहीं गया है, वह सामाजिक सुख-सुविधा के प्रयत्नों के भीतर से निकला है।

ऐतिहासिक घटनाएँ बड़ी तेजी से सोचने-समझने की योग्यता रखने वाले मनुष्य के दिमाग पर आघात करती गईं और क्रमशः वह व्यक्ति-संस्कार की कमजोरियों को समझता गया और सामाजिक मंगल की साधना की ओर अग्रसर होता गया।'' [२]

द्विवेदी जी घोर मंथन और उथल-पुथल के काल के रूप में जिस काल को रेखांकित करते हैं, वह १९३० का पूर्वार्द्ध है। ध्यान में रखना चाहिए कि भारतीय इतिहास में यह वह काल है जब **भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, राम प्रसाद 'बिस्मिल'** आदि नौजवान क्रान्तिकारी देश के लिए हँसते हुए कुर्बान हो गए थे। इन क्रान्तिकारियों की शहादत ने पूरे राष्ट्र की चेतना में यौवन और उल्लास भर दिया था। देश के लिए शहीद होने का काम लोग हँसते-गाते कर रहे थे। ऐसे समय में देश का युवा मानस मौज-मस्ती और उमंग-उल्लास के ऐसे फक्कड़पन अंदाज से भर गया था, जिसमें बेहद दिवानगी थी और हँसते हुए अपना सब कुछ लुटाकर देश के लिए शहीद हो जाने का युवकोचित जोश था। द्विवेदी जी ने विवेच्च काल को समझने का जो प्रयत्न किया है, वह कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। वे इस काल की कविता के मूल स्वर को पहचान की कोशिश करते हैं और उसके सामाजिक आधारों की खोज करते हैं। उस काल की गतिशील चेतना को ध्यान में रखकर **उसे 'घोर उथल-पुथल' और 'मंथन' का काल भी कहते हैं।** लेकिन वे कोई ठोस नाम इसके लिए प्रस्तावित नहीं करते। बहुत स्पष्ट ढंग से तो नहीं, लेकिन विवेचन के क्रम में इसे **वे छायावाद का 'दूसरा उन्मेष' कहते हैं।**

इस काल को समझने का एक बड़ा प्रयास इस काल के महत्त्वपूर्ण कवि **रामधारी सिंह 'दिनकर'** ने अपने 'छायावादोत्तर काल' निबंध में किया है जो उनकी पुस्तक 'काव्य की भूमिका' में संकलित है। **दिनकर जी** के अनुसार यह छायावादोत्तर काल है। वे लिखते हैं कि ''छायावादी कवियों की पीठ पर आने वाले कवियों में **बच्चन, नरेन्द्र, नेपाली, आरसी, केसरी, अंचल, प्रभात, जानकी वल्लभ शास्त्री, सोहन लाल द्विवेदी, श्याम नारायण पाण्डेय, रामदयाल पाण्डेय, राम गोपाल शर्मा 'रुद्र'** आदि के नाम प्रमुख हैं। और इसी काल में एक छोटा नाम **मेरा भी** जुड़ जाएगा। तो इनमें से कौन कवि प्रगतिवादी धारा का प्रतिनिधित्व करता है? काल-क्रम की दृष्टि से देखें तो **सुमन** और **नागार्जुन** इस समूह के बाद आनेवालों में से हैं। इन कवियों की विशिष्टताओं पर विचार किया जाए तो छायावाद की धूमिल रंगीनी और रोमान्टिक हिलोर केवल **अंचल** और **प्रभात** की कविताओं में मिलेगी और इन दो कवियों में भी भाषा की छायावादी परम्परा केवल **प्रभात** जी में शेष हैं। बाकी सभी कवियों में कई ऐसे लक्षण समान रूप से मिलते हैं, जिन्हें देखते हुए इन कवियों का युग न तो छायावादी युग कहा जा सकता है, न उसे हम प्रगतिवाद शीर्षक के अन्दर लपेट सकते हैं। असल में इनका काल छायावादोत्तर काल है।'' [३]

दिनकर जी ऊपर के अपने उद्धरण में न सिर्फ अपनी और अपने काल के कवियों की कविता को छायावाद और प्रगतिवाद से अलग करते हैं, बल्कि उस काल की काव्य-प्रवृत्ति को अधिक स्पष्टता के साथ रेखांकित भी करते हैं और उस काल का नामकरण 'छायावादोत्तर' काल के रूप में करते हैं। **दिनकर** जी आगे कहते हैं- "कभी-कभी ऐसा भी भासित होता है मानो छायावादोत्तर काल के रूप में कुछ-कुछ **द्विवेदी काल** का प्रत्यावर्त्तन हुआ। छायावादोत्तर कालीन भाषा **द्विवेदीयुगीन भाषा** की याद दिलाती है। दोनों युगों की भाषाएँ सफाई और हिन्दी के बोलचाल वाले रूप के अधिक समीप हैं। भेद केवल यह है कि छायावाद काल में भाषा के क्षेत्र में कोमलता के जो प्रयोग हुए, उनकी शिक्षाएँ छायावादोत्तर काल के कवियों को याद रहीं, क्योंकि द्विवेदी युग वालों को इस प्रयोग का लाभ नहीं मिला" [४]

दिनकर जी के इस कथन से स्पष्ट है कि उत्तर-छायावादकालीन कविता की भाषा **द्विवेदीयुगीन कविता** की सफाई के लिए हुए हैं, किन्तु उसमें छायावादी काव्य की कोमलता भी आ गई है। छायावाद में अतिशय कल्पनाशीलता के साथ कोमलता और सूक्ष्मता भी थी। द्विवेदीयुगीन कविता की भाषा बोलचाल के करीब तो थी ही लेकिन उसमें स्थूलता अधिक थी। उत्तर-छायावादी कवियों ने द्विवेदी युग की सफाई और छायावाद की सूक्ष्मता की ओर से नई काव्य-भाषा विकसित की।

उत्तर-छायावाद की कविता का गम्भीर अध्ययन नयी कविता के कवि और समीक्षक **विजयदेव नारायण साही** ने अपने प्रबंधात्मक आलेख **'लघु मानव के बहाने हिन्दी कविता पर एक बहस'** में किया है। **साही** जी ने इस काल की कविता को **'जवानी और खुमारी का काव्य'** कहा है जिसमें आध्यात्मिक मुद्रा और दार्शनिकता का अभाव है। उन्होंने छायावादी **'महामानव'** और नयी कविता के **'लघु मानव'** के वजन पर उत्तर-छायावादी मनुष्य को 'साधारण मानव' कहा और इस काल की विशेषता 'सहजता' बतलाई। **साही** जी अपने विवेचन-क्रम में आगे कहते हैं कि इस काल की कविता के मनुष्य के दो रूप हैं, एक उसका बाहरी रूप है दूसरा उसका अन्तर है। इस बाहर और भीतर में सामंजस्य नहीं है। ऊपरी कलेवर ज्ञान-आदर्श-मर्यादा जैसे सामाजिक नियमों से बना है जो क्रूर, जड़, कठोर है। इस काल के मनुष्य का असली रूप तो उसके धड़कते हुए दिल में है। इस असली मनुष्य को अभिव्यक्त करने की राह में बुद्धि या ज्ञान की मर्यादाएँ बन्धन बनती हैं। इन्हीं बन्धनों को तोड़ने पर इस काल की कविता जन्म लेती है।

नामवर सिंह उत्तर-छायावाद की जटिल मानसिकता को समझने की जरूरत पर बल देते हैं। उनका आग्रह है कि उस काल की साहित्यिक मानसिकता को समझने के लिए कविता के साथ-साथ दूसरी विधाओं को भी देखना चाहिए। उनके अनुसार- "इस काल की कविता पर विचार करते हुए हमें उस काल में छपे **'त्यागपत्र'**, **'सुनीता'**, **'शेखरः एक जीवनी'**, **'दादा कामरेड'**, **'बाणभट्ट की आत्मकथा'** **जैसे उपन्यासों के साथ** अनेक कहानियों पर भी विचार करना चाहिए। इनके आधार पर भी उस काल की साहित्यिक मानसिकता को समझा जा सकता है। हिन्दी के बाहर उर्दू में **मजाज** और **फिराक गोरखपुरी** जैसे शायर हैं जिनकी **'आवारा'** और **'आधी रात का'** जैसी नज्में हैं, जो उस काल की साहित्यिक मानसिकता का

पता देती हैं। जब हम हिन्दी-उर्दू के कवियों को मिलाकर देखेंगे तब एहसास होगा कि कैसे हिन्दी-उर्दू की कविताएँ मिली हुई थीं। दोनों के भीतर एक ही तार था जो बज रहा था।" (उत्तर-छायावाद काल, हिन्दुस्तान, दैनिक) उर्दू कविता के साथ ही **नामवर जी** इस काल को और वृहत्तर फलक पर देखने की सिफारिश करते हैं। उनका कहना है कि यह वही दौर है जब **सोवियत संघ में पास्तरनाक, मारिना सुतकोवा** और **अन्ना अक्मतोवा** जैसे कवि कवयित्रियाँ सक्रिय हैं। इसी काल में फ्राँस में **पाल एलुआर्ड** और **लुई अरागा** जैसे कवि हैं तो दूसरी ओर **बर्तोल्त ब्रेख्त, पाब्लो नेरूदा, टी० एस० इलिएट** और **अर्डेन** जैसे कवि भी दुनिया की विभिन्न भाषाओं में कविता के क्षितिज पर सक्रिय हैं। इसलिए इस काल की कविता पर व्यापक परिप्रेक्ष्य में सोचने-विचारने की जरूरत है। अगर ऐसा नहीं करेंगे तो इस काल के साथ अन्याय होगा।

कुल मिलाकर अगर उत्तर-छायावादकालीन कविता की प्रमुख विशेषताएँ अति संक्षेप में प्रकट करनी हों, तो कहा जाएगा कि सहजता, लोकप्रियता, मस्ती, फक्कड़पन आदि के साथ इस कविता का अनिवार्य सम्बन्ध देश के युवा-मानस से है। इस काल की कविता में जो मस्ती और फक्कड़पन है वह उत्सर्ग-भावना की देन है। यह उत्सर्ग भावना चौथे दशक की भारतीय राजनीति की फिजा में गूँजनेवाली एक अनिवार्य आवाज है। इसी आवाज की प्रतिध्वनि उत्तर-छायावादी कविता में सुनायी पड़ती है। जैसा कि **विजयदेव नारायण साही** ने कहा है, **छायावाद और नयी कविता के बीच उत्तर-छायावाद एक कड़ी है और उस कड़ी के बिखर जाने से हिन्दी-कविता का विकास ठीक-ठीक नहीं दिखाई पड़ेगा।** इसलिए उत्तर-छायावादी कविता का हिन्दी-कविता के इतिहास में विशेष महत्त्व है। यह छायावाद का परिशिष्ट न होकर हिन्दी-कविता का स्वतंत्र अध्ययन है।

गोपाल सिंह नेपाली के अतिरिक्त उत्तर-छायावादी काव्य-धारा को पुष्ट बनाने में अन्य कई कवियों का योगदान रहा है। ऐसे कवियों में **बच्चन, दिनकर, नरेन्द्र, भगवती चरण वर्मा, आरसी प्रसाद सिंह, जानकीवल्लभ शास्त्री, अंचल** आदि के नाम प्रमुख हैं। **दिनकर** और **नेपाली** इन कवियों में ऐसे हैं जिनकी कविताओं में राष्ट्रीय-भावना चरम सीमा पर है। साथ ही इन दोनों कवियों की लेखनी प्रेम और मस्ती को भी अपना विषय बनाती रहीं। विशेषत: **दिनकर** में तो ये दोनों धाराएँ समानान्तर दीख पड़ती हैं। **भगवती चरण वर्मा** में भी दो प्रवृत्तियाँ साथ-साथ चलती हैं। एक तो उनका विद्रोही रूप है और दूसरा प्रेम और खुमारी से भरा हुआ व्यक्तित्व। **बच्चन जी** में भी खुमारी है, पर वह **हालावाद** की है, प्रेम की नहीं। बाद में इनका प्रेम-दर्शन भी प्रौढ़ हुआ और **मधुशाला** की लोकपरक व्याख्या उन्हें करनी पड़ी। **अंचल** जी में छायावाद का बचा हुआ अवशेष दीख पड़ता है, पर वे साहित्य में एक नवीनता लेकर आए। **नरेन्द्र शर्मा** में भी संघर्ष है, पर वह संघर्ष अस्तित्व को कायम रखने का है, व्यवस्था को बदलने का नहीं। **जानकीवल्लभ शास्त्री की कविता का एक छोर शान्ति को छूता है तो दूसरा क्रान्ति को। नेपाली** जी अपने समकालीन कवियों में कहाँ ठहरते हैं, यह विवेचन का विषय है। लोकप्रियता में **बच्चन** शीर्ष पर थे, तो सम्मान सबसे अधिक **दिनकर** को प्राप्त हुआ है। साहित्य के महारथी आलोचकों की कृपा-दृष्टि से **नेपाली** जी वंचित रहे। उनकी दृष्टि में **नेपाली** का फिल्म-जगत् से संयुक्त होना ऐसा अक्षम्य अपराध था, जिसे वे किसी कीमत पर भूलने को तैयार नहीं थे।

गोपाल सिंह नेपाली उत्तर-छायावाद के श्रेष्ठ कवियों में हैं। उनका रचना-काल काफी विस्तृत है। लगभग तीस वर्षों तक वे काव्य-रचना में संलग्न रहे। विषय की विविधता और प्रभावान्विति में वे बेजोड़ हैं। वे सदैव सामान्य जन की हिमायत अपनी कविताओं के द्वारा करते रहे। इसी कारण उन्होंने समाज में आमूल परिवर्तन की चेष्टा की। शोषित और शोषक के बीच बढ़ती खाई को पाटने का प्रयास किया, राष्ट्रीय एकता के लिए सर्वधर्म-एकता पर बल दिया और जब भी आवश्यकता पड़ी सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार रहे।

नेपाली जी लिखे हैं-

"हिन्दू के साथ अगर मुसलमान न होगा
फिर साथ मुसलमान के क्रिस्तान न होगा
संसार में आजाद हिन्दुस्तान न होगा
हर धर्म के इन्सान को सीने से लगा लो।"

नेपाली एकता का वह बिंदु ढूँढ़ निकालते हैं, जहाँ हिन्दू और मुसलमान अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए एक होते हैं। नेपाली जी भारत की जनता को यह संदेश देना चहाते हैं कि अगर अपने अस्तित्व की रक्षा करनी है तो सभी भारतीयों को धर्म और जाति का भेद भुलाना होगा।

उत्तर-छयावादी कवियों पर बच्चन की 'मधुशाला' और 'प्याला' का प्रभाव भी रहा है। इसकी एक बड़ी वजह मस्ती के साथ 'लोकप्रियता' रही है। हालांकि लोकप्रियता किसी कवि की श्रेष्ठता की कसौटी नहीं हो सकती। फिर भी जनकवि होने का दावा करने वाले इसे नकार भी नहीं सकते। कहना नहीं होगा कि नेपाली के 'यौवन और मस्ती' के मूल में बच्चन की तरह 'युवा हृदयों के सम्राट' बनने की लालसा रही होगी। इसी दृष्टि से बच्चन के हालावाद से प्रभावित नेपाली की प्रतीकात्मक शैली में लिखित इन पंक्तियों को देखा जा सकता है-

"दर्द बना है मन की हाला
दुःख बना जीवन की हाला
प्यास बनी यौवन की हाला
अश्रु बने लोचन की हाला।
दे दो मुझको तुम यह हाला
इस दुनिया को पिला-पिलाकर
मैं रच लूँगा गीत।"

नेपाली जी ने व्यक्तिगत जीवन को यथासंभव कविता के माध्यम से व्यक्त नहीं होने दिया है। अधिकांशतः उनकी दृष्टि समाज पर ही रही है। गान्धीवादी की जब-तब आलोचना करते हुए भी उन्होंने गान्धीजी की मृत्यु पर 'अमर सेनानी गान्धी' शीर्षक कविता लिखी-

''तन पर खायी तीन गोलियाँ, सबको छलते चले गए
लिया स्वराज अहिंसा से, इतिहास बदलते चले गए।
जैसे श्याम दे गए मुरली, राम खड़ाऊँ छोड़ गए
गान्धी टोपी पहना कर यह, अखिल राष्ट्र को जोड़ गए।''

दिनकर उत्तर-छायावाद के सबसे बड़े और प्रभावशाली कवि के रूप में जाने गए। किन्तु **दिनकर** में सदैव एक द्वन्द्व नजर आता है। **कुरुक्षेत्र** में युद्ध और शांति का, **उर्वशी** में प्रेम और आध्यात्म का तथा **उनकी पूरी काव्य-यात्रा में राष्ट्रीयता तथा प्रेम का द्वन्द्व चलता रहता है। नेपाली की कविता में भी संघर्ष भी नजर आता है और उसका समाधान भी। कठिन परिस्थितियों में भी वे विजय-पथ देख लेते हैं और उस तक पहुँचने का मार्ग भी। दिनकर** की दृष्टि में वही कविता श्रेष्ठ है जो पाठकों के मन को मोह ले। नेपाली मानते हैं कि जिस कविता में तन्मय करने की शक्ति होगी, उसके प्रति सम्मोहन की अपेक्षा आत्मानुभूति का अनुभव हम अधिक करेंगे। साधारणीकरण की दृष्टि से वही कविता उपयुक्त है जो काल-प्रवाह के साथ पाठकों और श्रोता वृन्द की जिह्वा पर थिरकती रहे। चीनी आक्रमण की प्रतिक्रिया स्वरूप **दिनकर** ने **'परशुराम की प्रतीक्षा'** लिखी और **नेपाली की 'हिमालय ने पुकारा'** का प्रकाशन हुआ। ये दोनों कृतियाँ बहुचर्चित हुई। **दिनकर** ने संकट की इस घड़ी में नये मानव की कल्पना की, जो अर्जुन और परशुराम से मिलता-जुलता था। लेकिन **नेपाली जी किसी इतिहास पुरुष के हाथों भाग्य की डोर नहीं सौंप सकते।** वे सारे भारतीयों को देश की रक्षा के लिए सन्नद्ध देखना चाहते हैं। वे 'हिरोवर्शिप' के खिलाफ थे। आजादी चाहिए तो **गान्धी** की तरफ निहारो, **नेहरू** को देखो। हर समाधान के लिए किसी-न-किसी को निहारने की प्रवृत्ति का विरोध करते हुए उन्होंने **'वन मैन आर्मी'** की बात की।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद **विनोबा** ने १९५१ में **भूदान यज्ञ** शुरू किया। उद्देश्य था-भूमिपतियों से भूमि-दान में लेकर भूमिहीनों को देना। **दिनकर जी** ने १९५२ में इसके पक्ष में कविता लिखी- **'भूदान'**। लेकिन वे इस सत्य को नहीं देख पाए कि भूमिवादी अपनी अधिकाँश जमीन सुरक्षित रखकर थोड़ी-बहुत ऊसर-बंजर जमीन दान में देते हैं। इस दान से प्राप्त प्रशंसा के बल पर वे अपनी जमीन भूमि हदबन्दी से बचाने के प्रयास में रहते हैं। **नेपाली जी** ने इस सत्य को पहचाना और १९५७ में **'भूदान के याचक'** शीर्षक कविता लिखी, जो **'धर्मयुग'** में छपी-

''भीख बुद्ध ने माँगी ही, कहाँ अमीरी लुट गई
गान्धी ने भी अलख जगाई, कहाँ गरीबी उठ गई।'' ५

इसके बाद उन्होंने सावधान किया-

''जो भी देगा जूठन देगा
मीठा-मीठा स्वयं चखेगा
धन-धरती सुख स्वयं चखेगा।''

यह लिखते हुए **नेपाली** का हाथ मरीज की नब्ज पर है। वे भारत में फैली गरीबी, असमानता और भ्रष्टाचार के रोग पहचानते हैं। इसलिए उनका सुझाया समाधान भी श्रेष्ठ है। **प्रो० विश्वनाथ प्रसाद 'भूदान के प्रति नेपाली और दिनकर की दृष्टियाँ'** शीर्षक निबंध में दोनों की तुलना इन शब्दों में करते हैं- **"नेपाली** और **दिनकर** समसामयिक होते हुए भी अपने दृष्टिकोण अशेषत: स्वतंत्र हैं। दोनों दो वर्गों के बीच खड़े हैं। एक **राज कवि** हैं तो दूसरा **जनकवि। नेपाली जी** ऐसे ही **जनकवि** थे। इन्होंने जनता के हित को, शोषित पीड़ित वर्ग को अपना आराध्य बनाया और उसकी पूजा में अपने व्यक्तित्व की आहुति दी।"

नेपाली की कविताएँ राष्ट्र-प्रेम और प्रकृति-प्रेम का भी उत्तम नमूना हैं। सुख-दुःख, जीवन-दर्शन, प्रेम-संघर्ष सब कुछ उन्हें अपने जीवन से मिलता-जुलता प्रकृति और राष्ट्र में घटित नजर आता है। **बच्चन ही एकमात्र ऐसे व्यक्तित्व हैं जो उत्तर-छायावाद काल में नेपाली की भाँति भीड़ जुटाने में समर्थ थे।** नेपाली जी एक समर्थ व्यक्तित्व के उदाहरण थे। उनकी सहजता और भाषा की सरलता उनके काव्य को जन-जन तक पहुँचाने में समर्थ हुई। उत्तर-छायावाद काल के सशक्त कवियों में उनकी गणना इन आधारों पर होनी चाहिए। इस दृष्टि से वे श्रेष्ठ हैं- कविता सिर्फ मन में ही नहीं, बोलकर भी पढ़ने की विधा है। □

द्वारा - डॉ० शिवनंदन प्रसाद सिन्हा
पी-१६, स्वास्तिक भवन, विद्यापुरी,
कंकड़बाग, पटना-८०० ०२०

संदर्भ :

१. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी-साहित्य और संवेंदना का विकास, पृष्ठ २१७-२१९
२. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी-साहित्य : उद्‌भव और विकास पृ० - २७७-४८
३. रामधारी सिंह दिनकर, काव्य की भूमिका, पृष्ठ-४६-४७
४. वही, पृष्ठ - ४८
५. धर्मयुग, १९५७ ई०
६. डॉ० दिवाकर, 'दृष्टि' पृष्ठ - १८१

नेपाली की काव्य-कृतियाँ

● कल्याण कुमार झा

गोपाल सिंह नेपाली उत्तर छायावाद के एक महत्त्वपूर्ण हिन्दी-गीतकार हैं। नेपाली के गीतों में प्रेम और मस्ती को, सौन्दर्य और उल्लास को तथा वेदना और क्रान्ति को नई रचनात्मक अभिव्यक्ति मिली है। एक कवि के रूप में नेपाली का जीवन १९३० के आस-पास आरम्भ होता है। 'बालक' और 'विकास' जैसी पत्रिकाओं में उनकी कुछ कविताएँ प्रकाशित हो चुकी थीं, किन्तु उन्हें प्रसिद्धि मिली १९३२ ई० में काशी में आयोजित **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी अभिनन्दन समारोह** में। इस कवि-सम्मेलन के बाद नेपाली की काव्य प्रतिभा को राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृति मिली और १९३४ ई० में उनकी दो काव्य-कृतियों **'उमंग'** और **'पंछी'** का प्रकाशन हुआ।

'उमंग' ६२ कविताओं का संग्रह है। इसका प्रकाशन नेपाली के मित्र और **'चित्रपट'** के सम्पादक **ऋषभ चन्द जैन** ने किया। **'उमंग'** में प्रकृति के प्रति कवि की आत्मीयता व्यक्त हुई है। प्रकृति के साथ रागात्मक तादात्म्य स्थापित करते हुए कवि कहता है:

''आ मधुप, मुकुल मन खोल-खोल
द्रुम में पक दाड़िम गोल-गोल
तरु के नव पल्लव डोल - डोल
वन-वन में पंछी बोल-बोल
रे कब से उजड़ा पड़ा बाग
सोई उमंग उठ जाग-जाग।''

(उमंग, पृष्ठ - १५)

'उमंग' वस्तुत: एक नवजवान कवि की **उमंग** की कविताओं का संग्रह है। इस संग्रह की अधिकांश कविताएँ **प्रेम और प्रकृति की कविताएँ हैं**, किन्तु **'सत्याग्रह'**, **'मोहन से'**, **'स्वागत'** और **'स्वतंत्रता की ओर'** जैसी कविताएँ उनकी राष्ट्रीय चेतना को भी रेखांकित करती हैं। राष्ट्र-मुक्ति के लिए पूरा देश गान्धी जी के नेतृत्व में सजग और सक्रिय हो जाता है-

''सुन-सुन ये दिवाने किसके आवाहन का शोर चले
मचल-मचल गलहार पहनकर किस महफिल की ओर चले
गा-गा गजलें आजादी की अमरपुरी की ओर चले
दे अपना जीवन बदले में माँ का स्नेह बटोर चले।''

(उमंग, पृ० सं० ११७)

१८३४ में ही **नेपाली** की दूसरी काव्य-कृति **'पंछी'** का प्रकाशन हुआ। जहाँ **'उमंग'** की भूमिका **कविवर पंत** ने लिखी थी, वहीं **'पंछी'** का आमुख **महाप्राण निराला** ने लिखा था- ''इधर दो-वर्षों से नवीन तारकों के सदृश जितने कवि हिन्दी के काव्याकाश में चमकते हुए मुझे

देख पड़े, सौंदर्य के सुख-स्पर्श-जादू से जिन्होंने मन को वशीभूत कर लिया तथा प्रकाश और तृप्ति दी **श्री गोपाल सिंह जी नेपाली** उन्हीं में से एक है। मुझे उनके काव्य में शक्ति, प्रवाह, सौंदर्य-बोध तथा चारू-चित्रण एक विशेषता लिए हुए देख पड़े।''

गंगा पुस्तक माला, लखनऊ के १४४ वें पुष्प के रूप में इसका प्रकाशन हुआ। यह कुल ४६ पृष्ठों की एक छोटी-सी पुस्तक थी और स्वयं कवि के शब्दों में इसकी रचना मात्र पन्द्रह मिनटों में हुई थी। पुस्तक के आन्तरिक पृष्ठ पर इसे सरस-सरल कविताओं का संग्रह घोषित किया गया था, किन्तु **कथा-सूत्रों के संयोजन के कारण इसे प्रबन्ध के रूप में ही स्वीकृति मिली।** इस प्रबंध में दो पंख, तेरह शीर्षक और १३८ पर हैं। **प्रथम पंख में संयोग की सरसता है और दूसरे खण्ड में वियोग और बेचैनी है।**

नेपाली की तीसरी कृति **'रागिनी'** है जिसका प्रथम संस्करण युगांतर प्रकाशन समिति, पटना द्वारा हुआ। १९६८ में इसकी दूसरी आवृत्ति राष्ट्रीय प्रकाशन मंडल, पटना से हुई। इसमें १९३४-३५ में लिखित कुल ३१ कविताएँ संगृहीत हैं। संघर्षशील **नेपाली** का जीवन बोध और सौन्दर्य बोध इस संग्रह की कविताओं में स्पष्टतः देखा जा सकता है। वस्तुतः कवि की वेदना ही **'रागिनी'** बनकर पाठकों के सम्मुख उपस्थित हो गई है। इस संग्रह के स्वर-संधान में **नेपाली** ने स्वीकार किया है कि, ''गरीबी बड़ी प्यारी चीज है। वह भी लड़कपन या बुढ़ापे में नहीं, भरी जवानी में। लड़कपन में यह संगिनी मिली, तो बालहठ कुंठित हो जाता है; बुढ़ापे में आई, तो सर्द आहें जारी होती हैं, पर कहीं यौवन-काल में मिल गई, तो भरे हुए सीने की कठोर परीक्षा रहती है। इसलिए मामला शीघ्र समाप्त नहीं होता। इसी राह के हम मुसाफिर हैं।''

गीत में व्यैक्तिकता होती है और अनुभूति की तीव्रता भी। **'रागिनी'** के इस गीत में **नेपाली** की व्यैक्तिकता अपनी पूरी सार्थकता के साथ मुखर हो उठी है।

''भीतर रोना, बाहर हँसना, संगिनि, जान गया हूँ मैं।
तरुण तपस्वी, तरुण विलासी
जग का मैं ऐसा पुरवासी
बाहर कैसे भेद खुले रे
मन-भीतर मेरा विश्वासी
बादल काले ही होते हैं, संगिनि, मान गया हूँ मैं।
नाच गईं काँटों में मीरा
झूम-झूम गा गए कबीरा
जग बदला मेरी बारी में
गंगा बनी गहन-गंभीरा
इतना है कि प्रेम की वाणी अब पहचान गया हूँ मैं।''

(रागिनी, पृ० सं० ८)

इसी संग्रह में **नेपाली** की प्रसिद्ध कविता **'भाई-बहन'** संगृहीत है जो राष्ट्रीय आन्दोलन के एक महत्त्वपूर्ण जागरण गीत के रूप में स्वीकृत हुयी थी।

'नीलिमा' नेपाली की चौथी काव्य-कृति है। नीलिमा के प्रथम संस्करण से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका प्रकाशन वर्ष १९४४ ई० है। हालाँकि इस संग्रह की लगभग सारी कविताएँ वर्ष १९३८ के पूर्व ही लिखी गई हैं। कवि की इस प्रतिनिधि काव्य-कृति में कुल २२ रचनाएँ संगृहीत हैं। संग्रह के पहले गीत में ही नेपाली ने गगन और नयन के सादृश्य के द्वारा अपनी भावनाएँ व्यक्त की हैं-

''बहुत मिलते-जुलते दो लोक
गगन भी नील, नयन भी नील
गगन का जीवन है दिनमान,
जवानी है तारों की रात।''

(नीलिमा, पृ० सं० १)

'पंचमी' नेपाली की पंचम काव्य-कृति है और कवि नेपाली के शब्दों में ही यह उनकी प्रौढ़ कृति है। संग्रह की भूमिका में **'मेरी एक युग की साधना'** में कवि ने स्वीकार किया है, **''पंचमी'** के रूप में अब मैं साहित्य देवता के चरणों में पाँचवाँ फूल रख रहा हूँ। इधर मैं इतनी 'स्पीड' से लिखता रहा हूँ कि इसकी कुछ कविताएँ ही मेरी वर्तमान भावधारा कही जा सकती हैं। **अपनी पाँचों कविता-पुस्तकों में मुझे यह सबसे ज्यादा प्रिय, संगत और नवीन लगती है।''** ३४ पृष्ठीय पंचमी में **कुल सैंतालीस** रचनाएँ हैं। इसका प्रकाशन **कविवासर, बेतिया** की ओर से अगस्त, १९४२ में हुआ था। इस संग्रह में मुख्यत: प्रेम और प्रकृति की कविताएँ हैं। वैसे इसमें राष्ट्रीय गीत और व्यक्तिपरक रचनाएँ भी हैं। प्रकृति प्रेम का एक उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

''पड़ा है छवि का ऐसा जाल, उलझ रह गया नयन का मीन
उषा ने मला अबीर-गुलाल
कमल का गाल लाल कर दिया
उड़ाया सन्ध्या ने सिन्दूर
विहग का घर-आँगन भर दिया
प्यास ले कर आयी दोपहर
बनाया प्यासा जग का हिया
संजोए धन-आँचल से दीप
खड़ी है पथ पर रजनी-प्रिया।''

(पंचमी, पृ० सं०-२२)

नेपाली का शाश्वत गीतकार इस संग्रह में बार-बार मुखर हो उठा है। **उनकी कला परिमार्जित हो उठी है और वे भाव से चिन्तन की ओर उन्मुख होते प्रतीत हुए हैं।** इस संग्रह में नेपाली की कतिपय रुबाइयाँ भी संगृहीत हैं, जो विविध काव्य रूपों में उनकी दक्षता का साथ देती हैं।

'नवीन' नेपाली का छठा काव्य संग्रह है। इसका प्रकाशन आचार्य रामलोचन शरण के प्रकाशन, रामलोचन बुक्स प्राइवेट लिमिटेड की ओर से १९४४ ई० में हुआ था। १०५ पृष्ठों की

इस काव्य-कृति में कुल ३८ रचनाएँ संकलित हैं। 'नवीन' की रचनाओं में जहाँ एक ओर नेपाली की गीति-कला और प्रखर हो गई है, वहीं उनकी चेतना भी समष्टिगत हो गई है। संग्रह की पहली ही कविता में कवि की यह परिवर्तित-दृष्टि देखी जा सकती है-

"अब तो समाज की नवीन धारणा बनी
हैं लुट रहे गरीब और लूटते धनी
सम्पत्ति हो समाज के न खून से सनी
यह आँच लग रही मनुष्य के शरीर को
तुम आँच में ढलो नवीन आँच में ढलो
तुम आँच में ढलो।"

(नवीन, पृष्ठ ७४-७५)

नेपाली की प्रखर राष्ट्रीयता के दर्शन भी 'नवीन' की कई कविताओं में होते हैं। 'नवीन' की कविताओं में जो राष्ट्रीय स्वर है, उसके मूल में तत्कालीन परिस्थितियों का आग्रह है। १९४२ के बाद राष्ट्रीय आन्दोलन प्रखर हो जाता है। गान्धीजी के नेतृत्व में पूरा देश अपनी स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए सक्रिय हो जाता है। नेपाली इस सक्रियता को अपना सम्पूर्ण रचनात्मक समर्थन देते हैं। नेपाली मात्र रचनात्मक स्तर पर इस आन्दोलन में सक्रिय नहीं होते, बल्कि अपने व्यक्तित्व को भी इसमें झोंक देते हैं। हिमालय नेपाली की राष्ट्रीय चेतना का जीवंत प्रतीक रहा है। 'नवीन' की एक कविता में नेपाली स्पष्ट शब्दों में बोल उठते हैं-

"गिरिराज हिमालय मेरा है प्रहरी
प्रेमांजलि मेरी सागर की लहरी
मेरी मधुर उमंगें वन की कलियाँ
ये ग्राम-नगर मेरी जीवन गलियाँ
मैं इसी देश की मिट्टी का पुतला
इसको जिसने कुचला, मुझको कुचला
मेरी स्नेहमयी आँखों में देखो
श्यामल यमुना का निर्मल जल छलका
मैं पथिक सदा प्यासा गंगा-जल का"

(नवीन, पृ० सं० - ३४)

'हिमालय ने पुकारा' नेपाली की अन्तिम प्रकाशित काव्य-कृति है। नेपाली की राष्ट्रीयता का प्रखर उद्घोष इस संग्रह की अधिकांश कविताओं में सुनायी देता है। यह वह कृति है जिसके आधार पर 'वन मैन आर्मी' के रूप में कवि की पहचान बनी थी। इस संग्रह का प्रथम संस्करण फरवरी, १९६३ में प्रकाशित हुआ था और इसी वर्ष अप्रील में नेपाली का भागलपुर रेलवे स्टेशन पर आकस्मिक निधन हुआ था। १९६४ ई० में इसका भागलपुर संस्करण प्रकाशित हुआ। 'हिमालय ने पुकारा' कवि की ३८ महत्त्वपूर्ण देशभक्ति-प्रधान कविताओं का संग्रह है। श्री रामधारी सिंह दिनकर ने दूसरे संस्करण में अपना अभिमत देते हुए कहा था- "हिमालय

ने पुकारा' उनकी नवीनतम कविताओं का संग्रह है। इन कविताओं की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि जनता के बीच इन्हीं कविताओं का गान करते-करते नेपाली जी १७ अप्रैल को भागलपुर में शहीद हुए। पिछले साल १० अप्रैल को मुझसे उनकी मुलाकात सैदपुर गाँव में हुई थी। उन दिनों वे अपने को राष्ट्र-रक्षा के कार्य पर नियुक्त समझते थे। मुझसे उन्होंने कहा था, **'दिनकर जी! आई ऐम ऐन वन मैन आर्मी आव इण्डिया।'** नेपाली जी चले गए, किन्तु उनकी सेना मौजूद है। यह सेना उनकी कविताओं की सेना है।''

संग्रह की पहली कविता में ही भावी चीनी युद्ध से देश को अगाह करते हुए नेपाली ने कहा है-

''अम्बर के तले हिन्द की दीवार हिमालय
सदियों से रहा शान्ति की मीनार हिमालय
अब माँग रहा हिन्द से तलवार हिमालय
भारत की तरफ चीन ने है पाँव पसारा
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा''

(हिमालय ने पुकारा पृ० सं० - २१)

इस संग्रह में नेपाली का संकल्प पूरे देश का संकल्प बन गया है। चीन को चुनौती देते हुए और राष्ट्र को उद्‌बोधित करते हुए नेपाली ने यह भी कहा है-

''हम शीश झुकाएँगे, न फरियाद करेंगे
जो हमसे लड़ेगा उसे बर्बाद करेंगे
फिर साथ ही तिब्बत को भी आजाद करेंगे
मौका है यही देश की दीवार बढ़ा लो
इन चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो।''

(हिमालय ने पुकारा, पृ० सं०-२२)

'हिमालय ने पुकारा' में राष्ट्रीय चेतना के साथ हिमालय की प्रगतिशील चेतना के भी दर्शन होते हैं। नए समाज के निर्माण के लिए समानता पर बल देते हुए नेपाली का यह भी कहना है-

''अशान्ति है कि क्रान्ति की नवीन आग चाहिए
स्वराज्य के विधान में नवीन राग चाहिए
कि अर्थ का जमीन का समान भाग चाहिए
समाज पर कभी रहे न व्यक्ति की प्रधानता
मनुष्य मांगता यही, यही मनुष्य मानता
कि हो समाज-राज में मनुष्य की समानता।''

(हिमालय ने पुकारा, पृ० सं० ९४)

इन संग्रहों के अतिरिक्त नेपाली की काफी रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में बिखरी हुई हैं। फिल्मों में जाने के बाद नेपाली का साहित्यिक लेखन बन्द नहीं हुआ। **'साप्ताहिक हिन्दुस्तान'** और **'धर्मयुग'** में उस दौर में उनकी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुईं **'नवीन'** के प्रकाशन के उन्नीस वर्षों के बाद **'हिमालय ने पुकारा'** संग्रह छपकर आया।

यह संग्रह एक विशेष उद्देश्य के लिए समर्पित था, इसलिए इसमें नेपाली की अनेक वैसी प्रेम और सौन्दर्यपरक रचनाएँ नहीं आ पायीं, जिन्हें लोक-जीवन ने सर-आँखों पर बिठाया था।

नेपाली की उपर्युक्त सातों काव्य-कृतियों के विश्लेषण के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि **नेपाली के काव्य की मूल संवेदना प्रेम और सौन्दर्य है। नेपाली के काव्य में प्रेम के कई आयाम हैं, मसलन; नारी प्रेम, प्रकृति-प्रेम, देश-प्रेम और दलित-शोषित प्रेम। इसी तरह उनका सौन्दर्य-चित्रण है, उसमें रूप-सौन्दर्य, प्रकृति-सौन्दर्य, भाव-सौन्दर्य, सबको स्थान मिला है।** नेपाली अपनी कविता के शिल्प के लिए भी अनवरत प्रयत्न करते रहे हैं। उनकी परवर्ती रचनाओं में गीति-तत्व अधिक प्रखर हो गया है। सहज भाषा में जीवन के मनोभावों को जीवंत कर देने की कला में वे बेजोड़ हैं। **नेपाली** का सम्पूर्ण जीवन साहित्य के लिए, साहित्य की समृद्धि के लिए समर्पित रहा है। उन्होंने सत्ता के लिए कोई समझौता नहीं किया। पद-प्राप्ति के लिए स्वयं को चारण नहीं बनाया। **कबीर** की तरह वे घर जोड़ने की माया से मुक्त रहे। **निराला** की तरह उनका पूरा जीवन संघर्षपूर्ण रहा। मायानगरी उन्हें मोह नहीं सकी। जीवन की सार्थकता में आनन्द मनाने के आग्रही होने के बावजूद उन्होंने किसी प्रभामंडल से आलोक उधार नहीं लिया। **पुरस्कार एवं सम्मान के लिए चापलूसी नहीं की।** इसलिए अपने अन्तिम संग्रह में अपने आत्मस्वाभिमान का परिचय देते हुए वे यह कहने में समर्थ हो सके हैं-

लिखता हूँ अपनी मर्जी से
बचता हूँ कैंची-दर्जी से
आदत न रही कुछ लिखने की
निन्दा-वन्दन खुदगर्जी से,
कोई छेड़े तो तन जाती, बन जाती है संगीन कलम
मेरा धन है स्वाधीन कलम

(हिमालय ने पुकारा, पृ० सं० ९०)

□

द्वारा - श्री एच० सी० मिश्र
ए/६, प्राच्वी कनिष्का अपार्टमेंट
बाजार समिति रोड, पटना-८०० ०१६
(बिहार)

प्रकृति की बहुरंगी छवियों के गीतकार नेपाली

● डॉ. चन्द्रकान्ता

नेपाली ने वादों से मुक्त रहकर जीवन और प्रकृति का स्वच्छंद गीत गाया है। उनकी कविताओं में प्रकृति की अपनी स्वतंत्र सत्ता है, जो स्पन्दनशील एवं प्राणवान है। पूर्व कवियों की तरह इन्होंने प्रकृत्ति को मानव भावनाओं की अभिव्यक्ति का साधन मात्र, उद्दीपन, प्रतीक के रूप में इतिवृत्तात्मकता के लिए ही प्रयोग नहीं किया। इन्होंने उसमें स्वतंत्र व्यक्तित्व को स्वीकारा और उसके आन्तरिक सौंदर्य को उजागर किया। प्रकृति उनके जीवन की प्रेरक शक्ति बनीं। प्रारम्भिक काल की उनकी इन पंक्तियों से इसकी पुष्टि होती है:-

पीपल के पत्ते गोल-गोल
कुछ कहते रहते डोल-डोल

इन दो पंक्तियों से ही कवि के प्रकृति- प्रेम, सूक्षम एवं दृष्टि का परिचय मिलता है। पीपल-वृक्ष में डोलते पत्तों की शीतल छाया सुखद होती है। पर हवा में डोलते उन पत्तें की मूक भाषा को पढ़ने का प्रयास **नेपाली** की अपनी विशेषता है। गोल-गोल डोलते एक चित्रात्मकता के साथ अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने में सफल हुए हैं।

साहित्य-देवता की पूजा के लिए कवि ने जग की कल्पना एक मंदिर के रूप में की है, जिसे उसने प्रकृति के नाना उपकरणों से सजाया है। कवि के शब्दों में-

जग का मंदिर आज सजा है
स्वर्णिम रवि की स्वर्णध्वजा है।

उस मंदिर में प्रतिष्ठित देवता की पूजा का एक अपूर्व चित्र प्रस्तुत किया गया है, जो इस प्रकार है:-

पूर्ण चन्द्र आरती उतारे
दीपक बन जल उठे तारे
धूप धूम्र बन मेघ उड़ रहे
मलय पवन नेवैद्य सँवारे

कवि मंदिर का बना पुजारी दीप अखंड बना ध्रुव-तारा। इन पंक्तियों में प्रकृति को उसमें व्यापक रूप में देखने का प्रयास है यह कविता प्रकृति के प्रति एकाग्रता का परिचायक है। इन्होंने प्रकृति को अपनी पूजा का एक मात्र साधन बनाया है।

कवि की भावनाओं में स्नात होकर प्रकृति प्राणवान हो उठी है। **''बालारुण का स्वर्णिम रथ पर बैठकर ज्योति का धूम मचाना''** कवि की अनोखी कल्पना है। अब प्रात: किरणों के सम्बन्ध में कवि की कल्पना का कमाल देखें :-

किरण बन विहग-सी उड़ चली
किरण जल लहरों-की घुल पड़ी
खोजती फिरी गुहा से गुहा
तिमिर को किरणों की फुलझरी
तिमिर भाग बन तरु छाँह
चली किरणें तरु को छान।

किरण का बन विहग-सा उड़ चलना तथा अंधकार को गुहा एवं तरु की डाली से छन-छन कर उसकी सिमटी छाया में ढूँढ़ना अपनी चित्रात्मकता के साथ कल्पना वैचित्र्य का उत्कृष्ट नमूना है।

प्रकृति की **''छवि के जाल में''** कवि का **''नयन मीन''** उलझकर रह गया है। उषा का भूतल पर पदार्पण हो रहा है। कवि की कल्पना की आँखों से उसे निहारें :-

उषा ने मला अबीर-गुलाल
कमल का गाल पर दिया लाल
उठा संध्या ने सिंदूर
विहग का घर-आँगन भर दिया।

उषा के बाद शनैः-शनैः दिन बीतता है। संध्या की झुटपुट बेला में प्रतीक्षा करती रजनी के भावात्मक चित्र का अवलोकन करें :-

संजोय धन आँचल में दीप
खरी है पथ पर रंजनी प्रिया

इतना ही नहीं, रात गहरा गई है, चाँद निकल आया है, कवि कल्पना करता है:-

गगन है नील सरोवर बना, बना है चाँद गगन का मीन। गगन के नील सरोवर में चाँद का मीन के रूप में कल्पना अपने में सटीक है।

निर्झर की उद्याम गति के साथ जैसे कवि का हृदय स्वयं ताल देने लगता है, उसकी गति एवं मनोभावों को उसने इन पंक्तियों में बाँधने का सफल प्रयास किया है:-

हँसा मैं उन्मुक्तों की हँसी
फूल-जल बूँद-बूँद से झरे
महज मेरी गागर में आज
लबालब कितने सागर भरे
चला मैं हहर-हहर उद्भ्रान्त
तटों पर फैला हाहाकार

''फूल-जल'' का बूँद-बूँद भरना तथा झरने का उन्मुक्ता-सी हँसी हँसना एक ऐसी कल्पना है, जो मन को बरबस गुदगुदा जाती है। भावों की चित्रात्मक अभिव्यंजना का इससे अच्छा और क्या उदाहरण हो सकता है!

कवि की चित्रात्मक अभिव्यक्तियों के और उदाहरण देखें:-

"रही धूलों में बिजली लोट"- धूल से कवि का तात्पर्य मेघ के उड़ते बादलों से है। दूसरा चित्र है:-

नव वसन्त के कुंज-कुंज में मेरे पात फल-फूल
ग्रीष्म उड़ाती रही सुरभि की मधुर सुवासित धूल

और

कवि है नीड़ क्षितिज डाली है, नभ वन-सा दिखालाता
विहग चंचु में लिए किरण का तिनका उड़ता जाता

फिर

वर्षा से मधुर भींग रहे
कानन में तरुवर भींग रहे
कंपित तरु पातों में बीच
पंछी के पर भी भींग रहे

धूल में उड़ते बादलों में बिजली का लोटना, ग्रीष्म ऋतु का सुरभि का मधुर सुवासित धूल उड़ाना, विहग चंचु में किरण का तिनका लिए उड़ना तथा वर्षा की फुहारों में कंपित तरु पातों के बीच पंछी का पर भींगना आदि ऐसे बिम्ब हैं जो भुलाए नहीं भूलते। यह **कवि की सूक्ष्म, सजीव, चित्रात्मक अभिव्यक्ति शैली के प्रतीक हैं।**

इन पंक्तियों में वर्षा के पूर्व उभरते, गरजते मेघ का बड़ा ही स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत किया गया है। कवि के शब्दों में :-

मचा यमुना तट पर शोर
उमड़ आ रही घटा घनघोर
हहर कर चली पवन झकझोर
उड़ाती घन आँचल का छोर

इसी से मिलता जुलता दूसरा चित्र है:-

उठी नभ में सागर की लहर
चली लहरें बूँदों में छहर
कि बूँद थिरक रही है आज
बूँदों की टप-टप की आवाज

इन पंक्तियों में कवि ने भाव और चित्र के साथ ध्वनि को भी शब्दों में बाँधने का प्रयास किया है, जो अपनी कलात्मकता के साथ उजागर हुआ है।

इन पंक्तियों में बरसती बूँदों की कल्पना हर सिंगार के फूल तथा टूटे कंठहार में बिखरते दानों से की है। क्या मनोहर कल्पना है:-

बूँदों में झरते हर सिंगार
बूँदों में टूटे कंठहार

प्रकृति की शोभा देख कर कवि का मन-मोर नाच उठता है। वह अपने मन के अह्लाद को किसी प्रकार नहीं समेट पाता। यह इन पंक्तियों में स्पष्ट है:-

जागो मेरे प्राण, विश्व की छटा निहारो, भोर हुई है,
नभ के नीचे मोती चुन-चुन नन्हीं दूब किशोर हुई है।

शरत के चाँद और पावस ऋतु में बादलों से अठखली करते चाँद का वर्णन बहुत से कवियों ने किया है। परन्तु पतझड़ के चाँद को चित्रित करने का श्रेय इसी कवि को है। इन पंक्तियों में उसकी सहज प्राकृतिक सुषमा का रसास्वादन करें:-

डाल पर आकर उलझा चाँद
पतझर का चाँद
और हँस रहा चाँद उस पार
खड़ा अनुरागी कवि इस पार
बीच में तरु की नंगी डाल
घनी सूखी डालों का जाल
झर चुके जिसके सारे पात
कि ऐसी थी पतझर की रात

चित्रात्मकता के साथ नाटकीय प्रस्तुतीकरण तथा भव व्यंजना इस कविता का प्राण है।

प्रकृति के ऐसे चित्रों से उनकी कविताएँ भरी पड़ी हैं। अगर **नेपाली-काव्य-साहित्य को प्राकृतिक चित्रों का "महा एलबम" कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।** उन सभी को यहाँ प्रस्तुत करना सम्भव नहीं है। इन पंक्तियों के लेखक के समक्ष उनकी सभी रचनाएँ उपलब्ध भी नहीं हैं। प्राप्त रचनाओं के आधार पर ही इस रचना का रूप खड़ा किया गया है। **धृष्टता नहीं होगी, अगर मैं यह कहूँ कि हिन्दी-काव्य-साहित्य के आदि काल से किसी कवि ने प्रकृति का ऐसा रूप प्रस्तुत नहीं किया है जैसा नेपाली ने प्रस्तुत किया है।**

कवि का जीवन जैसे प्रकृति में एकाकार हो गया है। कवि प्रकृति और जीवन में एक समता का दर्शन करता है। उनकी प्रसिद्ध कविता **'नीलिमा'** में इस तथ्य का बहुत ही सुन्दर प्रतिवादन हुआ है।

मिलते-जुलते दो लोक
गगन भी नील नयन भी नील

इस चित्र को और स्पष्ट करते हुए कवि कहता है:-

गगन का जीवन है दिनमान
जवानी है तारों की रात
गगन के आँगन में घनश्याम
मचा देते निशि-दिन बरसात
फेंकता जीवन पर आलोक
नयन का महज आनन्द प्रकाश

उपर्युक्त चित्र में गगन और नयन क्रमशः प्रकृति और जीवन के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं। इनकी कविताओं में प्रकृति और जीवन को समानान्तर रेखाओं में अग्रसर होता हुआ चित्रित किया गया है।

साधारणतः दो समानान्तर रेखाएँ आपस में कभी नहीं मिलतीं पर उच्च गणित-शास्त्र के अनुसार वे अनन्त में मिलती हैं। **गणित का अनन्त साहित्य का क्षितिज है।** अतः, हम पाते हैं कि कवि का जीवन क्षितिज पर प्रकृति के साथ एकाकार हो जाता है। यही कवि का अपना व्यक्तित्व है, उस के क़ाव्य का सौंदर्य, जो साहित्याकाश पर अपनी सम्पूर्ण कलाओं के साथ इन्द्रधनुष-सा अपनी प्रतिमा की किरणें विकीर्ण करने में सफल सिद्ध हुई है।

कवि के जीवन की गूढ़तम भावनाएँ प्रकृति में घुल-मिल कर अवतरित हुई हैं। कवि का सारा जीवन संघर्षमय रहा। उनके जीवन की बाती स्नेह-तेल के अभाव में नाना उपेक्षाओं के झोकों को सहती हुई काँपती झिलमिलाती रही है। वेदना की गहराई इन पंक्तियों में देखें:-

सावन-भर नाचा मोर मगर
बौछार मिली बादल न मिला
जीवन भर आँखियाँ रोई तो
जलधार मिला आँचल न मिला

दूसरा चित्र है, प्रकृति के माध्य से कैसे उसका अपना जीवन अभिव्यंजित हुआ है:-

पौ फटते बड़े सबेरे किरण चूम कर चला हुआ हूँ
ज्योंकि पुत्र हूँ, हाँ! ऐसा सच है कि सिमिर में पला हुआ हूँ।

पर इन वेदनाओं में भी कवि अपने लक्ष्य से विचलित नहीं होता, **उसका सम्वेदनशील मन बराबर एक सौंदर्य ढूँढ़ता फिरता है।** रूप-दीप को लक्ष्य कर लिखी गई कवि की इन पंक्तियों को देखें :-

मेरे जीवन की संध्या में तुम झिलमिल तारा बन आई
मधुर तुम्हारी रूप-सुधा से झूम उठी मेरी परछाई
किसने मेरे शून्य कक्ष में, यह दीपक रख दिया जलाकर
जिसकी ज्योति लहर में मेरा डूब रहा कल्पनाकाश था

अपनी प्रिया के प्रति उनके उद्‌गार इन शब्दों में अभिव्यंजित हुए हैं :-

मैं तो हूँ मिट्‌टी की प्याली
जो भरने से पहले खाली
मेरी प्राण सुधा तुम अपनी
प्याली में बरबस ढरती हो।

कवि के मन की उलझन बरबस उसे इन पंक्तियों में एक चौराहे पर लाकर खड़ी कर देती है, जहाँ उसे चारों ओर निराशा-ही-निराशा दिखती है:-

नभ में यह बादल क्यों छाया
जल देकर उस ने क्या पाया
ये कौन नयन मेरे जैसे
जिन में जल सिन्धु उमड़ आया।

ये पंक्तियाँ हमारे समक्ष भी एक प्रश्नचिह्न खड़ा करती हैं। पर इनका सही उत्तर तो एक समीक्षक ही दे सकता है।

कवि प्रतिरोध की उपज है। **वह विरोध की चट्‌टानों की छाती चीरकर खिलने वाला प्राकृतिक सौंदर्य का एक महकता हुआ फूल है।** इन पंक्तियों में वर्जित सत्य का दिग्दर्शन करें:-

जब खोज रहे थे जीवन में हम प्रेम-कुंज की छाँह घनी
उस समय अकारण ही हम पर जगत् की नंगी तलवार तनी।



हिन्दी-विभाग
ए. एन. कॉलेज
पटना - ८०० ००१

वन मैन आर्मी : नेपाली

● डॉ. उमेश कुमार सिंह

कैलेण्डर की बदलती तारीखों के बीच बहुत सुखद लगता है- पीछे छूट गए लम्हों और चेहरों को याद करना।

परन्तु, अब तो समय के पंखों पर तेजी से उड़ते जीवन की आपाधापी में संभव ही नहीं हो पाता है, अतीतजीवी बन उन बीते पलों को जीना, जब मेरे अंदर साहित्यिक संस्कारों के बीज के साथ कलाकार व्यक्तित्व के बिरवे भी रोपे गए थे।

वे फुर्सत और इत्मीनान के दिन हुआ करते थे। जब होली, दिवाली और गर्मी-छुट्टी के इंजार में समय काटे नहीं कटता था- वे आज के तेज रफ्तार वाले शोरगुल में डूबे अजनबी बने चेहरों-से घिरे दिन नहीं थे।

तब गाँव की सौंधी गंध थी। सीधे भोले-भाले चेहरे थे। कस्बाई जीवन की विशेष पहचान बनती थी, आत्मीयता-शहरी बनने की ललक वाले संस्कार और आकाश की ओर सिर उठाए इमारतों का दूरत्व भरा आकर्षण लिए।

वे मेरे अंदर बनते साहित्यिक -कलागत संस्कारों के दिन थे- जब सुदूर बसे देहात के मेरे खपरैल के घर में उनींदी दोपहरी को लकड़सुंघवा का नाम लेकर डराकर मुझे सुलाती मेरी दादी स्वयं सो जाती थी और मैं उसकी काठ के बड़े संदूक के अजायबघर में सहेजकर रखी पुरानी चीजों–मसलन चाँदी का हुक्का, अंगरेजी राज के जमाने के सिक्कों तथा ज़री लगी टोपी के बीच उस वक्त निकलने वाली हिन्दी-कथा पत्रिका **'माया'**, **'पाटल'** और **'किशोर'** के अंक निहारा करता था। **'माया'** के उन्हीं अंकों के प्रथम या दूसरे पृष्ठ पर लिखे मेरे पिता के सुन्दर अक्षरों में मेरी माँ के नाम प्रत्येक अंक समर्पित किए गए थे। वे पत्रिकाएँ ही देहात के मेरे घर को उस शहर से जोड़ती थीं, जहाँ मैं माता-पिता के साथ रहता था और गाँव छुट्टियों में आया करता था।

उन पत्रिकाओं को देखते, **'चन्दामामा'** से गुजरता मेरा बचपन मेरे माध्यमिक स्कूली जीवन की देहरी पर हाजीपुर के कस्बेनुमा शहर में आकर टिक गया था, जहाँ नगर के श्रीकृष्ण पुस्तकालय में गुजरती शामें, वहाँ की साहित्यिक-सांस्कृति संस्था **'किरण मंडल'** के कवि-सम्मेलनों, रेडियो सिलोन और विविध भारती के फिल्म संगीत के कार्यक्रमों तथा नेशनल सिनेमा के दोपहर की फिल्मों के बीच मेरे अंदर का कलाकार फिल्म-अभिनेता एवं साहित्यकार बनने को आतुर हो गया था। और इसके लिए फिर शुरू हुई थी गंभीर कोशिशों के बीच साहित्य, सिनेमा के प्रसिद्ध चेहरों से प्रभावित, उत्प्रेरित विकास-यात्रा ....

उन्हीं चेहरों के बीच बरबस याद आते रहते हैं- गीतों के शहंशाह **गोपाल सिंह नेपाली**- जिनके सान्निध्य से प्रभावित एवं आशीर्वाद से अनुप्राणित मेरा किशोर-मन साहित्य एवं कला की सेवा में समर्पित हो गया था, जिसके फलस्वरूप बाद में भारत की स्तरीय पत्रिकाओं में मेरी कहानियाँ एवं विभिन्न विधाओं की रचनाएँ प्रकाशित होकर जहाँ मुझे एक साहित्यकार बना गईं, वहीं मेरे लेखन-निर्देशन एवं अभिनय की शीघ्र प्रदर्शित होने वाली हिन्दी-फीचर-फिल्म 'हम तुम्हें याद आएँगें' फिल्म-जगत् से भी आज मुझे जोड़ रही है ....

और, जब कभी मैं अपनी इन उपलब्धियों पर सोचता हूँ, तो अपने निजी पुस्तकालय की आलमारी में किताबों के बीच रखी लाल डायरी वाली मेरी कहानियों की हस्तलिखित किताब के दूसरे पृष्ठ पर काली स्याही में लिखी **श्री गोपाल सिंह नेपाली जी** हस्त-लिखित पंक्तियाँ उनकी याद में मेरी आँखें नम कर देती हैं।

२७.१०.१९६१ को उनके द्वारा मेरी कहानियों को पढ़कर लिखी गई सम्मति में मेरे सुंदर साहित्यिक भविष्य तथा सफल कलाकार बनने के लिए उनके द्वारा उम्मीद भरी कामना की गई थी...

और, सूखते पुराने पड़ते उस कागज पर लिखी उन इबारतों के बीच से उभरते **नेपाली जी** मेरी ऊँगली पकड़ मुझे यादों के सफर पर ले चलते हैं.....

सन् साठ के दशक की यात्रा -

सन् साठ के बाद नेपाली जी प्रतिवर्ष हाजीपुर की साहित्यिक संस्था **'किरण मंडल'** के कौमुदी महोत्सव में कविता पाठ करने आते थे और यहाँ के वयोवृद्ध चिकित्सक एवं कवि **डॉ० दामोदर प्रसाद** जी के यहाँ ठहरते थे।

डॉ० दामोदर प्रसाद जी के घर पर नगर के कवियों एवं युवाओं की भीड़ लगा करती थी, **नेपाली** जी का सान्निध्य पाने को। नेपाली जी हर वक्त लोगों से घिरे कस्बाई सौहार्द्र का आनंद उठाते हाजीपुर के लोगों को मनोरंजन से भरपूर बातें एवं संस्मरण सुनाते रहते थे। उनके सान्निध्य का हर पल एक उत्सव बन जाता था। अपने साथ फोटो खींचवाने को लोग उन्हें स्टूडियो तक ले आते थे। सामान्य जन जो साहित्य से कोई सरोकार नहीं रखते थे, वे भी नेपाली जी के चुम्बकीय व्यक्तित्व से चिपके रहते थे, क्योंकि **नेपाली जी फिल्मी दुनियाँ से संबंध रखने वाले सुप्रसिद्ध गीतकार थे।**

ये वे दिन थे - जब आज की तरह बम्बई के फिल्म स्टूडियो में भी सामन्य जनों का प्रवेश, आसान नहीं था और फिल्म हस्तियाँ आम आदमी की तरह इधर-उधर डोलती नजर नहीं आती थीं .... फिल्म क्षेत्र से जुड़ा कोई भी हस्ताक्षर भारत के किसी भी क्षेत्र में अतिरिक्त उत्सुकता से देखा जाता था ... **नेपाली** जी भी कवि-सम्मेलनों के मंच पर इसी कारण विशेष उत्सुकता से देखे जाते थे और उनसे फिल्मी गीत सुनाने की फरमाइशों भी की जाती थीं ....

नेपाली जी को सन् १९४४ में बम्बई के एक विराट कवि-सम्मेलन में उनके द्वारा रचित कविताओं और गीतों के ओज तथा उन रचनाओं में ढले उनके स्वर से प्रभावित होकर उस समय की मुंबई की सबसे बड़ी फिल्म निर्माण संस्था 'फिल्मिस्तान' (जिसका विख्यात फिल्म स्टूडियो बम्बई के गोरेगाँव में आज भी व्यस्ततम फिल्म-निर्माण स्थली है) के मालिक **सेठ तोला राम जलान** एवं सुप्रसिद्ध निर्माता **शशिधर मुखर्जी** ने उन्हें उस दौर के एक सम्मानजनक मासिक वेतन पर अपने प्रोडक्शन में बतौर गीतकार रख लिया था (तब निर्देशक, अभिनेता, अभिनेत्री, कथा-पटकथा-संवाद- लेखक, गीतकार एवं अन्य तकनीशियन मासिक वेतन पर ही रखे जाते थे) यह वही फिल्मिस्तान स्टूडियो था, जो पूर्व में बम्बई की मशहूर फिल्म निर्माण संस्था 'बाम्बे टाकीज' के रूप में जाना जाता था और जिसके मालिक **हिमांशु राय** एवं **देविका रानी** जैसे

दिग्गज थे। इस संस्था ने **मुंशी प्रेमचंद**, अमृतलाल नागर, भगवती **चरण वर्मा**, **सआदत हसन मंटो** तथा **कवि प्रदीप** जैसी हस्तियों को अपने यहाँ नियोजित किया था। बम्बई के फिल्मी जीवन में **नेपाली जी** के लिखे गीत **मज़दूर**, **सफर**, **गजरे**, **शिकारी** जैसी सामाजिक फिल्मों से लेकर **तुलसीदास**, **नागपंचमी**, **हर-हर महादेव**, **शिवभक्त**, **जय भवानी** ऐसी पौराणिक फिल्मों में मशहूर होकर समस्त भारत की नर-नारियों के बीच **नेपाली** जी अमर बन गए थे...

फिल्म '**तुलसीदास**' के गीतों के अतिरिक्त **कभी आर करके, कभी पार करके, चले आओ हमारे अँगना**'', '**नागपंचमी**', **मेरे पिया को न डसियो रे**, तथा **अर्थी नहीं नारी का संसार जा रहा है, भगवान तेरे घर का शृंगार जा रहा है**'' और '**शिवभक्त**' का गीत **जिसे बनाना उसे मिटाना काम तेरा, मिटने वाले फिर क्यों लेंगे नाम तेरा**''। उस दौर में ये गीत जब 'रेडियो सिलोन' एवं 'विविध भारती' तथा आकाशवाणी के विभिन्न कार्यक्रमों में बजते थे, तो बार-बार **नेपाली जी** का नाम गूँजता रहता था ....

तब, सिनेमाघरों में एवं रेलगाड़ियों के डिब्बों में फिल्मी गानों की किताबें भी धड़ल्ले से बिका करती थीं एवं गानों के **एच. एम. व्ही.** और **कोलम्बिया कम्पनी** के रिकॉर्ड्स भी काफी प्रचलन में थे - उन रिकॉर्डों पर ग्रामोफोन की तस्वीर निर्देशक, गीतकार, संगीत निर्देशक एवं गायक- गायिका के भी नाम छपे होते थे ....

आज भी मैं जब उन पुराने रेकार्ड्स के बीच से गुजरता हूँ, तो अनेक रेकार्डों पर गीतकार के रूप में **जी. एस. नेपाली** का नाम पाता हूँ। ये हमारे यही **गोपाल सिंह नेपाली** हैं। वे दिन अलग तरह के दिन थे, जब समूचे हिन्दुस्तान में कन्या कुमारी से कश्मीर तक ... यहाँ तक कि असम जैसे पूर्वांचल के सुदूर प्रान्त में भी वर्ष में कई बार महानगरों, बड़े, मंझोले-छोटे शहरों, कस्बों से लेकर गाँवों तक थियेटरों, कवि-सम्मेलनों, रामलीला, सर्कस तथा यात्रा - जैसे आयोजन धूमधाम से होते थे और पढ़ी-लिखी तथा अनपढ़ जनता भी इन आयोजनों के कलाकारों एवं कवियों को देखने-सुनने को आतुर रहती थी।

सन् पचास के दशक में धूमकेतु की तरह कवि-सम्मेलनों के आकाश पर उभरी थी **नेपाली, बच्चन** एवं **दिनकर** की तिगड़ी और **सन् साठ के दशक में कविवर नेपाली गीतों के शहंशाह बन गए थे** .....

नेपाली जी की कविताओं और गीतों की यह विशेषता रही कि वे गंभीर भाव-बोध लिए विभिन्न विषयों-मसलन प्रकृति-चित्रण, देश-भक्ति के ओज तथा प्रेम-संदर्भों की कोमल अनुभूति से केवल पूर्ण ही नहीं थे, बल्कि गेयता के स्तर पर सुमधुर एवं कर्णप्रिय होने के कारण ही जन-जन द्वारा सराहना पाकर अपार जन-समूह का कंठ स्वर भी बने। ये रचनाएँ **नेपाली जी** के संकलन - **पंछी, रागिनी, नवीन, उमंग, नीलिमा, पंचमी तथा हिमालय ने पुकारा** नामक संग्रहों में संग्रहीत होकर इतनी सराही गईं कि बम्बई में अपनी हिन्दी-फीचर-फिल्म '**हम तुम्हें याद आएँगे**' के निर्माण के क्रम में जब मैं प्रख्यात फिल्म अभिनेता **भारत भूषण** को अनुबंधित करने उनके बांद्रा स्थित आवास पर गया, तो **भारत भूषण जी** ने अपने पुस्तक-प्रेम

की चर्चा करते हुए मुझे बतलाया कि वह **नेपाली** जी के बहुत बड़े प्रसंशक हैं और साथ ही मुझसे यह आग्रह भी किया कि मैं **नेपाली** जी के कुछ संकलन उन्हें उपलब्ध करा दूँ .....

ये वे दिन थे- जब आज की तरह शिक्षित परिवार के लोग दूरदर्शन के कार्यक्रमों से चिपके नहीं रहते थे ... हिन्दी पत्रिकाओं में **'धर्मयुग'**, **'साप्ताहिक हिन्दुस्तान'** और **'कादम्बिनी'** जैसी कुछ स्तरीय पत्रिकाएँ नियमित रूप से पढ़े-लिखे परिवारों में आकार उन परिवारों के सदस्यों के सभ्य, सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत होने के प्रमाण बनती थीं .... और इन पत्रिकाओं में नेपाली जी की कविताएँ नियमित रूप से छपकर उन्हें जन-मानस का लोकप्रिय कवि बना गई थीं... **'मुसाफिरों से क्या माँगे'** (भूदान) तथा **'मन दुबारा-तिबारा पुकारा करे'** ऐसी नेपाली जी की प्रसिद्ध कविताएँ मैंने क्रमशः **'धर्मयुग'** एवं **साप्ताहिक हिन्दुस्तान'** में ही सर्वप्रथम पढ़ी थीं।

साथ ही रेडियो पर तथा विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी विभिन्न गायक-गायिकाओं द्वारा गाये जाने के लिए नेपाली जी के गीतों की माँग सर्वाधिक थी। **'दो तुम्हारे नयन दो हमारे नयन, चार दीपक सदा जगमगाते रहे,' 'हम दोनों के नयन चार हैं, पर डोरी है एक, हमदोनों चोर प्यार के, पर चोरी है एक' 'इन नयनों का भोला पंछी, लड़ते-लड़ते लड़ जाता है'......** या **'बरसे घनश्याम तो क्या बरसे हर घाट गगरिया प्यासी रे, हर उम्र डगरिया प्यासी रे.....**, या फिर ..... **'मेरी दुल्हन-सी रातों को नौ लाख सितारों ने लूटा'.** ..... ऐसे अनेकों गीत जहाँ युवा दिलों की धड़कन बने, वहीं **ट्रेनों के कम्पार्टमेंट में एवं सड़कों पर गाने गाकर भिक्षाटन करते भिखारियों के स्वरों में ढल कर 'शंकर की पुरी चीन ने सेना को उतारा, चौवालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा जैसे गीत गरीबों, अकिंचनों के जीविकोपार्जन के साधन भी बने।**

विद्यालय जीवन में लिखी **नेपाली** जी की शुरुआती कविताएँ उन्हें प्रकृति चित्रण के कुशल चितेरे के रूप में प्रस्तुत करती हैं-

पीपल के पत्ते- गोल गोल
कहते रहते कुछ डोल-डोल

और, **सुमित्रानंदन पंत** ऐसे महान् छायावादी कवि भी नेपाली की इस आरम्भिक कविता से मुग्ध हो जाते हैं। फिर, प्रकृति की घटा का यह चितेरा राष्ट्रभक्ति से ओत-प्रोत होकर असंख्य किशोरों के दिलों में उतरकर उनके लहू में उबाल पैदा कर देता है-

तू चिनगारी बनकर उड़ री, जाग-जाग मैं ज्वाल बनूँ
तू बनजा हहराती गंगा, मैं झेलम बेहाल बनूँ
आज वसंती चोला तेरा, मैं भी सज लूँ लाल बनूँ,
तू भगिनी बन, क्रांति कराली, मैं भाई विकराल बनूँ

बिहार प्रांत के माध्यमिक स्तर के हिन्दी-विषय के पाठ्यक्रम में लगी यह कविता प्रत्येक छात्र को किशोर वय में ही **नेपाली** जी से परिचित करा गई थी .....

नेपाली : वन मैन आर्मी

बेतिया शहर में छात्र-जीवन से ही फुटबाल के खिलाड़ी के रूप में ऊँचा, सुगठित, कद्दावर शरीर विकसित कर **नेपाली जी** फुर्तीले फौजी जवान लगते थे। आँखों पर गोल्डेन फ्रेम का चश्मा, उन्नत ललाट, सिर पर घुंघराले बाल, शरीर पर कॉटशुल या हैण्डलूम की बुश्शर्ट या टी-शर्ट एवं कॉटन या टेरीकॉटन की पैंट में सजे संवरे दर्शक-श्रोता समाज नेपालीमय हो जाता ....

एक दौर की कविता पाठ की समाप्ति ...... **नेपाली** जी को विश्राम ...... इस विराम के बीच अन्य कवियों का कविता-पाठ... फिर **नेपाली** जी को मंच पर बुलावा ...... और फिर **नेपाली** जी द्वारा पुनः कविता पाठ -

चाँद-सा हुस्न है तो गगन में बसे
फूल-सा रंग है तो चमन में बसे
चैन चोरी न कोई हमारा करे
मन दुबारा तिबारा पुकारा करे ...

फिर

बरसे घनश्याम तो क्या बरसे
हर घाट गगरिया प्यासी रे
हर उमर डगरिया प्यासी रे ...

फिर देशभक्ति गीत की फरमाइशों पर

ओ राही! दिल्ली जाना तो
कहना अपनी सरकार से
चरखा चलता है हाथों से
शासन चलता तलवार से

और बच्चों ने फरमाइश रखी तो -

चलो भाई बोम डिला, चलो भाई बोम डिला
चाऊ को बोम खिला, माओ को बोम पिला......

इसके बाद उनके लिखे फिल्मी गीतों की फरमाइश पर वीरेन्द्र देसाई के निर्देशन में बनी अपनी नई फिल्म **'जय भवानी'** के गीत मधुर सुर में वे गाने लगते थे -

शमा से कोई कह दे, कि उसके रहते-रहते
अँधेरा हो रहा
कि तुम हो कहाँ, कि मिलने को यहाँ
पतंगा रो रहा .....

अपने काव्य-पाठ का एक दौर समाप्त कर नेपाली जी मंच के पीछे सुस्ताने चले जाते थे। श्रोता मंडली से उठकर उनके प्रशंसकों तथा साहित्यकारों का समूह उन्हें घेरे रहता था। उन लोगों से घिरे विनोद में डूबे **नेपाली जी** संस्मरण एवं चुटकले सुनाते रहते थे -

'एक जगह के कवि-सम्मेलन में प्रेम-रस की अपनी कविताओं का पाठ कर मैंने बहुत वाहवाही लूटी और इसी तरह मंच के पीछे सुस्ताने आ खड़ा हुआ। तभी एक खूबसूरत महिला मेरे पास तेजी से आकर खड़ी हो गई और तपाक् से मुझसे पूछ बैठी-

'नेपाली जी! आपकी उम्र कितनी होगी?

मैं चकराया, फिर मैंने उत्तर दिया -

'यही, पचास से थोड़ा ऊपर।'

उन्होंने कहा - 'जिस आदमी की उम्र चालीस से ऊपर हो जाए, उसे इस तरह की प्रेम कविताएँ नहीं लिखनी चाहिए ....

पास खड़े लोग मेरा मुँह ताकने लगे। वे विजयी भाव से गर्वोन्नत हो मुस्कराने लगीं।

मैंने तुरंत ही उनसे पूछा - 'माफ कीजिएगा, मैडम! आप की उम्र कितनी है?

उन्होंने कहा - 'यही कोई पैंतीस वर्ष।'

मैंने घूरते ही कहा - 'मैडम! जिस औरत की उम्र तीस से ऊपर हो जाए, उसे इस तरह मुस्कुराना नहीं चाहिए ....'

फिर तो ठहाकों के बीच वह ऐसी झेंपी .... कि भाग खड़ी हुईं।

ऐसी ही प्रत्युत्पन्नमतित्व तथा विनोद से परिपूर्ण थे नेपाली जी!

आगे, वे फिर बतलाने लगे थे कि - एक कवि-सम्मेलन में मंच पर **जानकी वल्लभ शास्त्री** जी विद्यमान थे और झूम-झूम कर कविता पढ़ रहे थे। श्रोताओं के बीच से किसी ने शाबशी दी- 'वाह क्या मस्ती है.....'

और, मंच पर बैठे **नेपाली** जी के मुँह से अनायास ही निकल गया - 'जी बिल्कुल हाथी की'

फिर तो सारा मंच मय दर्शकों के, ठहाकों से गूँज उठा।

किसी अन्य जगह के कवि-सम्मेलन के मंच पर **दिनकर** जी के साथ हुए छेड़-छाड़ का जिक्र भी वे विनोदपूर्ण ढंग से करते थे- एक कवि-सम्मेलन के मंच पर **दिनकर** जी ने पौराणिक एवं ऐतिहासिक महत्व की कई कविताएँ सुनाईं। नेपाली जी की बारी आयी तो नेपाली जी ने सुनाना शुरू किया-

सुनहरी सुबह नेपाल की
रूपहली शाम बंगाल की
कर दे फीका रंग चुनरी का
दोपहरी नैनीताल की।

उनकी कविता पूरी भी नहीं हुई थी कि दिनकर जी ने चुटकी ली - 'भई, वाह! क्या भूगोल है?'

घूरते ही नेपाली जी ने कहा - 'दिनकर जी के इतिहास के जवाब में यह भूगोल है....'

और खिलखिलाहटों का एक सैलाब उमड़ आया था।

यह थी **नेपाली जी** की हाजिर जवाबी। और, यह **'वन मैन आर्मी** कवि-सम्मेलनों के मोर्चे तो शौर्य से फतह करता ही था, साथ ही बड़े-बड़े दिग्गजों को अस्वीकृत करने का कौशल भी रखता था-

नेपाली जी ने बतलाया था कि जब वे पटने में **'योगी'** साप्ताहिक के संपादक-मंडल में कार्यरत थे तो **'योगी'** के संपादक **श्री बजरंग वर्मा** उन्हें एक नामी गिरामी नेता का भाषण सुनवाने गान्धी मैदान ले गए, अपने ओजपूर्ण भाषण के लिए अपने प्रांत के वे नेता, विख्यात थे। यह वाकया देश की आजादी से पहले का है।

अपने भाषण की शुरुआत में ही नेता जी ने कहा ह .... में? .... ? .... ? आजादी चाहिए।'

नेपाली जी बिदक गए, वर्मा जी से कहा – 'यही ओजपूर्ण भाषण है? ..... हुः ह, केवल गर्जना!'

वर्मा जी को वे जर्बदस्ती सभा से उठाकर **'योगी'** कार्यालय ले आए, रास्ते भर कहते रहे- 'यह भाषण की कैसी शैली है?'' ह .... ऽऽ .... में'........ इतना लम्बा और आजादी चाहिए – जो सबसे ज्यादा महत्व की, वह इतना धीमा ....'' और चकित-विस्मित **बजरंग वर्मा नेपाली जी** की बुद्धि पर न्योछावर हो गए थे ....।

ये थे **गोपाल सिंह नेपाली 'वन मैन आर्मी'**। **दिनकर जी** को ही **नेपाली जी** ने सन् बासठ के भारत-चीन युद्ध के बाद २० अप्रैल १९६३ को उत्तरी भागलपुर के सैदपुर ग्राम में आयोजित कवि सम्मेलन के मंच पर कहा था- **'दिनकर जी! आई एम ए वन मैन आर्मी आव इंडिया ....**

और वह **'वन मैन आर्मी'** समस्त भारत में अपनी कविताओं के नवीनतम संग्रह **'हिमालय ने पुकारा'** लेकर गाँव-गाँव, शहर-दर-शहर, छोटे-बड़े कवि-सम्मेलनों में **शंकर की पुरी चीन ने सेना को उतारा, चौवालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा'** का शंखनाद करने, जनता का आह्वान कर रहा था- **'भारत के प्यारे जागो, सोये सितारे जागो, वैरी दुआरे आये, तुम सर उतारो जागो....**

सरहद पर फौजी लड़ता है, बेखौफ .... और, कलम को हथियार बनाए **'वन मैन आर्मी'** तो अपने देश के अंदर ही लड़ता है- कई-कई मोर्चे पर आहत होता भी लिखता चला जाता है कभी भूदान का मजाक उड़ाते हुए- **'मुसाफिरों से क्या माँगे, धरती से माँग'** तो कभी **'घनश्याम कहाँ जाकर बरसे, हर घाट गगरिया प्यासी रे'**, तो कभी अपने समाज में महिलाओं पर हो रहे अत्याचार और नारी-जीवन की पीड़ा की अभिव्यक्ति में लिख देता है-

'वेद-शास्त्र थे लिखे पुरुष के, मुश्किल था बचकर जाना।
हारा दाँव बचा लेने को, पति को परमेश्वर जाना
दुल्हन बनकर दिया जलाया
दासी बन घर-बार चलाया
माँ बनाकर ममता बाँटी तो, महल बनी झोपड़ियाँ रे
उड़ जाएँ तो लौट न आएँ, ज्यों मोती की लड़ियाँ रे!

नेपाली : एक बेचैन आत्मा

श्री गोपाल सिंह नेपाली जीवन-पर्यन्त अभाव की जिन्दगी जीते रहे। कवि-सम्मेलनों का दौर खत्म होते ही या फिर जहाँ पर वह टिके होते थे। वहाँ से अपने प्रशंसकों का जमघट समाप्त होते ही उनकी आँखों के सामने सुदूर बम्बई के किराये के मकान में आर्थिक कष्ट झेलते अपने परिवार के सदस्यों के वर्त्तमान एवं निराशाजनक भविष्य की तस्वीरें कौंध जाया करती थीं और वे आस-पास के अन्य क्षेत्रों में एक छोटी-सी आय के लिए कवि-सम्मेलनों के आयोजन की जुगाड़ में लग जाते थे- मैंने स्वयं अपने विद्यालय में अपने छात्र-जीवन में इस निमित्त उनके काव्य-पाठ का कार्यक्रम आयोजित करवाया था।

और, बाद में तो स्थिति इतनी दुरूह हो गई थी कि **'हिमालय ने पुकारा'** नामक अपना संकलन स्वयं छपवाकर भारत भर में घूम-घूम कर कवि-सम्मेलनों में उन्हें अपनी पुस्तक बेचनी पड़ी थी।

ऐसी पीड़ाजनक स्थिति क्यों बनी थी? नेपाली जी का बयान इस संदर्भ में उनकी ये पंक्तियाँ हैं-

तुम-सा लहरों में बह लेता
तो मैं भी सत्ता गह लेता
ईमान बेचता फिरता तो
मैं भी महलों में रह लेता
तू दलबन्दी पर मरे, यहाँ लिखने में तल्लीन कलम।
मेरा धन है स्वाधीन कलम।

और, दलबन्दी नहीं करने के कारण हिमालय-सा ऊँचा व्यक्तित्व एवं सुन्दर भावपूर्ण कविताओं, गीतों के सृजन की जन्मजात क्षमता लिए **नेपाली जी** न तो दिल्ली, इलाहाबाद, बनारस ऐसे साहित्यिक राजधानी में सक्रिय अपने समकालीन साहित्यकारों की तरह अकादमिओं, आकाशवाणी में ऊँची कुर्सी ही पा सके, और न ही राजनेताओं की नज़र चढ़कर राज्य सभा या विधान परिषद् के सदस्य ही बने - विभिन्न वादों, साहित्यिक आन्दोलनों के बड़े मठाधीशों की तरह बड़े प्रकाशकों की कृपा दृष्टि भी उन्हें नसीब नहीं हो सकी .... ।

हिन्दी-प्रदेशों की साहित्यिक राजधानियों से दूर वे मराठी क्षेत्र बम्बई (मुंबई) में निवास करने देश के सबसे बड़े हिन्दी-सेवी बनकर हिन्दी की अलख जगाते रहे-

नादान नहीं थे, हरिश्चन्द्र, मतिराम नहीं थे बुद्धिहीन
जो कलम चलाकर हिन्दी में, रचना करते थे नित नवीन
इस भाषा में हर 'मीरा' को मोहन की भाषा जपने दो
हिन्दी है भारत की बोली तो अपने आप पनपने दो।

नेपाली जी ने हमेशा ही दूसरी विभूतियों की, उनकी उपलब्धियों के लिए, एक खिलाड़ी की तरह सराहना की है, बहुत उदार था उनका हृदय - फिल्म **'तुलसीदास'** के गीत में वे कहते हैं-

सच मानो तुलसी ना होते तो हिन्दी कहीं पड़ी होती
उसके माथे पर रामायण की बिन्दी नहीं जड़ी होती
हमको बसंत देकर जिसने है बदले में संन्यास लिया
हे धन्य सुहागन वो जिसने भारत को तुलसीदास दिया।

नेपाली जी ने एकबार स्वयं मुझसे कहा था कि हिन्दी के प्रचार-प्रसार में भारत के किसी भी साहित्यकार की उतनी बड़ी भूमिका नहीं है, जितनी बड़ी भूमिका **भारत की स्वर साम्राज्ञी लता मंगेशकर की है,** जिसके गाने सुनकर देश के असंख्य लोगों ने हिन्दी सीखी।

और, इतने उदारमना व्यक्तिव के लिए, जिसने हिन्दी-फिल्मों की इस यशस्वी गायिका के लिए इतने उच्च विचार रखे, हिन्दी-फिल्म-जगत् ने कुछ भी नहीं किया उसके लिए।

सन् १९४४ से १९५६ तक के कालखंड में बम्बई की फिल्म-नगरी का अंग बने रहने के बावजूद नेपाली जी ने बारह वर्षों के अपने फिल्मी-जीवन में महज चालीस-पैंतालीस फिल्मों के ही गीत लिखे- भारत प्रसिद्ध ख्यात नाम **कविवर नेपाली** की यह उपेक्षा उस फिल्म मंडी में की गई थी- जिस मंडी की फिल्मों की भाषा ही हिन्दी थी- उस **महाकवि नेपाली** की - जिसने एक ओर जहाँ **'नरसी भगत'** फिल्म में **दर्शन दो घनश्याम आज मेरी अँखियाँ प्यासी रे, मन-मंदिर की ज्योति जगा दो, घट-घट वासी रे....... दर्शन दो घनश्याम....** जैसे आज भी सुने-सराहे जानेवाले गीत दिए, तो वहीं दूसरी ओर मद्रास की **ए० व्ही० एम०** जैसी प्रसिद्ध फिल्म-निर्माण संस्था की सुपरहिट फिल्म **'शिवभक्त'** का जन-जन के बीच गूँजनेवाला वह गीत लिखकर तहलका मचा दिया, जिस गीत में समाज की विषमता, गरीबों की दुर्दशा से पीड़ित आवाज़ भगवान को चुनौती देती है-

''चाँद दिखाकर तूने समझा, दुनियाँ सारी बन गयी
फिर भी तेरी झोपड़ियों में पूनो, अँधियारी बन गयी
इन्सानों के घर से है दूर मुकाम तेरा
मिटने वाले फिर क्यों लेंगे नाम तेरा ......।''

कविवर नेपाली, प्रदीप, भरत व्यास तथा शैलेन्द्र- ये चार सुप्रसिद्ध नाम हैं, जिन्होंने हिन्दी फिल्मों में हिन्दी की गरिमा रखी, परन्तु **नेपाली जी** को भी **कवि प्रदीप** एवं **भरत व्यास** की ही तरह वहाँ के गिरोह बाजों ने धार्मिक फिल्मों के गीत लेखन तक ही सीमित कर दिया और बाद में तो उन्हें अलग-थलग करने की कोशिशें भी सफल हो गईं, जब इन्हें गीत लिखने के अवसर ही मिलने बंद हो गए- फिल्म-जगत् के स्वार्थी लोग भूलने लगे थे उस **नेपाली को,** जिसने निर्माता के रूप में जब बम्बई के फिल्मिस्तान स्टूडियो में अपनी फिल्म का शानो-शौकत से भव्य मुहूर्त्त किया था, तो पूरी फिल्म इंडस्ट्री चौंक गई थी ....

गैर हिन्दी भाषी गीतकारों, लेखकों तथा संगीत निर्देशकों ने तो नेपाली जी को दर-किनार किया ही, परन्तु दुःखद बात तो यह रही कि अपने बिहार प्रान्त के ही यशस्वी सुप्रसिद्ध

संगीतकार, चित्रगुप्त जी ने भी ए० व्ही० एम० की प्रस्तुति **'शिवभक्त'** (स्वर्गीय चित्रगुप्त ही 'शिवभक्त' के संगीतकार थे) की अपार सफलता के बाद भी उसी संस्था की दूसरी फिल्म **'भाभी'** के गीत **राजेन्द्रकृष्ण** से लिखवाये तथा अपनी संगीत रचना की अन्य दूसरी फिल्मों में भी दूसरे गीतकारों का ही साथ लिया- यह दुःखद उदाहरण है, अपने द्वारा तिरस्कृत किए जाने का ....

इन उपेक्षाओं से दग्ध नेपाली जी अपनी पंक्तियों में खुलते चले जाते हैं -

मैं समता में श्रृंगार करूँ,
महिमा कैसे स्वीकार करूँ
दासों के दर्जे में रहकर
मालिक से कैसे प्यार करूँ
दासों की प्रीति खुशामद की, मालिक का प्यार रहम भर का
मैं प्यासा भृंग जनम भर का''

यह तल्खी है- जीवन में मूल्यों के ह्रास की, मार झेलते उस बेचैन संवेदानशील आत्मा की, जिसने मुझसे कहा था- बम्बई यात्रा के दौरान प्लेटफार्म पर उतरकर पूरी भाजी खाते मैंने देखा कि एक भूखा लड़का मेरी ओर टकटकी लगाये देख रहा है .... मैंने उसे पूरी खाने को आग्रह किया, संकोच तथा शालीनतावश उसने 'ना' में सिर हिलाया, परन्तु उसकी आँखों में भूख की पीड़ा तैर रही थी ... मेरे बहुत जोर देने पर उसने पूरी खाई .... बम्बई में घर लौटने पर कई दिनों तक वे आँखें मुझे बेचैन करती रहीं..... गुस्सा आया **विनोबा जी** पर .... कि क्या भिक्षाटन में जमीन माँग कर हिन्दुस्तान के लाखों लोगों का पेट भरा जा सकेगा?....

और, मैंने **भूदान** शीर्षक कविता लिखी-

'मुसाफिरों से क्या माँगे, धरती से माँग, गगन से माँग'

यह कविता **'धर्मयुग'** में छपकर पूरे राष्ट्र को उद्वेलित कर गई थी।

नेपाली जी न तो कम्यूनिस्ट थे, न ही सोशलिस्ट। ..... न किसी खेमे के कवि रहे ..... न किसी वाद के प्रवर्त्तक - वे अपने समय का आईना बने एक मानवतावादी एवं करुणा के कवि थे..... समाज में लड़कियों की त्रासदी से जब वे विह्वल हुए, तो शब्दों की लड़ियाँ गूंथ दीं-

''जनम लिया तो जले पिता-माँ, यौवन खिला ननद-भाभी
ब्याह हुआ तो जला मुहल्ला, पुत्र हुआ तो बन्ध्या भी
जले हृदय के अंदर नारी, उस पर बाहर दुनिया सारी
मर जाने पर भी मरघट में, जल-जल उठीं लकड़ियाँ रे
उड़ जाए तो लौट न आए, ज्यों मोती की लड़ियाँ रे।''

और, **१८ अप्रैल, १९६३** को बिहार के भागलपुर शहर में हजारों नम आँखों ने मरघट में ऐसी ही जलती लकड़ियों के बीच अपने प्रांत के सपूत **नेपाली** को पंचतत्व में विलीन होते देखा- उन्हें अंतिम विदाई दी।

"लगेगी ऐसी गहरी नींद
बीना पर सो जाऊँगा मौन"

इन पंक्तियों के साथ नेपाली जी **१७ अप्रैल, १९६३** को भागलपुर स्टेशन के प्लेटफार्म नं० २ पर भी न टूटने वाली नींद सो गए।

गीतों की माला की लड़ियाँ टूटकर बिखर गई थीं।

जीवकोपार्जन के लिए **'हिमालय ने पुकारा'** की प्रतियाँ बेचते, कवि-सम्मेलनों से आय प्राप्त करने की विवशता में की जाती यात्राओं में अंतिम यात्रा की समाप्ति अपने ही प्रान्त में हो गई थी .... इसी बिहार प्रांत में, जहाँ से शुरू हुई थी यह जीवन-यात्रा .....

फिर कुछ भी नहीं किया - फिल्म-जगत् के लोगों ने, मित्रों ने, शुभचिंतकों ने - न तो **मुहम्मद रफी, मुकेश, किशोर कुमार, लक्ष्मीकांत** ऐसी फिल्म-संगीत क्षेत्र की हस्तियों की तरह उनके मरणोपरांत चौक-चौराहों, सड़कों का नामाकरण उनके नाम पर किया गया और न ही गीत-लेखन के क्षेत्र में कोई पुरस्कार उनके नाम पर शुरू किए गए, और न ही अभावग्रस्त नेपाली परिवार के लालन-पालन के लिए फिल्म-कलाकारों, लेखकों, संगीत निर्देशकों के संघ ने कोई आर्थिक सहायता ही उन्हें दी।

बिहार में उस वक्त यहाँ के कुछ साहित्यकारों ने **नेपाली** जी के परिवार की आर्थिक मदद करने के लिए कुछ सक्रियता दिखलाई थी - **श्रीमती वीणा रानी नेपाली** को उम्मीद दिलाई थी .... वे वर्षों तक इनकी ओर आस लगाए निराश होती चली गई थीं ...।

फिर एक सन्नाटा छा गया था ..... लम्बी खामोशी ..... कहीं कोई हलचल नहीं .... समय के हाथों विस्मृत कर दिए गए **नेपाली।**

बेतिया का उनका घर नीलाम हो गया। बिहार सरकार उस घर को नीलामी से बचाकर उसमें उनकी स्मृति में पुस्तकालय खोल सकती थी, नेपाली की स्मृति में कोई बड़ा पुरस्कार कविता-गीत लेखन के लिए शुरू कर सकती थी .... भारत सरकार के रेल मंत्रालय से बेतिया रेलवे स्टेशन का नामाकरण **गोपाल सिंह नेपाली नगर** करवा सकती थी .... पर कुछ नहीं हुआ .... चला गया हिन्दी-साहित्य का **गीतों का राजकुमार गोपाल सिंह नेपाली** ...... सदा के लिए खामोश हो गया हिन्दी-फिल्मों का दुलारा गीतकार **जी० एस० नेपाली** । □

एसोशिएट प्रोफेसर/मेडिसीन विभाग
नालंदा मेडिकल कॉलेज, अगम कुआँ अस्पताल
पटना - ८०० ००७ (बिहार)

बिहार की हिन्दी-पत्रकारिता और नेपाली

• डॉ० सत्येन्द्र कुमार सिंह

हिन्दी-पत्रकारिता का इतिहास देश के राजनीतिक इतिहास से जुड़ा है। **भारतवर्ष में मुद्रण-यंत्र स्थापित करने का श्रेय पुर्तगालियों को है।** सन् १५५० ई० में उन्होंने दो मुद्रण-यंत्र मँगवाकर धार्मिक पुस्तकें छापनी आरंभ कीं। सन् १९०४ ई० में ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा बम्बई में मुद्रण-कार्य आरंभ किया गया। १८ वीं शताब्दी में मद्रास, कलकत्ता, हुगली, बम्बई आदि स्थानों में छापेखाने स्थापित हुए। अंगरेजों और मिशनरियों ने अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए समाचार-पत्र निकालना प्रारंभ किया, तो भारतीय संदर्भ में **इसकी पहल राजा राममोहन राय द्वारा की गयी। सन् १८२१ में उनके सहयोग से ''संवाद-कौमुदी'' नामक साप्ताहिक बंगला-पत्र का प्रकाशन आरंभ हुआ।** इसमें सामाजिक समस्याओं के प्रति लेख रहते थे। **राजा राममोहन राय** ने सती-प्रथा के विरुद्ध लगातार लिखना आरंभ किया, जिससे परंपरावादी हिन्दू-समाज उनके विरुद्ध हो गया और इस पत्र को भी क्षति पहुँची। **द्वारिका नाथ टैगोर, प्रसन्न कुमार टैगोर, राजा राममोहन राय** जैसे प्रगतिशील व्यक्तियों ने १८३० में **'बंगदूत'** पत्र की नींव डाली। **हिन्दी का पहला पत्र ''उदत्त मार्त्तण्ड'' सन् १८२७ में प्रकाशित हुआ।** १९वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन और भी अधिक संख्या में होने लगा। इससे नए विचारों के आदान-प्रदान में सुविधा हुयी। विगलित सामाजिक नैतिक रूढ़ियों के विरोध में पत्रों का अच्छा उपयोग हुआ। इनके माध्यम से अंगरेजी हुकूमत की उन कार्यवाहियों का भी विरोध शुरू हुआ, जो देश-हित के विरुद्ध पड़ती थीं। इससे राष्ट्रीयता के प्रचार-प्रसार में भी पर्याप्त सहयोग मिला।

गोपाल सिंह नेपाली का अवतरण हिन्दी-साहित्य की एक युगान्तरकारी घटना का परिचायक है। आज भी **'नेपाली'** पत्रकार से अधिक गीतकार के रूप में हिन्दी-साहित्य में विख्यात हैं। बहुत कम लोगों के जेहन में यह बात प्रविष्ट हो पाती है कि नेपाली एक कुशल पत्रकार भी थे। यह बात भी सही है कि इनका पत्रकारिता साहित्य में पदार्पण गीतकार के चलते ही हुआ था। उस समय साहित्य-संसार उनके गीतों का दीवाना था। फलतः ये जिस पत्रिका से जुड़े होते, उसकी माँग बाजार में बढ़ जाती। पत्र-मालिक की आय बढ़ जाती।

मसलन कविता के साथ पत्रकारिता भी उनके जीवन का अंग बन गयी। यथा- **पं० दुलारे लाल भार्गव** ने इलाहाबाद में **'नेपाली'** का काव्य पाठ सुना। वे इनसे इतने प्रसन्न, प्रभावित और आह्लादित हुए कि अपनी मासिक पत्रिका **''सुधा''** के संपादकीय विभाग में इन्हें स्थान दे दिया। यह उनकी पत्रकारिता की खूबी ही कही जाएगी कि इन्होंने जिस पत्रिका को पकड़ा उसका नाम चल निकला। यहीं उनकी भेंट **'निराला'** से हुयी, जिनसे अनुजवत् स्नेह प्राप्त कर **'नेपाली'** तो धन्य हुए ही **''सुधा''** पत्रिका भी कविता-क्षेत्र की इन दो हस्तियों को समवेत रूप में प्राप्त कर धन-धान्य से परिपूर्ण हो गयी। **श्री राजेश रंजन वर्मा** ने लिखा है- **''नयी कविता के पूर्व तक कविता मात्र पठनीय ही नहीं, श्रव्य भी थी। इस अविध में कवि-सम्मेलनों के आकर्षण गोपाल त्रय हुआ करते थे- गोपाल सिंह 'नेपाली', गोपाल प्रसाद 'नीरज' और गोपाल प्रसाद व्यास।''**[१] स्पष्ट है, **'नेपाली'** कविता के माध्यम से ही पत्रकारिता में आए।

एक और कारण है कि इनका जन्म गुलाम भारत में हुआ था। आजादी की लड़ाई चल रही थी। उसी अनुपात में अंगरेजों ने दमन-चक्र भी चला रखा था।आजादी के दीवाने सितम सहते थे, पर उसका प्रतिकार करने से भी नहीं चूकते थे। फलतः **आजादी के पूर्व हिन्दी-पत्रकारिता मिशन के रूप में जन्मी और विकसित हुयी थी।** आजादी की लड़ाई में बतौर संग्रामी वैसे लोग ही आते थे, जो पत्रकारिता से आकर्षित होते थे और पत्रकार भी वैसे ही लोग बनाए जाते थे, जो जेल-यातना भुगतने के लिए तैयार रहते थे। **महादेवी वर्मा** ने लिखा है- **"पत्रकारिता एक रचनाशील क्रिया है। इसके बगैर समाज को बदलना असंभव है। अतः पत्रकारों को अपने दायित्वों और कर्त्तव्यों का निर्वाह निष्ठा पूर्वक करना चाहिए क्योंकि उन्हीं के पैरों के छालों से भविष्य का इतिहास लिखा जाएगा।"** इस परिप्रेक्ष्य में भी 'नेपाली' का जीवन एक संग्रामी सैनिक का ही था। आजादी की लड़ाई में बढ़-चढ़ कर उन्होंने हिस्सा लिया था। उससे भी सुखद आश्चर्य तब होता है, जब अन्य पत्रकारों की तरह नेपाली जी ने भी अपनी नैतिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय तथा मानवीय जीवन का सफलता पूर्वक निर्वाह किया है। उन्होंने अभावों में फाके-मस्ती की है। सामान्य कैदियों की भाँति ब्रिटिश जेल की यातनाएँ भुगती हैं, पर लोभ, सुख और सम्मान की वृत्तियों को निरपेक्ष भाव से देखते हुए सामाजिक कुप्रथाओं, धार्मिक कुरीतियों एवं गुलामी के शासन पर प्रहार कर समाज एवं राष्ट्र को सही दिशा-निर्देश दिया है। **यह एक लड़ाकू प्रवृत्ति के व्यक्ति थे और यह प्रवृत्ति उनकी पत्रकारिता में स्पष्टतः परिलक्षित होती है।** यह प्रवृत्ति भी आयात की हुयी नहीं थी, वरन् जन्म-जात थी। इसे हम इनकी वंशागत प्रवृति भी कह सकते हैं। इनके पिता फौजी सैनिक थे। अपने पिता के साथ रहने के चलते इन्होंने पेशावर, लाहौर, कच्छ, कश्मीर, अहमदाबाद, हैदराबाद आदि कई जगहों में आजादी की लड़ाई में जूझते संग्रामी और उन पर दमन करती ब्रिटिश फौजों को अपनी आँखों से देखा है। इनके विषय में ठीक ही लिखा गया है- **"ये एक लड़ाकू सिपाही के बेटे थे, जिसमें अथक युद्धोत्साह, अदम्य साहस एवं संकटों को झेलने का अटूट सामर्थ्य था।** अपने जीवन की विशिष्ट परिस्थितियों के कारण **'नेपाली'** को भारत के सुदूर भागों में भ्रमण का पर्याप्त अवसर मिला। .... इन्हें पत्रकारिता का भी अनुभव था। **'रतलाम टाइम्स'** (मालवा); **'चित्रपट'** (दिल्ली); **'सुधा'** (लखनऊ) और **'योगी'** (साप्ताहिक) पटना के संपादन विभाग में रहे थे।"[२] **श्री सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर** ने भी इनकी पत्रकारिता की प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है कि "अनवरत कविता-रचना के साथ-साथ उन्होंने यदा-कदा **'सुधा'**, **'योगी'** सरीखी लोकप्रिय पत्रिकाओं का संपादन भी किया।"[३]

हम विभिन्न अनुसंधानों के पश्चात् इनके द्वारा संपादित पत्रिकाओं को निम्न रूप में सूचीबद्ध कर सकते हैं:- (१) **प्रभात** (हस्तलिखित, बेतिया १९३२), (२) **दि मुरली** (अंग्रेजी पत्रिका, टंकित की हुई, १९३२), (३) **सुधा** (लखनऊ, १९३२) (४) **चित्रपट** (दिल्ली, सिने पत्रिका, १९३४), (५) **रतलाम टाइम्स** (मालवा, १९३५-३७), (६) **योगी** (साप्ताहिक, पटना, १९३७-३९), (७) बेतिया राज प्रेस में प्रबंधक १९३९-४४।

मासिक पत्रिका **'प्रभात'** से उन्होंने पत्रकारिता की शुरुआत की। यह हस्तलिखित पत्रिका थी। इसके बाद उन्होंने इसी वर्ष **'दि मुरली'** नामक अंग्रेजी पत्रिका की शुरुआत की। यह टंकित

की हुई पत्रिका थी। इस प्रयास से हमें नेपाली जी की पत्रकारिता के कई नए आयामों से अवगत होने का अवसर मिलता है। एक, **हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं पर इनका समान अधिकार था।** दूसरा, **लगनशीलता के चलते उनकी पत्रकारिता ने काफी ख्याति प्राप्त की। तीसरा, हस्तलिखित से क्रमानुसार बढ़ते हुए टंकित पत्रिका का प्रकाशन इनके अदम्य साहस, धैर्य, लगन आदि का ही तो परिचायक है।**

अंग्रेजी साम्राज्यवादी व्यवस्था से लोहा लेने वाले संघर्षों में भी बिहार आगे रहा है। नेपाली जी की यह विशेषता रही है कि इन्होंने पराधीनता को कभी बर्दाश्त नहीं किया। इन्होंने अत्याचार करने वाले साम्राज्यवादियों को जमकर ललकारा है तथा **शोषण और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठायी है।** यह इनका सौभाग्य था कि **गान्धीजी** की चंपारण में नीलहों के अत्याचार का आंदोलन इनकी ही भूमि पर हुआ था। फलत: इन्होंने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से आग उगलने का काम किया। रोलट एक्ट का विरोध कर इन्होंने जनमानस को भड़काने का काम किया है। **ऐसे राष्ट्रीय प्रश्नों पर बिहार का संवेदनशील जनमानस जो जागरुक हो उठा, वह नेपाली की कलम का ही जादू था।** इतना ही नहीं, १९२०-२१ ई० में **गान्धीजी** के असहयोग आंदोलन में जब संपूर्ण राष्ट्र स्कूल-कालेज एवं कोर्ट-कचहरी का बहिष्कार कर रहा था, **नेपाली जी की कलम और उनके बढ़े कदम का ही परिणाम था कि बिहार ने भी संपूर्ण महकमों में पूर्ण हड़ताल की घोषणा कर डाली। डॉ० वेद प्रताप वैदिक** के शब्दों में- **"हिन्दी पत्रकारिता के पराक्रम को अंकित किए बिना न तो भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास लिखा जा सकता है और न हिन्दी-साहित्य का इतिहास।** अपने लगभग पौने दो सौ वर्षों के इतिहास में हिन्दी-पत्रकारिता ने देश को बड़े-से-बड़े राजनेता प्रदान किए हैं और हिन्दी को ऊँचे-से-ऊँचे साहित्यकार। लेकिन उनकी कलम के असर को आँकने के लिए जितना बड़ा शोध आयोजन हो सकता था, अभी तक नहीं हुआ है।"[४]

कथाकार और प्रकाशक **जैन बंधु** के साथ मिलकर **नेपालीजी** ने १९३४ ई० में **'चित्रपट'** साप्ताहिक का संपादन किया। **नेपाली जी** के संपादन में **"रतलाम टाइम्स"** (साप्ताहिक) मालवा से प्रकाशित हुआ। इसका १९३५ से १९३७ तक उन्होंने संपादन किया।

१९३७ ई० में **नेपाली जी "योगी"** (पटना) के संयुक्त संपादक बने। **नेपाली जी** के कारण यह पत्रिका चर्चा का केन्द्र-बिन्दु बन गयी। इसके तीखे तेवर एवं इसकी तल्ख आवाज का ही परिणाम था कि सरकार भी इससे घबराया करती थी और इस पर कड़ी नजर रखती थी। **"योगी"** कार्यालय के पास हर समय पुलिस मंडराया करती थी और सदा संदेह की दृष्टि से भी देखती थी। इतना ही नहीं, पुलिस सर्वदा संदेहास्पद छपनेवाली सामग्रियों की टोह भी लिया करती थी। **नेपाली** जब अपने कामों में व्यस्त रहते थे, घंटों बैठकर छपने वाली रचनाओं के प्रूफ पढ़ते रहते थे, तो पुलिस आकर कागज उलट-पुलटकर देखती थी कि कहीं सरकार विरोधी लेख तो नहीं छप रहे हैं। कभी-कभी नेपाली को रचनाएँ छिपानी भी पड़ती थीं। अनवरत मिलने वाली पुलिसिया धमकी से ये तंग आ चुके थे। पर कभी भी हिम्मत नहीं हारी। १९३९ ई० तक वह यहाँ काम करते रहे।

विवाह के बाद नेपाली बेतिया अपने गाँव लौट आए। **डॉ० श्रीकृष्ण सिंह** और **डॉ० राजेन्द्र प्रसाद** के कहने पर राज प्रेस, बेतिया के व्यवस्थापक का कार्यभार उन्होंने संभाला।

१९४४ ई० तक वह यहीं बने रहे। बेतिया को इन्होंने साहित्यिक गतिविधियों का केन्द्र बनाया। साहित्यिक व्यक्तियों का जमघट यहाँ लगना लगा। बाद में **"कविवासर"** नामक एक साहित्यिक संस्था की भी इन्होंने स्थापना की, जिसकी बैठकें हर सप्ताह हुआ करती थीं। पुलिस का दमन चक्र यहाँ भी उनपर चलता रहा। फिल्मों में आने के पूर्व तक वे यहीं बने रहे।

१९४४ ई० में इनको फिल्मी दुनिया से निमंत्रण आया। धन की कमी तथा परिवार को अभावग्रस्त होते देख वह भारी मन से बम्बई गए। यहाँ उन्होंने-**लगभग ४५ फिल्मों** के लिए **लगभग ३०० गीत लिखे।** लेकिन आजादी के दीवाने **नेपाली** का मन यहाँ नहीं लगा। राष्ट्र की स्वाधीनता से विमुख होना **नेपाली** जैसे कर्मठ व्यक्तित्व के लिए असंभव था। बम्बई की रंगीन दुनिया, नाले में बहता पैसा और जिसे संचय करने की अपार क्षमता के बावजूद इनका मन वहाँ नहीं लगा। रह-रहकर उनके हृदय में आजादी की उठती लहरें हिलोरें लेने लगती थीं। अपने परम मित्र **विमल राजस्थानी** (बेतिया के श्रेष्ठ कवि) को लिखे पत्र में बम्बईया जीवन के बारे में उन्होंने लिखा- "इस देश में कवि के रूप में मेरी जो ख्याति है, वह तुमसे छिपी नहीं है। पर यह **सिनेमा वर्ल्ड-साहित्य, कला या दर्शन की जगह नहीं है।** यहाँ रुपया और रमणियाँ हैं, इस कारण बड़े-बड़े लोग और चंट यहाँ छावनी डाले बैठे हैं। यहाँ सब कुछ है। दौलत और दिमागी दिवाला, पाप और पुण्य, प्रकाश और छाया। सौन्दर्य के इस आंगन में सब कुछ है, पर शस्यश्यामला चंपारण की भूमि जैसा आनंद कहाँ ?"[५]

सामासतः हम कह सकते हैं कि **'नेपाली' यों तो मुख्यतः गीतकार थे, परन्तु पत्रकारिता की दृष्टि से भी उनका महत्त्व कम नहीं था।** विभिन्न पत्रों के संपादन द्वारा उन्होंने रोजी-रोटी जरूर अर्जित-उपार्जित की, लेकिन एक पत्रकार तभी सच्चा और यशस्वी पत्रकर बन पाता है, जब वह साहित्य-सर्जन भी करे। उन्होंने साहित्य की दृष्टि से पत्रकारिता को गंभीरता से लेकर साहित्य का भंडार भरने में विपरीत परिस्थितियों में भी आगे बढ़ने का हौसला बनाए रखा। कविवर **गोपाल सिंह नेपाली** इस दृष्टि से **एक सफल, निर्भीक और ईमानदार पत्रकार थे।** हिन्दी-साहित्य-जगत् में **नेपालीजी** को अपेक्षित स्थान नहीं मिल सका- जबकि काव्य की सरसता ही नहीं, **प्रखर पत्रकारिता में भी वे बहुत उल्लेख्य रहे।** □

बी. डी. इवनिंग कॉलेज
पटना - ८०० ००१

संदर्भ :

१. गोपाल सिंह नेपाली : जीवन और साहित्य, (संपादक: डॉ० बलराम) पुस्तक में संकलित राजेश रंजन वर्मा द्वारा लिखित 'कविवर नेपाली की कविता-यात्रा' शीर्षक निबंध से उद्धृत, पृ० ४१।
२. हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग-२, नामवाची शब्दावली।
३. श्री सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर, बिहार के दिवंगत हिन्दी-साहित्यकार, पृ०-३७।
४. डॉ० वेद प्रताप वैदिक, बिहार की हिन्दी पत्रकारिता, भूमिका भाग-१।
५. गोपाल सिंह नेपाली : जीवन और साहित्य, (संपादक: डॉ० बलराम) पुस्तक में संकलित विमल राजस्थानी के संस्मरण से उद्धृत, पृष्ठ - १३३।

संस्मरण के आइने में : नेपाली

• कृष्णानन्द कृष्ण

'संस्मरण' हिन्दी-साहित्य की गद्य विधाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। संस्मरण में कोई भी लेखक अपनी स्मृति के आधार पर अपने जीवन के बीते हुए आत्मीय क्षणों को गहरी अनुभूति और संवेदना के साथ लिपिबद्ध करता है। संस्मरण में लेखक अपने निजी जीवन की घटनाओं, किसी ख्यातिलब्ध व्यक्ति के जीवन, उससे हुयी मुलाकात, किसी स्थान विशेष का अपने व्यक्तिगत जीवन के साथ जुड़ाव का स्मरण करते हुए उनका वर्णन करता है। यानी संस्मरण में लेखक अपने निजी जीवन के अतीत को स्मृतियों में जीते हुए जीवन्तता के साथ उसे प्रस्तुत करता है। अतीत की स्मृति होने के बावजूद **'संस्मरण' इतिहास नहीं होता,** जहाँ सिर्फ तथ्यात्मक विवरण भरे रहते हैं, बल्कि संस्मरण इतिहास की स्मृति के साथ-साथ अनुभव, अनुभूति और संवेदना से जुड़ा होता है, जो इसे इतिहास से अलग करता है। पाश्चात्य साहित्य में संस्मरण के लिए दो शब्दों **'मेम्वायर्स'** एवं **'रेमिनिसेंसेज'** का प्रयोग किया जाता है। हालाँकि दोनों के अर्थ में बहुत सूक्ष्म अन्तर है। **'मेम्वायर्स'** में जहाँ घटनाओं एवं ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित यथार्थपरक विवरण होता है, वहीं **'रेमिनिसेंसेज'** में लेखक का व्यक्तिगत जीवन, उसकी अनुभूतियों और उसके व्यक्तित्व को प्रधानता दी जाती है। हिन्दी में इसके लिए सिर्फ एक शब्द **संस्मरण** का प्रयोग किया जाता है।

संस्मरण अतीत का स्मृति चित्र होता है। जब कोई लेखक अपने जीवन को केन्द्र में रखकर संस्मरण लिखता है तो हम उसे **'आत्मसंस्मरण'** कहते हैं। और जिस रचना में किसी अन्य व्यक्ति के जीवन और उसके बिताए गए क्षणों का वर्णन आत्मीयता के साथ किया जाता है, तब उसे संस्मरण कहते हैं। संस्मरण को कहीं-कहीं **'स्मृति-चित्र'** भी कहते हैं। संस्मरण को व्याख्यायित करते हुए 'साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार' में लेखक ने लिखा है- 'संस्मरण गद्य की वह जीवनीपरक कथेतर गद्य विधा है, जिसमें कोई लेखक किसी विशिष्ट व्यक्ति के जीवन से जुड़ी मार्मिक आत्मीय स्मृतियों को रोचक और तथ्यपरक ढंग से वर्णित करता है। इस वर्णन में लेखक की अंतरंगता की झलक भी दिखाई देती है। आत्मसंस्मरण अपने जीवन की स्मृतियों से जुड़े होते हैं।'' (पृ०- २३९) हिन्दी-साहित्य-कोश में संस्मरण को आत्मचरित के अंतर्गत परिभाषित करते हुए उसे थोड़ा भिन्न बताया गया है। 'आत्मचरित के लेखक का मुख्य उद्देश्य अपनी जीवन-कथा का वर्णन करना रहता है। उसमें कथा का प्रमुख पात्र स्वयं लेखक होता है और अन्य इतिहास की घटनाओं और परिस्थितियों का केवल वही रूप उसमें आता है, जो उसके जीवन-क्रम को प्रभावित, संचालित या नियंत्रित करता है अथवा जो उससे प्रभावित होता है। उसके विपरीत संस्मरण का दृष्टिकोण अलग है। इसमें लेखक अपने समय के इतिहास को लिखना चाहता है। परन्तु इतिहासकार के वस्तुपरक रूप से बिल्कुल अलग है। संस्मरण लेखक जो स्वयं देखता है, जिसका वह स्वयं अनुभव करता है, उसी का वर्णन करता है। उसके वर्णन में उसकी अपनी अनुभूतियाँ, संवेदनाएँ भी रहती हैं।'' (पृष्ठ - ७६०)

संस्मरण-लेखन में जिन रचना-तत्त्वों या उपकरणों की जरूरत होती है उनमें प्रमुख हैं- **'अतीत की स्मृति', 'व्यक्ति-चरित्र', 'आत्मीय अंतरंगता'** और **'तथ्यात्मक यथार्थ'**। संस्मरण लेखन की पहली शर्त्त है– **अतीत का स्मरण** बिना अतीत की स्मृति के संस्मरण लिखना असंभव-सा लगता है। क्योंकि इसमें लेखक अपने जीवन की स्मृतियों को शब्दबद्ध करता है। **'व्यक्ति चरित्र'** संस्मरण के लिए महत्त्वपूर्ण तत्व है। क्योंकि संस्मरण में लेखक अपने जीवन में आए विशिष्ट व्यक्ति के चरित्रों का अंकन करता है। उसके साथ **'आत्मीय अंतरंगता'** का भी संस्मरण लेखन में बहुत महत्त्व है। क्योंकि लेखक उन घटनाओं, उन व्यक्ति चरित्रों के साथ जब तक आत्मीय अंतरंगता के साथ बांधता नहीं, तबतक संस्मरण में वह कशिश पैदा नहीं हो पाती, जो पाठक के मानस-पटल पर अपना स्थायी प्रभाव छोड़ सके। **'तथ्यात्मक यथार्थ'** भी संस्मरण के लिए आवश्यक तत्त्व है, क्योंकि संस्मरण अतीत में घटी घटनाओं के आधार पर ही लिखा जाता है। इस तरह हम देखते हैं कि **संस्मरण में अतीत स्मृति के सहारे व्यक्ति-चरित्र को आत्मीय अंतरंगता के साथ यथार्थवादी तथ्यों के साथ प्रस्तुत किया जाता है।** इन तथ्यों के अभाव में संस्मरण का अपेक्षित प्रभाव पाठकों के हृदय पर नहीं पड़ता।

हिन्दी-गद्य-साहित्य में संस्मरण-लेखन का कार्य प्रारंभ काल से ही होता आया है। शुरू के दिनों में यह प्रयास छिट-पुट रूप से होता था। प्रारंभिक युग के लेखकों में **पद्म सिंह शर्मा** और **बनारसी प्रसाद चतुर्वेदी** का नाम अग्रगण्य है। आधुनिक युग में इस विधा को **महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, भदन्त आनन्द कौशल्यायन, शान्तिप्रिय द्विवेदी, देवेन्द्र सत्यार्थी, कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'** आदि ने समृद्ध किया। समकालीन लेखन में इस विधा का प्रचार-प्रसार बड़ी तेजी के साथ हुआ है और संस्मरण विधा का उत्तरोत्तर विकास हो रहा है। यहाँ हिन्दी के बहुमुखी प्रतिभा संपन्न कवि कथाकार **गोपाल सिंह 'नेपाली'** द्वारा लिखे गये संस्मरण की पड़ताल करना ही उद्देश्य है। वैसे **'नेपाली'** को **'गीतों के राजकुमार' 'गीतों का वन मैन आर्मी'**, जैसे अलंकरणों से विभूषित किया गया, किन्तु उन्होंने गद्य विधा में भी अपनी लेखनी चलायी। उन्होंने **गीत-कविता** के अलावा **कहानी, शिकार-कथा, स्वतंत्र चिन्तन** और **संस्मरण** भी लिखे हैं। इन रचनाओं के पढ़ने पर उनके गद्य-लेखन की प्रतिभा की झलक मिलती है।

'नेपाली' जी ने जो गद्य रचनाएँ लिखी हैं, उनमें संस्मरण के नाम पर **'आगरे में दो दिन'** और एक शिकार संबंधी संस्मरण उपलब्ध हो पाते हैं। **'आगरे में दो दिन'** ही उनका एक मात्र निच्छक्का संस्मरण है।

इस संस्मरण के शीर्षक पर विचार करने पर एकबारगी चित्र उभरता है कि इसमें लेखक द्वारा आगरा में बिताए गए दो दिनों का विवरण होगा, किन्तु ऐसी बात है नहीं। यह संस्मरण मात्र आगरा जाने और आने का इतिवृत्तात्मक कथन भर नहीं है। इसमें व्यक्ति हैं, घटनाएँ हैं, संवेदना है, अनुभूति है। **गोपाल सिंह 'नेपाली'** हिन्दी के ऐसे गीतकार, जिनको सुनने के लिए लोग रात भर बैठे रहते थे। इसलिए कवि-सम्मेलन के दौरान आगरा में बिताए गए दो-दिनों का स्मरण है। इस संस्मरण को हम किसी एक विशिष्ट श्रेणी; जैसे यात्रा-संस्मरण के भीतर नहीं रख सकते। कारण इस संस्मरण में यात्रा भी है, कवि-सम्मेलन भी है, व्यक्ति, चरित्र भी है। कहने का अर्थ यह संस्मरण अपनी संपूर्णता में **'संस्मरण'** की कसौटी पर खरा उतरता है। क्योंकि इसमें व्यक्ति

चरित्र भी है, घटनाएँ भी है, आत्मीयता, श्रद्धा और संवेदना भी है। इन घटनाओं की प्रस्तुति इस ढंग से सहज-सरल प्रवाहमयी भाषा में की गई है, कि पाठक को पूर्णत; आकर्षित करती है।

संस्मरण विधा के रचना-तत्त्वों का भरपूर उपयोग इस छोटे-से संस्मरण में किया गया है। चाहे वह **स्मृति तत्व** हो या **व्यक्ति चरित्रांकन। 'युवक'** के संचालक का परिचय जो थोड़े समय में किया है, वह देखने लायक है- 'लेखक' संचालक **श्री प्रेमदत्त पालीवाल** से परिचित हुआ- **आचार्य नरेन्द्र देव** जैसा व्यक्तित्व और भाषण देने की शैली **जय प्रकाश नारायण** जैसी। **प्रेमदत्त जी** मुझे सद्भावना के भावार्थ-से लगे।' इन पंक्तियों में नेपाली जी ने **प्रेमदत्त जी** के चरित्र को इतने कम शब्दों में महिमा मंडित किया है, इसमें उनके कुशल गद्य-लेखन की झलक मिलती है। संस्मरण में कई ऐसे प्रसंग आये हैं, जहाँ आत्मीयता, अंतरंगता, श्रद्धा और संवेदना एक साथ उभरी है। 'यहाँ मुझे विदा करने वालों की भीड़ में **डॉ० सत्येन्द्र** के दर्शनों से तो अपने राम तो उछल पड़े। क्योंकि डॉ० साहब से यह मिलन हुआ एकाध युगों के बाद। वहाँ से मुस्कान आवरण में आँसू छिपाए हुए झाँसी पहुँचा।'' इन पंक्तियों के द्वारा लेखक की **डॉ० सत्येन्द्र** के साथ अंतरंगता-आत्मीयता उजागर हुई है। साथ ही विदाई के मार्मिक क्षणों की सफल अभिव्यक्ति पूरी संवेदना के साथ प्रकट हुई है। इसका मतलब यह नहीं कि इसमें तथ्यात्मकता का अभाव है। इसमें तथ्य भी काफी है। किसी भी रचना में भाषा का बहुत महत्त्व होता है। सारे तत्त्वों की मौजूदगी के बाद भी अगर भाषा कमजोर होगी, तो रचना अपने को पाठकों तक संप्रेषित नहीं कर पाती और रचना का उद्देश्य कमजोर हो जाता है। इस संस्मरण की भाषा पहाड़ी नदी की तरह कल-कल छल-छल करती प्रवाहित होती है। 'लोग खिलखिला उठे, रोशनी जगमगा उठी और नये-पुराने चेहरों पर मुस्कुराहट फैल गई।'

नेपाली जी के इस संस्मरण के अध्ययन से एक बात स्पष्ट रूप से उभरकर आती है कि नेपाली जी के गद्य की भाषा भी उनकी कविता की तरह लयबद्ध आकर्षक, प्रभावी और 'खनहन' है। जिसमें पाठकों को बाँध रखने की अपार क्षमता है। वे जितने सफल कवि थे अगर गद्य लिखते तो, वे उतने ही सफल गद्यकार भी होते । ☐

संपादक- पुनः
पथ सं० आठ- बी, दक्षिणी अशोक नगर
कंकड़बाग, पटना - ८०० ०२०

नेपाली की कहानियाँ और जीवन-यथार्थ

● विमला सचदेव

कथा-साहित्य की प्रमुख विधाओं में उपन्यास, कहानी, लघुकथा, कथा-काव्य आदि हैं। इन सभी विधाओं की तरह ही कहानी भी कई प्रकार की होती है। कथाकार प्रायः सामाजिक कहानियाँ लिखते हैं। किन्तु ऐतिहासिक कहानी, मनोवैज्ञानिक कहानी, मनोविश्लेषणात्मक कहानी, शिकार कहानी, रोमांसिक कहानी, जासूसी कहानी आदि प्रकार की भी पर्याप्त कहानियाँ कथाकारों द्वारा समय-समय पर लिखी जाती रही हैं।

गोपाल सिंह नेपाली भले ही कथाकार के रूप में न जाने-पहचाने जाते हों, किन्तु उन्होंने भी कहानियाँ लिखी हैं। वह मूलतः कवि थे- यह सर्वविदित है। उनकी कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम काव्य ही था और इस क्षेत्र में उन्होंने आकाश का स्पर्श किया था। किन्तु उन्होंने संस्मरण, स्वतंत्र चिन्तन और कहानियाँ भी लिखीं। उनकी उपलब्ध कहानियों में **'नारायणी नदी के मगर'** और **'छप्पन छुरी'** अधिक चर्चित रही हैं।

'नारायणी नदी के मगर' एक शिकार-कहानी है। शिकार-कहानी के क्षेत्र में **श्रीराम शर्मा** अग्रगण्य कथाकार हैं। इस प्रकार की कहानियों की लम्बी परम्परा तो है, किन्तु संख्यात्मक दृष्टि से इनकी उपलब्धता अपेक्षाकृत बहुत ही कम है। इस प्रकार की कहानियों का उद्देश्य जीवन में साहस को जुटाना होता है। इनमें 'साहस' की ही महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। कला की दृष्टि से इस प्रकार की कहानियाँ लिखना कोई असंगत नहीं है, इनमें भी अद्‌भुत शिकार करने एवं आदर्शोन्मुख कृत्यों की स्थापना होती है। अनेक जीवनागत कठिनाइयों, अवरोधों पर आशापूर्ण विजय पाने की प्रेरणा मिलती है। **'नारायणी नदी के मगर'** भी इसी प्रेरणा के वशीभूत होकर लिखी गयी कहानी है।

प्रो० क्रांतिदर्शी 'अंगार' (हिन्दी मासिक) के अक्टूबर, १९७६ अंक में 'हिन्दी कथा-साहित्य के विकास में नेपाली का योगदान' में लिखते हैं- ''नेपाली मूलतः कवि थे, किन्तु फिल्मी दुनिया में रहते हुए जब वह अपनी संस्था के बैनर से फिल्मों का निर्माण कर रहे थे, तो उन्होंने अनेक कहानियाँ लिखीं- मगर चूँकि वे फिल्म की सफलता को केन्द्र में रखकर लिखी गयी थीं, अतः नेपाली ने उन्हें प्रकाशित नहीं करवाया। किन्तु **'नारायणी नदी के मगर'** और **'छप्पन छुरी'** उन्हें बहुत प्रिय थीं, अतः इनका प्रकाशन कई पत्र-पत्रिकाओं में हुआ। **'नारायणी नदी के मगर'** को वह फिल्म-निर्माण के योग्य नहीं समझते थे, अतः **'छप्पन छुरी'** पर वह फिल्म बनाना चाहते थे कि उन्होंने फिल्मी दुनिया को अलविदा कह दिया और उनकी इच्छा अधूरी रह गयी।''

'नारायणी नदी के मगर' शिकार-कहानी है, तो **'छप्पन छुरी'** रोमांसिक कहानी है। इस प्रकार की कहानियों में आदर्श, उदात्त और रोमांस की स्थापना होती है। इस कहानी में नायक प्रेम को समझ पाने में असमर्थ है वह मात्र 'दिल' दे देने को ही प्रेम समझता है। नायिका रूपारानी को इसका एहसास तक स्पर्श नहीं कर पाया है। वह युग को समझती है। वह कोरी

भावनाओं में नहीं, यथार्थ के धरातल पर जीती है। वह जानती है इस युग में अर्थ के बिना जीवन की गाड़ी नहीं चल सकती। अतः वह अर्थ को अधिक महत्त्व देती है। नायक जब उसकी फरमाइश पूरी नहीं कर पाता, तो वह नायक को छोड़कर चली जाती है। यह कहानी प्रेम-कहानी होने का भ्रम तो उत्पन्न करती है, मगर वस्तुतः यह प्रेम-कहानी नहीं है। प्रेम-कहानी एवं रोमांसिक कहानी में थोड़ा अन्तर होता है।

प्रेम में सफलता या असफलता उतना महत्त्व नहीं रखती, मगर नायक-नायिका के हृदयों में एक दूसरे के प्रति बिना किसी भौतिक स्वार्थ के सामाजिकभाव होता है। किन्तु जहाँ एक पक्ष कोरी भावनाओं में बह रहा हो और दूसरे को इसका एहसास तक न हो- और वह भौतिक जीवन को भौतिक सुख-आराम के साथ जीना चाहता हो, उसे प्रेम नहीं, रोमांस ही कहा जाएगा। इस प्रकार 'क्रास' के शब्दों में **"जीवन के सहज, दुर्लभ, असम्भव, अद्भुत रोमांसों की पीठिका पर, मानव-कार्यों एवं कृत्यों में निहित उदात्त-अनुदात्त भावों में सर्वथा आदर्श की स्थापना करने वाले गद्य कथा-साहित्य को रोमांस कहते हैं।"**

'छप्पन छुरी' में नायक मनोरंजन जी कवि हैं और नायिका रूपारानी भी काव्य-सृजन करती है। मनोरंजन जी उसे एक काव्य-गोष्ठी में आमंत्रित करते हैं। वहाँ कवियों के आपसी बहस-मुबाहसे से ऊबते हुए वह सोचती है-"कहाँ चली आयी? यहाँ तो नशा-पार्टी जमी हुयी है। अतः, वह अपनी माँ के बीमार होने का बहाना बनाकर चली जाती है। जाने से पूर्व वह अपनी दो कविताएँ सुना जाती है।

मनोरंजन जी उसे विदा करने दरवाजे तक आते हैं और दूसरे दिन अपने जन्म-दिन का आमंत्रण देकर शाम को आने हेतु आग्रह करते हैं। वह आती भी है। वह अपना सारा ध्यान उसी पर केन्द्रित रखते हैं। उसी प्रकार मनोरंजन रूपा को प्रभावित करने का प्रत्येक क्षण प्रयास करते हैं और उसी में रूपा पूछती है- "नारी-सौन्दर्य को आप क्या समझते हैं ? पाप या पुण्य ?"

"नारी-सौन्दर्य पाप-पुण्य नहीं, मातृत्व का आलोकित, पुष्पित परिवेश है।"

"और प्रेम ?"

"उसी पर तो सारी सृष्टि टिकी हुयी है।"

"रोमांस ?"

"जो चीज मैं जानता ही नही, उस पर राय क्या दूँ ?"

इसके पश्चात् रूपा उनकी आर्थिक स्थिति का जायजा लेने हेतु दिल्ली का कनॉट प्लेस घूमने का कार्यक्रम बना लेती है। बाजार घूमते-घामते रूपा को एक 'रोमन घड़ी' पसंद आ जाती है। रूपा उस घड़ी की बेहद प्रशंसा करती है। मनोरंजन दो-सौ रुपए में वह घड़ी खरीदकर उसे पहना देते हैं। इसके पश्चात् वह अन्य कई वस्तुओं की प्रशंसा करती जाती है, मगर मनोरंजन जी चुपचाप सुनते रहते हैं और टुकुर-टुकुर ताकते रहते हैं। रूपा भाँप जाती है कि पहले कदम पर ही जेब खाली हो चुकी है। अतः रूपा तुरन्त अपने घर की ओर चल देती है।

आकर वह सोचती है- "यह कवि, लेखक-पत्रकार मेरे लिए बिल्कुल बेकार है। जेब खाली, दिल खाली, दिमाग खाली। .... बनता है मजनूँ, पर पहले ही कदम पर लड़खड़ा जाता

है। शरीर स्वस्थ है, पर पौरुष नहीं है। अविवाहित है, रोमांटिक नहीं। आदमी है, आधुनिक नहीं। आधुनिक दुल्हन के लिए वह आधुनिक दुल्हा नहीं हो सकता। एक नयी नवेली के लिए परम्परा की पुरानी खूँटी जरूर हो सकता है।''

मनोरंजन अगली सुबह उसके घर पहुँचते हैं तो वह कहती है- ''देखिए! आप यहाँ न आया कीजिए। मेरे पिता जी के सिरहाने चौबीसो घंटे भरी बन्दूक रहती है। कहीं एकाध गोली छूट गयी तो मैं जिम्मेदार नहीं।'' इतना कहकर वह अपना दरवाजा बंद कर लेती है। मनोरंजन अपने गम को कम करने हेतु उसके घर के बगल की पान की दूकान पर खड़े हो जाते हैं। कत्था-चूना लौंग-सुपारी खाकर अपमान की कड़ुआहट मिटा ही रहे होते हैं कि उनकी दृष्टि रूपारानी पर पड़ती है, जो झूमती हुयी साइकिल पर कहीं बाहर जा रही थी।

इस कहानी में नायिका का चरित्र एवं दृष्टिकोण बहुत ही साफ है। वह पूर्णत: व्यवहारिक है। वह नारी है और अपना भविष्य प्रत्येक दृष्टिकोण से सुरक्षित कर लेना चाहती है। अर्थ का अभाव ही अधिकतर कष्टों एवं समस्याओं के मूल में होता है। अभाव दाम्पत्य जीवन में घुन लगा देता है और गृहस्थी चरमरा जाती है। **छप्पन छुरी** का उद्देश्य बहुत ही साफ एवं प्रेरणादायक है। मनोरंजन का चरित्र दबा-दबा-सा है। इसे और उभारने की गुंजाइश थी..... उसे और उभारा जा सकता था। जैसा चरित्र उनका है, उसके अनुसार कोई भी लड़की उनमें अपना भविष्य सुरक्षित नहीं देख सकती। उनके चरित्र में वस्तुत: प्रेम कहीं नहीं उभरता...... प्रत्यक्ष नहीं तो परोक्ष रूप से उनके मन में वासना के साँप ही कुलबुलाते प्रतीत होते हैं। यदि उनके हृदय में रूपा के प्रति सच्चा प्रेम होता, तो रूपा पर उसका प्रभाव निश्चित रूप से होता। तब वह भी उनसे प्रेम करती और प्रेम में समर्पण के अतिरिक्त अन्य किसी भौतिकता आवश्यकता नहीं होती। अत:, यह एक पूर्णरूपेण प्रेम-कहानी नहीं रोमांसिक कहानी है, जो आज से कई दशकों पूर्व लिखे जाने के बावजूद आज भी प्रासंगिक है। आज भी अर्थ का युग है। आज भी लड़कियाँ अपने सुरक्षित भविष्य हेतु हृदय से अधिक अर्थ पर विचार करती हैं। वर्तमान में एकाध प्रतिशत के अपवाद को छोड़ दें, तो शेष शत्-प्रतिशत् लोग इस अर्थ के युग से पूर्णत: प्रभावित हैं। यह कहानी कहीं-न-कहीं आर्थिक स्वतंत्रता की ओर भी संकेत करती है। कहानी की भाषा-शैली अपने काल के अनुसार अच्छी है। संवाद आदि सभी कुछ पात्रों के चरित्रानुकूल ही हैं। अपने समय को रेखांकित करने योग्य कहानियों में इसका समावेश भले ही न हो सके, किन्तु उस समय की एक अच्छी कहानी के रूप में इसकी चर्चा अपेक्षित है।

नेपाली जी की दूसरी कहानी, जो 'शिकार-कहानी' है। यह कहानी अपनी तमाम शर्त्तों को पूरा करती है। जैसा कि शीर्षक से ही यह ध्वनित हो जाता है- यह कहानी नारायणी नदी, जो बेतिया और गोपालगंज के मध्य कहीं है। गोपालगंज से यह मात्र ७८ मील की दूरी पर है। नारायणी नदी में मगरमच्छ बहुत अधिक संख्या में हैं। इस नदी के किनारे 'मुसहर' जाति के लोग अधिक रहते हैं। इस जाति के लोग विपन्न किन्तु परिश्रमी, साहसी और बहादुर होते हैं। ये लोग तैरने, मछली और 'मगर' आदि को पकड़ने में बड़े ही निपुण होते हैं।

लेखक कवि-सम्मेलन से लौटते हुए मुसहर जाति के लोगों को 'मगर' का शिकार करते हुए देखता है। शिकार-कथा का नायक भोला जान की बाजी लगाकर 'मगर' के पास बहुत ही

चालाकी से पहुँच जाता है और एक डुबकी लगाकर ठीक मगर के नीचे जाकर उसको गुदगुदी करता है और गुदगुदी करते-करते मगर की पूँछ की तरफ से साथ ले जाया गया रस्सा फँसा देता है। फिर वह कुछ दूर जाकर पानी से बाहर अपना सिर निकालकर अपने साथियों को संकेत देता है कि अब खींच लो। कई लोग मिलकर 'मगर' को बाहर खींच लेते हैं और बाहर लाते ही उसपर लाठियों से ताबड़तोड़ प्रहार करते जाते हैं। उसे मार-मार कर अस्पताली झाड़ू बना देते हैं। इस प्रकार 'मगर' का शिकार हो जाता है।

लेखक सोचता है-"जीवन एक शाश्वत संग्राम है। कभी मगर सबको निगल जाता है आराम से। और कभी-कभी मनुष्य उसे बाँधकर पानी के बहार निकालता है और उसे चूहे की तरह मार डालता है।"

इस प्रकार यह कथा, यह संदेश देती है कि साहस की सम्पत्ति जिसके पास हो, वह अपना लक्ष्य प्राप्त कर ही लेता है। लेखक ने इस शिकार-कथा के बहाने 'मगर' की ऐतिहासिक जानकारी भी दे दी है- हालाँकि वह इस कहानी में क्षेपक-सा लगती है- और वह कथात्मक न होकर लेखात्मक है। अच्छा यही है कि वह सब आरंभ में ही है। बाद में तो पूरी तरह शिकार-कथा अपने फॉर्म में ही है। इसका शिल्प संस्मरणात्मक है। यही कारण है लेखक इसका नायक न होकर, सूत्रधार के रूप में प्रस्तुत हुआ है। इसमें रोचकता एवं रंजनात्मकता कूट-कूट कर भरी हुयी है। जैसे-जैसे कथा आगे बढ़ती जाती है, पाठकों के मन में जिज्ञासा एवं रोमांच बढ़ता जाता है। यही इस कहानी की सफलता है। इस कथानक को लेकर यदि मगरों पर या मुसहर जाति पर डक्यूमेंट्री फिल्म बनायी जाए तो इन दोनों के विषय में अच्छी जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

'छप्पन छुरी' एवं **'नारायणी नदी के मगर'** दोनों दो प्रकार की कहानियाँ ही नहीं, दोनों के शिल्प अपने-अपने प्रकार एवं कथानकों के अनुकूल हैं। दोनों की प्रस्तुति एवं भाषा भी अपने-अपने विषय के अनुसार ही है। इस बात से यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि यदि **नेपाली-निराला** एवं **जयशंकर प्रसाद** की तरह से ही कवि होते हुए ही कथा-साहित्य में भी पूरी तन्मयता से सक्रिय होते, तो कथा-साहित्य को भी समृद्ध कर सकते थे। कारण उनमें कहानी कहने एवं प्रस्तुत करने की कला के पूर्ण तत्व मौजूद थे। सब से बड़ी बात- ये दोनों कहानियाँ जीवन-यथार्थ की सच्ची कहानियाँ लगती हैं।

'छप्पन छुरी' एवं **'नारायणी नदी के मगर'** कथा-समीक्षकों से विस्तृत चर्चा की अपेक्षा रखती हैं। □

हिन्दी-विभाग
भाईजोगा सिंह पब्लिक स्कूल
देवपुरी, मेरठ - २५० ००२
(उत्तर प्रदेश)

नेपाली के गीतों में प्रेम का स्वरूप

• डॉ० इन्दु सिन्हा

प्रेम-सौन्दर्य एवं चेतना के गायक **कविवर नेपाली** छायावदोत्तर काल के सक्षम गीतकार हैं। कल्पना के कोमल पंखों पर उड़ने वाले इस कवि के चरण धरती की मिट्टी पर टिके हुए हैं। अत: इनकी प्रेम-भावना भी यथार्थ की भूमि के स्पर्श से जीवन्त हो उठी है। इनके गीत इनकी लोकप्रियता के दस्तावेज हैं। जन-साधारण की भाषा में लिखे गए इनके गीत सामान्य जनता को भाव-विभोर करने में सक्षम हैं। **अभिधा के कवि नेपाली की रचनाओं में एक सहज कोमल धारा है, परिपार्श्विक प्रभाव मचता है, समाज-सापेक्षता है, बुद्धि की दीप्ति के साथ-साथ एक गम्भीर आवेग है। बच्चन, भगवती चरण वर्मा** आदि की पंक्ति में पांक्तेय कवि **नेपाली** में छायावाद की उद्याम वैयक्तिकता, भावुकता और कल्पनाशीलता है, तो ऐसी विलक्षण प्रेम संवेदना है, जो नैसर्गिक सौन्दर्य से उद्‌भूत है। कवि समाज एवं देश से भी प्रेम रखता है। प्रेम की यह भूमि उसे निसर्ग से प्राप्त है। अत: वह कल्पना के राजदन्ती मीनार में निवास करके धरती की कोमल घास की हरियाली से अपनी मनोभूमि का सामंजस्य स्थापित करता है। **कवि की सहज भावुकता रोमानी होकर भी देश की मिट्टी से जुड़ी हुई है।** अत: केवल रोमानी प्रवृत्ति के मुंत्रल्क में वह आवद्ध नहीं थी, अपितु सृजनशीलता की ऊँचाइयों तक जाकर समय की पहचान कराती है, युग-चेतना को प्रतिध्वनित करती है। कवि का रोमन क्षणिक लालसाओं का रैन बसेरा नहीं, बल्कि एक स्वस्थ चेतना की अनुगूँज है। कवि के गीतों में पलाश के फूलों की टहटहाती रंगीनी है, इन्द्रधनुषी आभा है, जो इसे जन साधारण के निकट ला देती है।

कवि अपनी परम्परा का कवि होकर भी विलक्षण रहा है, विशिष्ट रहा है। वह बहुवस्तुस्पर्शी रहा है। **लेकिन प्रेम इनके गीतों का प्राणबिन्दु है- प्रकृति-प्रेम, लोक-प्रेम, देश-प्रेम, मानव-प्रेम तथा व्यक्तिनिष्ठ नारी-प्रेम- सभी इनके गीतों के विषय रहे हैं।** इनकी प्रेमानुभूति बहुमुखी प्रणय की विविधता में फूटी है तथा प्रकृति के प्रतीकों से तादात्म्य स्थापित करती है। इस दृष्टि से हम इन्हें **हिन्दी का वर्ड्सवर्थ** कह सकते हैं। **कवि पन्त** के समान प्रकृति का रसमुग्ध चित्रकार नहीं है। बल्कि उसकी कोमलता, उसकी मनोहारिता का स्वच्छन्द गायक है। उसके गीतों में प्रकृति की मर्म-छवियाँ वैशिष्ट्य के साथ उद्‌घाटित हुई हैं। यह सही है कि **कवि नेपाली की रचनाओं की मूल धारा प्रेम एवं यौवन है।** प्रेमानुभूति की व्यापकता साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में दिखाई देती है। **प्रेम एक शाश्वत एवं सहज प्रवृत्ति है। प्रेम को मानोवैज्ञानिक आधार प्राप्त है। यह मानव संस्कृति का सारांश है तथा सर्वोत्तम भावना है। प्रेम शब्द की व्युत्पति ''प्रिय'' से हुई है।** वाचस्पत्य कोश में कहा गया है- प्रिय स्व भाव: इमनिच प्रत्पय आदेश: प्रियस्य भाव: प्रेम। **शेली** के अनुसार प्रेम सूर्य की रश्मियों की तरह विश्व के कण-कण में व्याप्त है।

Love like the atmosphere of sun's fire
Filling the living world bursts from Jhee
And Illumined the heaven and earth.

कवि नेपाली के गीतों का प्रधान स्वर है प्रेम। कवि ने प्रेम को जीवनादर्श माना है-

मैं प्रेमी हूँ गुण गाता हूँ
प्रेम विरह को अपनाता हूँ।

नेपाली का प्रेम जीवनानुभव पर आधृत है। कवि प्रेम के संसार में आँखें खोलता है:-

हूँ कृतार्थ मैं, जग में मैंने
मधुर प्रेम रस पान किया है
इसी प्रेम में आँख खोलकर
जीवन का अनुमान किया है।

यह प्रेम प्रकृति से देश-प्रेम एवं मानव तक पहुँचता है।

प्रेमी मानव को वन्दन है
अखिल विश्व का अभिनन्दन है
भारत को जो कुछ कहना है
वह उद्‌गार हिमालय है।

नेपाली प्रेम-रस का आस्वाद लेते हैं। प्रेम की धारा में आकण्ठ डूबा कवि प्रेम को वरदान मानता है। यौवन की बाढ़ में डूब कर अपने प्राणों के पाप-पुण्य से दूर ले जाता है-

दो जग का अनुपम संगम है
प्राण छू दिए जड़ जंगम है
पाप-पुण्य है खड़े किनारे
यह यौवन की बाढ़ अगम है।

प्रणय की तीव्रता, उसकी सच्चाई जड़ को चेतन बना देती है। यह अमृत की धारा है, जहाँ पाप-पुण्य अपना अर्थ खो देते हैं। प्यार और मनुहार के गीत रचने में कवि पूरी तरह सिद्धहस्त है-

दूर जाकर न कोई बिसारा करे
मन दुबारा-तिबारा पुकारा करे।

कवि के लिए यह नाना रूपात्मक दृश्य जगत् सुखदायी है, क्योंकि प्रेम ने उसके जीवन में इन्द्रधनुषी रंग बिखेरे हैं। वह संसार को त्याज्य नहीं मानता है, बल्कि सृष्टिकर्त्ता के प्रति श्रद्धा निवेदित करता है, क्योंकि उसने जीवन-प्रेम का दान दिया है-

प्रिय ने जीवन दान किया है
मैंने बस गुणगान किया है
दिल हूँ दिल की एक लगन हूँ
जड़ हूँ तो चुपचाप खड़ा हूँ
चेतन हूँ तो प्रेम मगन हूँ।

यही तन्मयता कवि को अध्यात्म की ओर ले जाती है। आध्यात्मिक चेतना की एक बानगी देखें-

जनम-जनम मैंने भी ओढ़ी
तेरी श्याम चदरिया रे!
देकर चादर झीनी-झीनी
फिर जीवन भर खबर न लीनी
मन की खुशबू भीनी-भीनी
ना जाने किस-किस ने छीनी
लेनी थी रंगरेज न सुध तो
नाहक रंगी चुनरिया रे !

भावनापरक रहस्यवाद से रंजित कविताओं में दार्शनिक शुद्धता नहीं है, किन्तु एक मर्मस्पर्शिता है और संवेदनात्मक आवेग है। इनकी प्यासी आत्मा को परम तत्व के स्पर्श का पान करने की आकांक्षा हैं। वह शाश्वत प्यास शान्त नहीं होती दिखती है। प्रेमी आत्मा प्रेमास्पद परमप्रिय के दर्शन के लिए व्याकुल है-

मेरे प्राण मिलन के भूखे
ये आँखें दर्शन की प्यासी ।

(2)

जीवन भर नाचा मोर मगर
बौछार मिली, बादल न मिला।

कबीरादि सन्तों की भाँति इनकी आत्मा परमप्रिय से मिलने के लिए व्याकुल है।

वैयक्तिक मनःस्थिति एवं सामाजिक परिपेक्ष्य का निरूपण भी इनके कतिपय गीतों में प्राप्त होता है-

प्रिय प्रेम की फुलवारी यह
बिरुवा यहाँ लगाएँगे
छींट-छींट बिरूवे पर पानी
प्रिय की ज्योति जगाएँगे
सुख-दुःख के इन सहवासों में
रोना भी पड़ता है
इतना यहाँ भार अपना है
जग को नहीं रुलाएँगे।

संयोग के सुकुमार चित्र इनके प्रेम-गीतों को विश्वसनीयता प्रदान करते हैं। प्रेमिल सहज संयोग में उच्छृंखल बिखराव नहीं है, अनुभवजन्य संयम है, मानसिक सन्तुलन है-

तुमने-हमने मिलकर जग में
अपने बाग लगाए
जीवन-मन्दिर में दोनों ने
यौवन राग जगाए
मन के भीतर मुझे छिपाए
बाहर पर्दा डाले
तुमने अपने प्रेम-नेम भी
खूब निराले पाले।

वियोग की पीड़ा में आशावाद है। दर्द की गुनगुनाती रागिनी ने विरह व्यथा को सहजता दी है-

दूर तुमने किया, दर्द इतना दिया
हम जहाँ भी रहे गुनगुनाते रहे
दो तुम्हारे नयन, दो हमारे नयन
चार दीपक सदा जगमगाते रहे।

प्रत्येक के साथ अप्रत्यकबोध को भी इन्होंने आकार दिया है

मेरे जीवन के निकुंज में
चन्द किरण बन पाओ न
मेरी आँखों की पलकों पर
मधुर स्वप्न बन जाओ न!

क्रिस्टीना रोज्मेटी की साम्यमूल्क पंक्तियों में कवि की इस भावना का सुन्दर चित्र हमें प्राप्त होता है-

Come to my dream, so that
I may live the very life
Though cold in death
Come to me, so that I may give you
Pulse to Pulse, breath to breath.

प्रकृति के प्रति कवि के हृदय में गहरा अनुराग है। कवि का यह कथन **यह हरी-हरी दूब की ही महिमा है कि आज मेरे हाथ में बन्दूक के बदले लेखनी है।** उसी अनुराग की व्यंजना करता है। प्रकृति का रम्य रूप उसके गीतों में सर्वत्र अंकित है। प्रकृति कहीं उसके दार्शनिक भावों का उन्मेष करती है, तो कहीं सहज सौन्दर्य के प्रभामंडल से शत्-शत् किरणें विकीर्ण करती हैं। प्रकृति का आलम्बन रूप द्रष्टव्य है-

उड़ती मछली जल के ऊपर
उड़ती तितली तृण के ऊपर

और पतंगें उड़तीं नभ पर
पर कोमल तो पंछी के पर ।

'हरी घास' में कवि असीम सत्ता की कृपा के दर्शन करता है-

प्रभु की असीम करुणा
कुछ-कुछ होती है मुझे भाव
दी बिछा उसी ने इसीलिए
मेरे आँगन में हरी घास ।

भाई-बहन के प्रेम को पहली बार हिन्दी-साहित्य-जगत् में कवि की लेखनी ने वाणी दी है-

तू चिनगारी बनकर उड़ती
जाग-जाग मैं जवाल बनूँ
तू बन जा हहराती गंगा
मैं झेलम बेहाल बनूँ ।
आज बसन्ती चोला तेरा
मैं भी सज लूँ लाल बनूँ
तू भागिनी बन क्रांति करा
मैं भाई विकराल बनूँ ।

जीवन के प्रांरभिक रस में कवि तरुणाई के तीर पर खड़ा होकर संसार के प्रेम की ऊँचाई के दर्शन करता है। उसकी प्रेम-भावना उत्तरोत्तर विकसित होती गयी है। प्रेम का आधार बदलता गया, किन्तु प्रेम वही रहा, शरीर बदलता गया, आत्मा वही रही, प्रेम उसका मधुबन है, जहाँ वन वासिनी साधना के सहारे कवि सिद्धि प्राप्त करता है-

प्रेम ही मधुवन हमारा
साधना वनवासिनी है।

कवि के मन का दर्द, प्रेम का स्पर्श पाकर शीतल चन्दन बन गया है। उसकी प्रेम-भावना उदस्त बनकर प्रकृति, लोक और अध्यात्म के तटों का स्पर्श करके मंगलमयी हो गयी है। **यौवन, शृंगार और सौन्दर्य के गीतकार नेपाली प्रकृति, देश एवं मानव जीवन के प्रति संवेदना के नए स्वर का संधान करते हैं।**

वस्तुतः प्रेम ही कवि का दर्शन है, जीवन है, आत्मा है तभी तो वह कह उठता है-

राग के दीपक जले रे
प्रेम की जगमग पुरी । □

हिन्दी-विभाग
लंगट सिंह कॉलेज
मुजफ्फरपुर

स्वाधीन कलम नेपाली [१]

प्रेम-प्रकृति और करुणा की त्रिवेणी पर खड़ा छायावादोत्तर युग का प्रमुख स्तंभ **गोपाल सिंह नेपाली** (१९११-१९६३ ई०) की रचनात्मक भावभूमि को समझने के लिए प्रथम प्रकाशित समीक्षा ग्रंथ है- **'स्वाधीन कलम नेपाली'** (मुजफ्फरपुर, १९८२ ई०)। इसे **डॉ० अवधेश्वर अरुण** और **डॉ० रामप्रवेश सिंह** ने संपादित किया है। इससे पूर्व **'युवक'** (नेपाली अंक, आगरा, १९६३ ई०), **'किरण'** (हाजीपुर), **उदय** (वाराणसी), **धर्मयुग** (बम्बई), **साप्ताहिक हिन्दुस्तान** (नई दिल्ली), **आर्यावर्त्त** (पटना), **दृष्टि** (नवादा) आदि पत्र-पत्रिकाओं ने भी **नेपाली** पर केन्द्रित विशिष्ट अंक तथा आलेख प्रकाशित किए थे। लेकिन उनकी काव्य-साधना का विधिवत् अध्ययन-अनुशीलन की पहल निस्संदेह आलोच्य ग्रंथ से हुयी है। और शोध की पहले **डॉ० रामप्रवेश सिंह (नेपाली और किशोर) के गीतों का तुलनात्मक अध्ययन,** बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, १९७९) ने की। **डॉ० अवधेश्वर अरुण** ने संपादकीय में **नेपाली** को **'राग और आग का कवि'** कहा है। तदनुसार **नेपाली** की राग प्रकृति, प्रेम और करुणा और आग क्रांति, बलिदान, ध्वंस और निर्माण की उद्भावना के रूप में अभिव्यंजित हुआ है। आलोच्य ग्रंथ के सुधी निबंधकारों ने बिना किसी प्रतिबद्धता के **नेपाली** को समझने का सार्थक प्रयास किया है।

डॉ० अवधेश्वर अरुण (**महाकवि नेपाली : व्यक्ति और व्यक्तित्व**) ने **नेपाली** के बेतिया से बम्बई और पेशावर से रतलाम तक फैले बहुमुखी व्यक्तित्व को रेखांकित किया है। नेपाली की संघर्षप्रियता और कष्ट सहिष्णुता के मूल में उनका पैतृक सैन्य संस्कार तथा राष्ट्रीयता **'वन मैन आर्मी'** के रूप में फूट पड़ी थी। "**तलवार उठा लो बदल जाए नजारा। चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा॥**" वस्तुतः नेपाली की जीवन-यात्रा एक खुली किताब की तरह थी, **जिसमें सृजनात्मक ऊँचाई की अपेक्षा अनुभव की गहराई अधिक है।**

द्विवेदी अभिनंदन समारोह (वाराणसी, १९३२ ई०) से अपनी भाव सम्पदा, पारदर्शी अभिव्यंजना एवं मधुर स्वरलहरी के कारण लोकप्रिय पहचान बनाने वाले **नेपाली** ने भारतीय स्तर पर साहित्यकारों का अपनी ओर ध्यानाकृष्ट किया था। **'सुधा'** (लखनऊ) **'चित्रपट'** (दिल्ली), **'रतलाम टाइम्स'** (रतलाम), **'योगी'** (पटना) आदि की संपादकीय यात्रा के बाद बम्बई के कवि सम्मेलन ने नेपाली की जीवन-दिशा ही बदल दी। लेकिन बम्बई ने उन्हें लोकप्रिय कवि की जगह फिल्मी गीतकार की प्रतिष्ठा अधिक दी, जो उनके लिए सुखद नहीं रही। **नेपाली** को भारत के उत्तरी सीमांत पर संभावित संकट का पूर्वाभास १९५८ में हो चुका था, जिसकी परिणति १९६२ को भारत-चीन युद्ध के रूप में हुई। वे बम्बई के रेशमी बंधन को तोड़कर **'वन मैन**

---

१. पुस्तक का नाम - स्वाधीन कलम नेपाली, संपादक : डॉ० अवधेश्वर अरुण एवं डॉ० रामप्रवेश सिंह, प्रकाशक - हंसराज प्रकाशन, मुजफ्फरपुर, संस्करण : १९८२

आर्मी' के रूप में **'हिमालय ने पुकारा'** का जागरण गीत गाते हुए दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़े। युद्ध के मोर्चे पर **गान्धी की अहिंसा** और **नेहरू के पंचशील** की हत्या ने कवि-हृदय को उद्विग्न कर दिया था। **नेपाली** के गीतों का संसार **पंछी, उमंग, नीलिमा, पंचमी, रागिनी, नवीन** आदि के माध्यम से प्रसार पा चुका था। **'हिमालय ने पुकारा''** ने नेपाली की भंगिमा ही बदल दी।

'नेपाली की काव्य कृतियाँ' में **डॉ० सुशील कुमार सिंह** ने **नेपाली** के गीतों की अंत:वस्तु का अनुशीलन करते हुए लिखा है कि नेपाली मूलत: गीतकार थे, लेकिन **'पंछी'** उनकी प्रबंध प्रतिभा का एक उदाहरण बन गया है। दो पंछियों की प्रणयगाथा पर आधारित इस प्रतीक काव्य में अभिव्यंजित संयोग-वियोग के धार्मिक चित्र काफी हृदयस्पर्शी हैं। **'उमंग'** में प्रज्ञावान व्यक्ति की द्रवणशीलता का दर्शन होता है, जबकि **'रागिनी'** रागों के संयोजन और भावों की सहज सम्प्रेषणीयता के कारण तथा **'नीलिमा'** कवि के भावात्मक विकास एवं चिंतन की प्रौढ़ता के कारण महत्वपूर्ण बन गयी है। **'नवीन'** उनकी काव्य-यात्रा में मील का पत्थर है, तो **'हिमालय ने पुकारा'** उनकी काव्य-साधना का शिखर बन गया है- जिसमें राष्ट्रीयता की रक्षा की सजगता का आह्वान किया गया है। **'हिमालय ने पुकारा'** के गीतों में सागर को तरंगित करने, पत्थरों को सुलगा देने और जनाक्रोश को उत्तेजित कर देने की क्षमता अद्‌भुत है। **डा० सिंह** ने **नेपाली** की अप्रकाशित पुस्तकों की सूचना दी है। जो निम्नवत् है- **१. हम तरुवर की चिड़ियाँ, २. दो तुम्हारे नयन-दो हमारे नयन, ३. नौ लाख सितारों ने लूटा, ४. रोटियों का चन्द्रमा** तथा **५. तूफानों को आवाज दो।**

मंजु प्रसाद (**नेपाली की बनावट**) के अनुसार **नेपाली** का हिन्दी-जगत् में आगमन काव्य और संगीत के मणिकंचन योग के साथ हुआ। बनावट की दृष्टि से वे नए और पुराने दोनों हैं किंतु उनकी कविता की आत्मा आधुनिक अधिक है। प्रगतिशीलता की स्थापना के लिए सदैव परिस्थितियों से जूझते रहना उनकी नियति बन गयी थी। अत: **वे सच्चे अर्थों में प्रगतिशील कवि हैं।** नेपाली की प्रगतिशीलता में **डॉ० रामप्रवेश सिंह** के अनुसार **नेपाली** का सम्पूर्ण साहित्यवादों की सीमा से परे अनुभूतियों का काव्य है। प्रगतिशीलता उनकी जीवन-प्रवृत्ति है, काव्य की प्रवृत्ति नहीं। वैसे समस्त वादों का समाहार उनके काव्य में परिलक्षित होता है। उनके गीतों में समकालीन कवियों से भिन्न राजनैतिक हलचल, सामाजिक वैषम्य, रूढ़ि भंजन और जीवन के प्रति अटूट आस्था के स्वर अनुगूंजित हैं, जो उनकी प्रगतिशीलता को प्रदर्शित करते हैं।

नेपाली की कविताओं में अखंड भारत का भव्यांकन हुआ है। देश की एकता और अखंडता को रेखांकित करने के लिए उनकी कविता **'हिमालय'** सांस्कृतिक सामरस्य का प्रतीक बन गयी है। सीमांत की रक्षा के लिए कभी उन्होंने **'चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा'** जन-जन का कण्ठहार बन गया था। रणवीर कुमार राजन (**नेपाली की राष्ट्रीयता**) ने कवि की राष्ट्रीय भावनाओं को रेखांकित करते हुए, उन्हीं की पंक्तियों को उद्‌धृत किया है- **'दुनियां के सारे सिद्धांत देश की स्वाधीनता के लिए है, स्वाधीनता सड़े-गले सिद्धांतों के लिए नहीं है।** अत: कारगिल के संदर्भ में नेपाली की राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत गीतों का पुनरावलोकन आवश्यक है।

नेपाली के गीतों में प्रेमभावना को अनुशीलन के क्रम में **डा० इन्दु सिन्हा** ने लिखा है कि प्रेम नेपाली के गीतों का प्राण है, जो प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करता है। अत: आचार्य **जानकीवल्लभ शास्त्री** ने उनमें **मिल्टन, शेली** और **कीट्स** का समाहार देखा है। कविवर **द्विज** ने उन्हें **वर्ड्सवर्थ** का सम्मान दिया है। **नेपाली** का यह आत्मकथ्य यहाँ प्रासंगिक है-- **''यह हरी-भरी दूब की ही महिमा है कि आज मेरे हाथ में बन्दूक के बदले लेखनी है। फिर क्यों न मधुरकंठ से उनका गुणागान करूँ ? उसी ने इसीलिए मेरे आँगन में हरी-हरी घास उगायी है।''** **डॉ० प्रेमलता कश्यप** ने उन्हें **'यौवन और मस्ती का कवि'** कहा है। **नेपाली** यौवन की वह जीवंत प्रतिमा है, जिसपर मस्ती का पानी चढ़ा है।

डॉ० रेवती रमण (**नेपाली की काव्य-दृष्टि**) ने उनकी काव्य प्रतिभा का विवेचन करते हुए लिखा है कि राष्ट्रीय भावनाओं को स्वरूप प्रदान करनेवाले अपने समकालीन कवियों में अग्रणी हैं। **नेपाली हिन्दी का दूसरा जनकवि जगनिक है,** जिसने अपने गीतों द्वारा सत्ता-विरोध को उसकाया, उसके विरुद्ध अनुकूल वातावरण सृजित किया। अत: **नेपाली कबीर के बाद दूसरा सशक्त सत्ता विरोधी कवि है।** विद्यानंद सिंह ने उन्हें (**नेपाली की मानवतावादी दृष्टि**) जहाँ मानवतावादी भावनाओं का संवाहक कहा है, बालेश्वर बैजलपुरी (**नेपाली काव्य की जनवादिता**) ने उन्हें जनवादी कवि कहा है। उनकी कविताओं में विद्रोह की चेतना है। इस दृष्टि से **'मेरा धन है स्वाधीन कलम'** एक महत्वपूर्ण रचना बन जाती है।

प्रकृति को नूतन प्राणशक्ति और अभिनव कलेवर प्रदान करने वाले कवि नेपाली ने प्रकृति के माध्यम से राष्ट्रीय उद्‌बोधन की पीठिका प्रस्तुत की है। शेष निबंध **'नेपाली की तलाश'** (आशुतोष कुमार), **'नेपाली काव्य में प्रकृति'** (देवेन्द्र नाथ ठाकुर) तथा **'नेपाली की भाषा'** (डा० अरुण) मात्र खानापूरी के लिए हैं।

अंतत:, यह नि:संकोच कहा जा सकता है कि आलोच्य इस ग्रन्थ के संपादक प्रधान **डॉ० अवधेश्वर अरुण** ने अपने आभा मंडल के शोधार्थियों के माध्यम से नेपाली के रचना-संसार का अनेक कोणों से मूल्यांकन का जो प्रथम साहसिक प्रयास किया है, वह स्तुत्य है। ☐

डॉ० प्रफुल्ल कुमार सिंह मौन
प्रोफेसर्स कॉलनी,
महनार (वैशाली)

नेपाली की काव्य-चेतना [1]

डॉ० बलराम मिश्र एवं **डॉ० सतीश कुमार राय** द्वारा सम्पादित इस ग्रंथ में कुल उन्नीस लेख संगृहीत किए गए हैं, जो नेपाली के काव्य के विविध आयामों को पूरी सजगता से उजागर करते हैं। पुस्तक के 'निवेदन' में ही सम्पादक-द्वय का यह कथन है- ''यह एक सम्पादित ग्रन्थ है। इसमें उन्नीस लेखकों की उन्नीस रचनाएँ संकलित की गई हैं। प्राय: सम्पादित ग्रन्थों के लेखों में अन्विति का अभाव देखने को मिलता है। हम इस अभाव से अपरिचित नहीं हैं, किन्तु अन्विति की सजगता के प्रति हमारा कोई दावा भी नहीं है। हाँ, हमारा यह प्रयत्न अवश्य रहा है कि इस पुस्तक में पिष्ठपेषण की जगह नए तथ्यों की ओर संकेत और नयी दिशाओं की खोज हो सके।''

पुस्तक का पहला लेख शीर्षक-लेख है, और इसमें सम्पादक **डॉ० बलराम मिश्र** ने नेपाली की काव्य-चेतना के वैशिष्ट्य पर विचार किया है। **डॉ० मिश्र** का कथन है- ''नेपाली की काव्य-चेतना में सचेष्टता, सजगता के दर्शन भले ही कम होते हों, किन्तु भाव एवं विचार-जगत् के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव नेपाली में परिपूर्णता के साथ विद्यमान है। इसी कारण वे सहज स्वाभाविक कवि बन सके हैं। उनकी प्रतिभा प्रकृति-प्रदत्त है।'' (पृष्ठ - ९)

''सम्पूर्णता का कवि नेपाली'' शीर्षक लेख में **रामेश्वर द्विवेदी** ने नेपाली को स्वयंभू कवि माना है। **'नेपाली की प्रगतिशील चेतना' रमाकान्त सिंह** का एक सार्थक लेख है। नेपाली की प्रगतिशीलता के साथ इस लेख में **नेपाली** की लोकप्रियता के कारणों की ओर भी लेखक ने संकेत किया है- ''उनमें काव्य-सम्पदा तो थोड़ी ही है, किन्तु विच्छित्ति की नवीनता के कारण वे अपने सम-सामयिक कवियों में अपना विशिष्ट स्थान बना चुके थे, और आज भी उनके काव्य का महत्त्व बिल्कुल घटा नहीं है। (पृष्ठ - १४)

नेपाली की राष्ट्रीय चेतना पर इस ग्रन्थ में दो लेख हैं- **मोहम्मद निजामुद्दीन अंसारी** और **डॉ० रेवती रमण** के। इसपर स्पष्टीकरण देते हुए सम्पादकों ने कहा है- ''इस पुस्तक में नेपाली की राष्ट्रीय चेतना पर एक साथ **डॉ० रेवती रमण** और **मोहम्मद निजामुद्दीन** का लेख देना अकारण नहीं है। आज हम जब अलगाववादी ताकतों से जूझ रहे हों, तो किसी **'वन मैन आर्मी'** की राष्ट्रीयतामूलक कविताएँ न केवल हमें प्रेरणा देंगी, अपितु शक्ति और साहस भी देंगी। आज राष्ट्रीयता की और उसके संदर्भ में **नेपाली की प्रासंगिकता** को ध्यान में रखते हुए ही हमने यह दुस्साहस किया है।'' (निवेदन), **मोहम्मद निजामुद्दीन अंसारी के लेख में जहाँ भावुकता अधिक है, वहीं डॉ० रेवती रमण का लेख एक वैचारिक लेख है। डॉ० रमण** के शब्दों में- ''**नेपाली एक जनकवि हैं**, सच्चे देशभक्त और जनवादी, अत: उनका शब्दकर्म

---

१. पुस्तक का नाम :- नेपाली की काव्य-चेतना
संपादक :- डॉ० बलराम मिश्र एवं डॉ० सतीश कुमार राय। प्रकाशक:- बिहार ग्रंथ कुटीर प्रकाशन, पटना
प्रथम संस्करण :- जनवरी, १९९२, मूल्य:- पचास रुपए (पेपर बैक), पचहत्तर रुपए (सजिल्द)।

निसर्गत : राष्ट्रीय-गरिमा और स्वाभिमान को समर्पित है। उनका राष्ट्रभाषा-प्रेम अपूर्व है और जातीय-स्वातन्त्र्य के प्रति सजगता बिल्कुल सचेत प्रहरी जैसी।'' (पृष्ठ - २९)

इन निबन्धों के बाद **नेपाली** के सात काव्य-संग्रहों की समीक्षा है। **डॉ० रवीन्द्र उपाध्याय, शिवशंकर सिंह, रामेश्वर प्रसाद, प्रो० ब्रजेन्द्र शंकर द्विवेदी, प्रो० अरविन्द कुमार वर्मा, चन्द्रकिशोर सिंह श्वेतांशु** और **साकेत बिहारी शर्मा शितिकंठ** ने क्रमशः **उमंग, पंछी, रागिनी, नीलिमा, पंचमी, नवीन** और **हिमालय ने पुकारा** की सम्यक् समीक्षा की है। **नेपाली** की आरंभिक असंकलित रचनाएँ इस ग्रन्थ को शोध का आधार देने वाला एक महत्त्वपूर्ण लेख है। इसमें अपनी टिप्पणी के साथ पत्रकार **शिवशंकर सत्यार्थी** ने नेपाली की तीन बाल-कविताओं के साथ एक प्रकृति-गीत और एक गद्य-रचना प्रस्तुत की है। **'नेपाली का गद्य-साहित्य' डॉ० शोभाकान्त झा** का संक्षिप्त किन्तु अर्थपूर्ण लेख है, जिसमें **नेपाली** की गद्य-रचनाओं का परिचय दिया गया है और एक गद्यकार के रूप में **नेपाली** की शक्ति रेखांकित की गई है।

इस पुस्तक में नेपाली पर प्रकाशित दो पुस्तकों **'गोपाल सिंह नेपाली : जीवन और साहित्य,'** और **'गीतों के राजकुमार : गोपाल सिंह नेपाली'** की समीक्षा भी है। **श्रीमती उमा झा** और **डॉ० अनिरुद्ध राय** ने इन दोनों पुस्तकों की खूबियों के साथ इनकी सीमाओं की ओर भी संकेत किया है। अन्तिम लेख **'नेपाली एक पुनर्मूल्यांकन'** दूसरे सम्पादक **डॉ० सतीश कुमार राय** का एक महत्त्वपूर्ण लेख है, जिसमें उन्होंने नेपाली-साहित्य के सारे आयामों पर पुनर्विचार किया है। **नेपाली** की कविताओं के अतिरिक्त उनके गद्य-साहित्य और उनके फिल्मी-गीतों पर भी इस लेख में गहराई से विचार किया गया है। नेपाली के काव्य की सीमाओं की ओर संकेत करने के बावजूद **डॉ० राय** ने यह निष्कर्ष दिया है- ''**नेपाली हिन्दी की उस धारा के प्रतिनिधि कवि हैं, जिसका सम्बन्ध आम-आदमी से है, उसके दुःख-सुख से है, उसकी आशा-प्रत्याशा से है। अतः नेपाली आभिजात्य की जगह आम-आदमी के कवि हैं।** आम-आदमी का कवि होना उनकी सबसे बड़ी शक्ति है और इसी शक्ति के कारण वे हिन्दी के प्रतिनिधि कवि घोषित होते हैं। नेपाली के काव्य की एक और बड़ी शक्ति है, उसकी सहजता। सहजता भी एक सिद्धि है, जिसे कलाकार अपनी अनवरत् साधना से प्राप्त करता है। इस अर्थ में **नेपाली आधुनिक हिन्दी-कविता के एक सिद्ध कवि हैं।** (पृष्ठ - १७१)

नयनाभिराम छपाई के बावजूद कहीं-कहीं मुद्रणगत अशुद्धियाँ खटकती भी हैं। फिर भी, यह पुस्तक नेपाली पर एक उपयोगी आलोचनात्मक पुस्तक है, और नेपाली के काव्य-मर्म को समझने के लिए इससे अपेक्षित सहायता मिल सकती है। □

सुनील कुमार
द्वारा-श्री गोविन्द प्रसाद
ग्राम + पो० - बहुअरवा,
व्हाया - सुगौली
जिला- प० चम्पारण

गोपाल सिंह नेपाली : जीवन और साहित्य [1]

ईस पुस्तक का संपादन **नेपाली** साहित्य के मर्मज्ञ **डॉ० बलराम** ने किया है। इस ग्रन्थ में 'नेपाली' पर लम्बी सम्पादकीय भूमिका के साथ नौ आलोचनात्मक निबंध संग्रहीत हैं। भूमिका में जहाँ एक ओर **नेपाली** के काव्य के वैशिष्ट्य को रेखांकित किया गया है, वहीं दूसरी ओर लेखकों के साथ संपादक की आत्मीयता भी अभिव्यक्त हां पहला लेख **'मेरी रही कहानी केवल' आचार्य शम्भु नाथ मिश्र** द्वारा लिखित **नेपाली** का जीवन-वृत्त है। इसमें नेपाली के जन्म, उनके परिवार, उनकी शिक्षा-दीक्षा और रचना-यात्रा का क्रमबद्ध विवरण प्रस्तुत किया गया है। यह एक जानकारीपूर्ण लेख है और नेपाली के जीवन के अनेक नए प्रसंग इसमें उद्घोषित हुए हैं। तत्पश्चात् **'नेपाली की जन्म-तिथि : भ्रान्तियों का निराकरण'** शीर्षक शोधपूर्ण लेख है। **डॉ० बलराम** का यह लेख पूर्व में **'ताल-मेल'** पाक्षिक बेतिया और **'प० चम्पारण जिला हिन्दी-साहित्य सम्मेलन की स्मारिका'** में भी प्रकाशित हो चुका है। इसमें लेखक ने **नेपाली** की अनेक भ्रामक जन्म-तिथियों को अस्वीकार करते हुए **ग्यारह अगस्त उन्नीस सौ ग्यारह** को उनकी वास्तविक जन्म-तिथि प्रमाणित किया है।

'कविवर नेपाली की कविता-यात्रा' प्रो० राजेश रंजन वर्मा का एक महत्त्पूर्ण लेख है और इसमें नेपाली की सम्पूर्ण काव्य-यात्रा का सुन्दर विवेचन किया गया है। **'नेपाली का जीवन-दर्शन'** हिन्दी-अंग्रेजी के विद्वान् और ललित निबंधकार **प्रो० रवीन्द्र नाथ ओझा** का एक कवित्वपूर्ण निबंध है, जिसमें भावुकता और वैचारिकता का अद्भुत समन्वय हुआ है। अनेक अंतर्विरोधी मतों के बावजूद यह लेख **नेपाली** के जीवन-दर्शन को स्पष्ट करने में सफल है। **'नेपाली की राष्ट्रीयता'** शीर्षक निबंध में निबंधकार **श्री साकेत बिहारी शर्मा** वस्तुतः पांडित्य प्रदर्शन के लोभ में **'शितिकंठ'** जी मूल विषय से भटक गए हैं। **नेपाली** के काव्य में राष्ट्रीय चेतना की खोज की जगह लेखक ने राष्ट्रीय भावना के विकास पर अधिक बल दिया है। **'छायावादी कवि नेपाली'** शीर्षक लेख में **श्रीमती सुशीला** ने नेपाली को एक सफल छायावादी कवि घोषित किया है। वैयक्तिकता, गीतात्मकता, वेदना आदि के आधार पर लेखिका ने अपने निष्कर्ष को पुष्ट किया है।

सतीश राय अनजान का लेख **'नेपाली का प्रकृति-चित्रण'** अपनी भावुकता के बावजूद एक उपयोगी लेख सिद्ध होता है। लेखक ने अपने लेख में नेपाली के प्रकृति-चित्रण के वैशिष्ट्य के साथ उसकी मौलिकता को भी रेखांकित किया है। **'गीतकार नेपाली' चन्द्रकिशोर सिंह**

---

१. पुस्तक का नाम :- गोपाल सिंह नेपाली : जीवन और साहित्य
संपादक :- डॉ० बलराम, प्रकाशक:- विद्यार्थी साहित्य संगम, बेतिया
प्रथम संस्करण:- अगस्त, १९८३ ई०, पृष्ठ संख्या: १५०, मूल्य:- २५ रुपए

श्वेतांश का लेख है और इसमें गीतकार के रूप में उनका सम्यक् मूल्यांकन किया गया है। संग्रह का अंतिम आलोचनात्मक लेख 'नेपाली की भाषा' है जिसमें **डॉ० बलराम** ने **नेपाली** की भाषागत विशेषताओं की ओर संकेत किया है। अपने गंभीर विवेचन के कारण यह लेख प्रबुद्धों का ध्यान आकृष्ट करने में सक्षम है।

पुस्तक के दूसरे खण्ड में **नेपाली** से संबंधित कतिपय लोगों के संस्मरण हैं। इनमें कविवर **विमल राजस्थानी** का संस्मरण **नेपाली** से संबंधित अनेक मार्मिक प्रसंगों का उद्घाटन करने में सक्षम है। पुस्तक के अंतिम भाग में श्रद्धांजलि के रूप में **नंदकुमार मिश्र, गंगानंदन झा कलाधर** और **साकेत बिहारी शर्मा शितिकंठ** की कविताएँ संकलित हैं। अंत में परिशिष्ट है, जिसमें **नेपाली** की हस्तलिपि का नमूना है और उनका एक महत्त्वपूर्ण पत्र भी। इसमें **नेपाली** पर प्रकाशित पहली पुस्तक **'स्वाधीन कलम नेपाली' (सं० डॉ० अवधेश्वर अरुण एवं डॉ० रामप्रवेश सिंह)** की समीक्षा भी है। समीक्षक **डॉ० परमेश्वर भक्त** ने संक्षेप में इस पुस्तक के गुण-दोषों पर विचार किया है। पुस्तक के प्रारंभ में **नेपाली** के दुर्लभ चित्र का मुद्रण इसके महत्त्व को बढ़ा देता है।

यह पुस्तक परिचयात्मक ही अधिक है। इसके अनेक लेखों में गंभीर विवेचन की जगह भावुकतापूर्ण उद्गार हैं। फिर भी कतिपय उपयोगी सामग्री के संकलन एवं प्रकाशन के कारण इस पुस्तक का अपना ऐतिहासिक महत्त्व तो है ही। ☐

डॉ० सुरेन्द्र 'केसरी'
व्याख्याता, हिन्दी-विभाग
के० सी० टी० सी० कॉलेज
रक्सौल (बिहार)

गायक स्वच्छन्द हिमांचल का[१]

ख्यात साहित्यकार, कवि, कथाकार तथा आलोचक डॉ० नन्द किशोर नन्दन की सद्य: प्रकाशित पुस्तक **''गायक स्वच्छन्द हिमांचल का''** में उत्तर-छायावाद के कृति कवि **गोपाल सिंह नेपाली** के विराट काव्य-संसार का सूक्ष्म अवलोकन किया गया है। अपने इस सारस्वत प्रयास में विद्यमान लेखक ने इस मान्यता को स्थापित किया है कि **नेपाली उत्तर-छायावाद के कवियों में महत्त्वपूर्ण ही नहीं, विशिष्ट** भी **हैं**। नेपाली ने अपने व्यापक काव्य-संसार में छायावादी भाव-जगत् की वायवीयता, सूक्ष्मता और एक हद तक अमूर्त्तता का निषेध कर कविता के केन्द्र में हाड़-माँस के पुतले मनुष्य को उसकी समग्र ऐन्द्रिक संवेदनाओं-यथा, भूख-प्यास, प्रेम, विछोह, रूप-रंग, आशा-निराशा, सुख-दु:ख, भक्ति और विद्रोह आदि के साथ मानवीय धरातल पर स्थापित किया है, यहाँ तक कि उनके काव्य में मनुष्य की स्थायी सहचरी-प्रकृति भी मानवीय सहजता के साथ सौन्दर्य की सजीव साकार प्रतिमा बनकर सामने आयी है।

नेपाली के असीम-व्यापक काव्य महासागर में गोता लगाते हुए **डॉ० नन्दन** ने कई बातों को जहाँ बेबाकी से स्पष्ट किया है, वहीं उनकी कविताओं की मूल भावना और केन्द्रीय स्वर को भी काफी सहजता से मुखरित किया है। आलोचक ने बिना किसी अतिरिक्त सतर्कता के बड़ी सहजता से अपनी बातों को नेपाली की काव्य-पंक्तियों के आधार पर ही कसने की कोशिश की है, जिसमें उन्हें काफी हद तक सफलता भी मिली है। लेखक की इस मान्यता से सहज ही सहमत हुआ जा सकता है कि काव्य-रचना उनके लिए सम्पूर्ण मानवीय अस्तित्व और अस्मिता की रक्षा हेतु अनिवार्य संघर्ष की अभिव्यक्ति थी। यह वास्तविक सच्चाई है कि **गोपाल सिंह नेपाली मनुष्य की मुक्ति के योद्धा कवि थे और अपनी सहज काव्य-प्रतिभा के बल पर भारतीयों की विपन्नता, शोषण और उत्पीड़न के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष करते रहे। स्वतंत्र भारत में जन-शोषण और उत्पीड़न के विरुद्ध सत्ताधारियों की तीव्रतम आलोचना करने वाले वही एकमात्र गीत-कवि थे, जिन्होंने किसी भी स्तर पर कोई समझौता नहीं किया।**

नेपाली के काव्यों का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए **डॉ० नन्दन** ने उन्हें राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत कवि माना है। **नेपाली** की तुलना **राष्ट्रकवि दिनकर** से करते हुए लेखक ने कहा है- **''दिनकर की राष्ट्रीय कविता एक ऐसे कवि की राष्ट्रीय कविता है, जिसका उद्देश्य अपनी कविताओं से देश के जन-मन में राष्ट्रीय चेतना का संचार करना नहीं, बल्कि स्वतंत्र हो रहे देश में राष्ट्रीयता को भुनाकर वह सब कुछ पाना है, जो सहज-सुलभ नहीं है। यदि यह सच नहीं है, तो उन्होंने राष्ट्रीय चेतना से युक्त काव्य का सृजन इतने विलम्ब से क्यों किया?** .... तात्पर्य यह कि **दिनकर** का काव्य एक सचेत जनोन्मुख

१. पुस्तक का नाम : गायक स्वच्छन्द हिमांचल का, लेखक : डॉ० नन्दकिशोर नंदन
प्रकाशक : राजेश प्रकाशन, शहदरा, नयी दिल्ली- ११००५१, मूल्य : ११० रुपए।

राष्ट्रीय कवि का काव्य नहीं है, वह तो हर तरह की राजकीय सुविधाओं और सम्मान की आकांक्षा से लिखने वाले कवि का काव्य है। इसलिए उनकी पहचान एक अवसरवादी कवि के रूप में बनी है। इसके विपरीत **नेपाली का काव्य एक ऐसे समर्पित देशभक्त योद्धा का काव्य है, जिसने कभी किसी प्रकार का समझौता नहीं किया।** अछोर निर्धनता का जीवन जीने वाले कवि **नेपाली** ने फिल्मों में गीत लिखना तक स्वीकार किया। लेकिन **दिनकर** की तरह न तो नेशनल वार फ्रन्ट के सदस्य बने ओर न ही सरकारी नौकरी करते हुए विवशता का रोना रोया।''

लेख की उपर्युक्त टिप्पणी से संभव है कुछ लोगों की सहमति न बने, यह जरूरी भी नहीं है कि **नेपाली** की राष्ट्रवादिता को प्रमाणित करने के लिए किसी अन्य को अराष्ट्रवादी बताया जाए या फिर दो व्यक्तित्वों को तुलना के आधार पर एक-दूसरे को कम या ज्यादा आंका जाए। यहाँ लेखक का मूल अभीष्ट कविवर **नेपाली** की राष्ट्रवादी कविताओं की चर्चा करना और उसके अन्तर्निहित स्वर को मुखरित करना होना चाहिए। यह निर्विवाद है कि **नेपाली केवल रूप-रंग और सौन्दर्य के ही कवि नहीं थे, बल्कि वे जन-सामान्य की मनोभावों की अच्छी समझ रखने वाले, मिट्टी की सौंधी गंध से सराबोर काव्य-सर्जक थे; जिनकी पैनी नजर तत्कालीन समाज की हर गतिविधि और विसंगति पर थी।** उनकी राष्ट्रवादी कविताएँ जन-जन में न केवल राष्ट्रीय भावना का संचार करती थीं, बल्कि वे उन्हें झकझोरती और ललकारती भी थीं। सन् १९३८ में प्रकाशित नेपाली की राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत कविता **''भाई-बहन''** और **''टुकड़ी''** जैसी अनेक कविताएँ हैं, जहाँ कवि की देशभक्ति को सहज-स्वाभाविक रूप में देखा जा सकता है। अनेक आलोचकों का भी मानना है कि **नेपाली** की कविता **''भाई-बहन''** हिन्दी-कविता की एक विशिष्ट उपलब्धि है-

''तू चिनगारी बनकर उड़ री, जाग-जाग मैं ज्वाल बनूँ
तू बन जा हहराती गंगा, मैं झेलम बेहाल बनूँ''

जहाँ तक राष्ट्रीय भावना की प्रभावी व्यंजना का प्रश्न है, **नेपाली** के प्रथम काव्य-संग्रह **''उमंग''** से लेकर अंतिम संग्रह **''हिमालय ने पुकारा'' तक की कविताएँ उनके प्रखर राष्ट्र-कवि होने का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। ''उमंग''** संग्रह की **''सत्याग्रह'', ''स्वागत'', ''मोहन से'', ''हम'', ''चित्र'', ''रागिनी''** संग्रह की **''टुकड़ी''** और **''भाई-बहन'' ''नवीन''** संग्रह की **''नवीन'' ''स्वतंत्रता का दीपक'', ''मैं गायक स्वच्छन्द हिमांचल का'' 'पंचमी'** संग्रह की **''भारत अखण्ड'', ''भारत विशाल''** जैसी कविताएँ पराधीन भारत के कवि की राष्ट्र-चेतना को कलात्मक शैली में अभिव्यंजित करती हैं, तो **''हिमालय ने पुकारा''** संग्रह की प्राय: सभी कविताएँ स्वाधीन भारत में नए सत्ताधारियों द्वारा होने वाले जन-शोषण का मार्मिक बखान करती हैं।

नेपाली की कविताओं में प्रकृति भी काफी सजीवता से अभिव्यक्त हुई है। आधुनिक हिन्दी-कवियों में **छायावाद के सुकुमार कवि पंत के पश्चात् दूसरे प्रकृति-प्रेमी कवि नेपाली ही माने जाते हैं और प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से उनकी तुलना डॉ० नन्दन ने अंग्रेजी के कवि शेली से की है।** सहज और सरल शैली में प्रकृति के माध्यम से जीवन के गूढ़ सत्यों का उद्घाटन करने में **नेपाली की गीति-कला अपने पूर्ण प्रकर्ष पर प्रतीत होती है। पंत** की अधिकांश प्रकृति-विधेयक कविताएँ दार्शनिकता से इतनी बोझिल हो गयी हैं कि

काव्य का सहज आनन्द बाधित हो जाता है। इसके विपरीत प्रकृति-चित्रण की सहजता के कारण **नेपाली का प्रकृति-वर्णन नैसर्गिक काव्य का उदाहरण है।** नेपाली की **''उमंग''**, **''रागिनी''**, **''नीलिमा''**, **''नवीन''** और **''पंचमी''** आदि कृतियों में उनका प्रकृति-प्रेम सर्वत्र दिखलायी पड़ता है। कवि के अनन्य प्रकृति-प्रेम का मूल कारण हिमालय की रम्य गोद में उसके कवि-कंठ का फूटना है। इसीलिए तो **''उमंग''** संग्रह की **''मंसूरी की तलहटी''** शीर्षक कविता में कवि स्वयं कहता है-

''फूटा है मेरा कंठ यहीं रे, निर्मल निर्झर के समान,
सीखा है मैंने यहीं तीर पर सरिता के मृदु सरल गान''

अन्य छायावादी कवियों की तरह **नेपाली** की प्रकृति-प्रेम विषयक कविताओं में भी प्रकृति का मानवीकरण बड़ी सहजता के साथ हुआ है। इसे उनके **''नीलिमा''** संग्रह की **''इस रिमझिम में चाँद हँसा है''** शीर्षक कविता में देखा जा सकता है-

बाँह उठा कर मिलो शाल,
ये दूर देश से झोंके आए,
रही झड़ी की बात, कठिन यह,
कौन हठीली को समझाए ?

अधिकांश समीक्षकों के अनुसार **नेपाली यौवन और प्रेम की मस्ती के गायक रहे हैं, लेकिन उनके काव्य में मूल चेतना प्रकृति रही है।** प्रकृति-चित्रण का प्राधान्य इस तथ्य का परिचायक है। **डॉ० नन्दन** का मानना है कि **नेपाली ने पंत की अपेक्षा कहीं अधिक भाव-गहन कविताएँ लिखी हैं**, वे जितना प्रकृति के बहिरंग सौन्दर्य को निरखते-परखते हैं, इससे कहीं अधिक मानव-प्रकृति के अन्तर्मन में भी गहरे पैठते हैं। यही कारण है कि उनकी प्रकृति सम्बन्धी कविताएँ ऊपर से चाहे जितनी सामान्य दिखाई दें, मगर पूरी कविता मानव-प्रकृति से एक-मेव होकर पूर्णता प्राप्त करती हैं।

नेपाली प्रकृति के साथ ही मानवीय प्रेम के भी अद्‌भुत पारखी थे। **नेपाली के गीतों में प्रेमानुभूति की अभिव्यंजना प्रेमी हृदय के समान ही सहज और मनोरम है।** उसमें न तो कथ्य के स्तर पर कोई जटिलता है और न ही अभिव्यक्ति की- भंगिमा में कोई कृत्रिमता है। प्रेमी और कवि दोनों ही प्रकृति की पवित्र सृष्टा होते हैं। इसलिए उनका व्यक्तित्व और जीवन-शैली दोनों में एक नैसर्गिकता होती है। ठीक ही कहा गया है कि **कविता और प्रेम दोनों की व्याप्ति धरती से आकाश तक है** यह सच है कि **प्रेमी प्रेम तो किसी एक से ही करता है, मगर उसका हृदय इतना विराट एवं उदात्त होता है कि उसके प्रेम के दायरे में सम्पूर्ण सृष्टि आ जाती है।** नेपाली के कतिपय काव्य रचनाओं के सूक्ष्म विश्लेषण के पश्चात् यह मान्यता सहज स्थापित होती है कि प्रेम और प्रकृति मानो नेपाली के कवि व्यक्तित्व की आत्मा हैं। प्रेमानुभव की व्यंजना में भी प्रकृति की सक्रिय भूमिका का यह अर्थ है कि कवि का प्रेमजनित अनुभव भी प्रकृति की तरह ही सजीव, सप्राण और सहज है। नेपाली के प्रेम-विषयक कविताओं के अवलोकन से यह सहज स्पष्ट हो जाता है कि वह अपने समकालीन कवियों में प्रेम और सौन्दर्य की कोमल भावनाओं के मौलिक गायक हैं।

नेपाली के बारे में यह पूरे विश्वास और आस्था के साथ कहा जा सकता है कि वे संवेदना के धनी एक यथार्थवादी कवि थे। उनके बारे में **डॉ० हरिवंश राय बच्चन** की यह उक्ति बिल्कुल स्टीक है-- **"तीस वर्षों तक वे जिस स्वर में बोले थे, वह स्वर उनका अपना था। न वह किसी का अनुकरण था और न कोई उनका अनुकरण कर सका। प्रवाह, समता, भाषा की सरलता, भावों की रागात्मकता उनकी हर रचना में देखी जा सकती है।"**

डॉ० नन्दन ने अपनी पुस्तक **"गायक स्वच्छन्द हिमांचल का"** में नेपाली के व्यक्तित्व को एक उँचाई देने का सारस्वत प्रयास किया है। नेपाली निश्चित तौर पर इसके अधिकारी भी हैं। अपने समकालीनों की तुलना में **प्रचार-प्रसार में पीछे छूटे नेपाली** का काव्य-अवदान किसी से कम नहीं है। **नेपाली** के काव्य-व्यक्तित्व को समझने के लिए उनकी पुस्तक **"पंछी"** की भूमिका में **सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला** द्वारा लिखित ये पंक्तियाँ ज्यादा सहायक हो सकती हैं' "इधर दो वर्षों से नवीन तारकों के सदृश जितने कवि हिन्दी के साहित्याकाश में चमकते हुए दीख पड़े, सौन्दर्य के सुख-स्पर्श जादू से जिन्होंने मन को वशीभूत कर लिया तथा जोश और तृप्ति दी, **श्री गोपाल सिंह नेपाली उन्हीं में से एक हैं। मुझे उनके काव्य में शक्ति, प्रवाह, सौन्दर्य-बोध तथा चारू-चित्रण एक विशेषता लिए हुए दीख पड़े।"**

डॉ० नन्दन ने अपनी इस पुस्तक में नेपाली के समकालीनों पर कतिपय टिप्पणियाँ भी की हैं। नेपाली की मृत्यु से सम्बंधित प्रसंग पर भी **डॉ० नन्दन** की टिप्पणियों से संभव है सबकी सहमति हो। बावजूद इसके **"गायक स्वच्छन्द हिमांचल का"** के माध्यम से उन्होंने न केवल नेपाली के व्यक्तित्व को उभारने का सराहनीय कार्य किया है, अपितु उनके वैविध्यपूर्ण और व्यापक काव्य-संसार का सूक्ष्म अवलोकन का सारस्वत प्रयास भी किया है। नेपाली-प्रेमियों और काव्य-अध्यंताओं के लिए यह एक जरूरी पुस्तक बन सकती है। □

राकेश प्रवीर
"आज" (हिन्दी-दैनिक)
फ्रेजर रोड
पटना - ८०० ००१

मधु संचय

चम्पारण और कविवर नेपाली

• आनन्द किशोर मिश्र

चेतना का केन्द्र चम्पारण- नेपाल से सटा बिहार का एक ऐतिहासिक जिला- अपनी साहित्यिक और सांस्कृतिक सुगंध से चर्चित चमत्कृत- जहाँ से भारतीय स्वतंत्रता महासंग्राम में "सिविल नाफरमानी-सविनय अवज्ञा आन्दोलन" का अभिनव प्रयोग का प्रारंभ हुआ था। चम्पारण की धरती में क्रान्ति और परिवर्तन के लिए पहल करने की एक अनोखी शक्ति है।

मोहनदास करमचन्द गान्धी जब राउन्ड टेबुल कान्फ्रेंन्स में भाग लेने लंदन जा रहे थे- तो इसी जिले में जन्मे एक गीतकार ने सम्बोधित किया-

तीस कोटि के मन में बसता
एक लंगोटी वाला

और ललकारा,

छोड़ो रोटी का यह टुकड़ा
अपना चावल का दाना
मोहन तुम अब बीन बजाओ
पहने केसरिया बाना

उसी गीतकार का नाम था- **गोपाल सिंह नेपाली** और इस प्रकार युग, जीवन और प्रकृति के अमर चितेरे **महाकवि गोपाल सिंह नेपाली को सन् १९११ में बेतिया** में जन्म देने का सौभाग्य इसी जिले को प्राप्त है। **मोहनदास करम चन्द गान्धी को महात्मा गान्धी होने में इस अद्भुतगीतकार** की क्या भूमिका रही होगी सहज ही अनुभव किया जा सकता है।

नेपाली जी के समकालीन उनसे जितना ही कतराते रहे- उनके निधन के बाद उनकी शैली छन्द और लय को उतना ही अपनाया और दुहराया। **बच्चन, अंचल** और **नरेन्द्र शर्मा** की सर्वस्वीकृति अभी भी उन्हें निस्तेज नहीं कर पायी। **नेपाली जी "तुम कल्पना करो नवीन कल्पना करो"** जैसी पंक्तियों से पराधीन भारत के नौजवानों को सम्बोधित करते हुए आजाद हिन्द में भी उनके हृदय की धड़कनों का हिस्सा बने रहे।

चम्पा का अरण्य- यानी चम्पारण की प्राकृतिक सुषमा बरबस ही सबका मन मोह लेती है। हरे-भरे वन-जीवत् पहाड़, कलकल-छल नाद से निनादित नदियाँ, झरने, नील गगन में उड़ान भरते पक्षी, उन्मुक्त, हवा और सीधा-सादा ग्राम्य जीवन, निष्कपट और निष्कलंक। प्रकृति की इस सुरम्य गोद में पैदा हुए **नेपाली के पिता स्वर्गीय तेज बहादुर सिंह के मिलीट्री में कार्यरत रहने के कारण देहरादून, मंसूरी, नैनीताल आदि की प्राकृतिक सुषमा को निकट से निहारने का मौका तो मिला ही- साथ-ही-साथ उनके कवि-हृदय ने स्वयं को एक यायावर मानकर इस संवेदना से जुड़ने में कोई भी कसर नहीं छोड़ी** कि तुम्हारे जैसे हजारों यात्री यहाँ आते और जाते रहेंगे- और हम गगनचुम्बी पर्वत- जैसे के तैसे- रहेंगे और इस प्रकार **नेपालीजी** को लगा कि प्रकृति चिरंतन है और मानव का अस्तित्व क्षण भंगुर।

और यही कारण है कि जब **नेपाली** का कोमल और सुकुमार कवि प्रयाग में पहली बार अखिल भारतीय कवि-सम्मेलन के मंच से काव्य-पाठ के लिए आमंत्रित हुआ- तो उन्होंने सुनाया-

ये देहरादून के पके बेर
भई बिकते हैं क्यों टके सेर।

इस प्रकृतिपरक गीत का जादू श्रोताओं के सिर पर चढ़कर बोलने लगा। श्रोताओं के आत्मीय आग्रह पर संचालक महोदय को दुबारा बुलाना पड़ा और नेपाली ने "दार्जिलिंग की बूँन्दा-बाँदी" सुनाकर श्रोतओं का मन मोह लिया।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी अध्यक्षता कर रहे थे- अगले दिन विद्वत परिषद् ने युवा कवि **नेपाली जी** को **द्विवेदी जी** की शुभाशंसा प्राप्त करवाने हेतु आचार्य जी के घर लाया गया।

उन दिनों "ड्राइंग रूम" एक कल्चर का सपुनरी ले पाया था। **द्विवेदी जी** अपने आँगन में स्थान ग्रहण किए विद्वत् परिषद् के लोगों को आश्चर्य तब हुआ जब नहाते समय आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कभी "**ये देहरादून के पके बेर** तो कभी-**दार्जिलिंग की बून्दा बाँन्दी**" सस्वर गुनगुनाते पाए गए। और यह था **नेपालीजी के** काव्य-पाठ का जादू।

प्रकृति प्रत्येक व्यक्ति को इस धरा-धाम पर कुछ खास निमित्त हेतु भेजती है। व्यापक और विश्लेषणात्मक दृष्टिपात करने पर ऐसा महसूस होता है कि कुछ लोगों ने साहित्य और कविता को जीविकोपार्जन का आधार बनाया या अपने को सिद्धि से प्रसिद्धि तक ले जाने में साहित्य का एक सीढ़ी के रूप में उपयोग किया। परन्तु **नेपाली जी** संभवत: गीतों के लिए ही पैदा हुए थे- **वह जन्मना गीतकार थे।**

बहुत लोग यह सवाल उठाते हैं क्या आधुनिक युग और कविता। इस घोर भौतिकवादी युग में कविता से क्या बनना और क्या बिगड़ना-बड़ा ही सामयिक सवाल है। यह तो क्या आधुनिक युग में माँ और बेटे का सम्बन्द्ध? भाई और बहन के रिश्ते की पवित्रता? यदि आज के युग में भी इन सम्बन्धों की प्रासंगिकता ज्यों-ही-त्यों बनी हुयी है, तो कविता को भी जीवन का संगी होना ही चाहिए। अट्टालिकाएँ तब अशांत होने लगती हैं। **जब महल असहाय महसूस करने लगते हैं- जीवन-संघर्ष में वैभव जब बौना पड़ने लगता है, तब शुरू होती है साहित्य की अराधना, कविता की इबादत, गीत की पूजा और शायरी का सिजदा और गोपाल सिंह नेपाली के गीत हमें इसी आशय की पुष्टि कराते हैं।** आज कविता लिखना ही यथेष्ठ नहीं है, बल्कि **उसे श्रोताओं तक पहुँचाना ज्यादा जरूरी हो गया है।** पहले हमारे कवि श्रोताओं तक सीधे पहुँच जाते थे- परन्तु प्रकाशन और सम्प्रेषणा की सारी सुविधा समेटे हमारे कवि-गीतकार श्रोतओं से अपना सीधा सरोकार क्यों नहीं बना पाते, इसकी पड़ताल करना निहायत ही दिलचस्प होगी। सम्प्रेषणीयता की समस्याओं को बाँटना होगा और आज के रचनाकारों के लिए नेपालीजी के गीत-मील के पत्थर साबित होंगे।

कालक्रम के क्रम में नेपाली जी की लेखनी निरंतर फूटती रही। उन्होंने पुस्तकालयों, आलोचनाओं, समालोचनाओं को ही केन्द्रीय दृष्टि में रखकर कुछ सृजन नहीं किया। उन्होंने

भारत के विशाल जन-समुदाय के लिए लेखनी उठायी। उनके चिन्तन के केन्द्र में **'मनुष्य'** था- और यही कारण है- कि नेपालीजी भारत की विशाल जनता की जिह्वा पर चढ़ गए- जन-जन के कवि हो गए- जन-जन की अनुभूति का हिस्सा बन बैठे।

जरा कुछ बानगी देखें-

दिवस गए बरस गए, बहुत दिन बीत गए
आज तक उदित हुआ न रोटियों का चन्द्रमा।

फिर

क्यों रोटी पर इन्सान मचलता रहता है ?
तेरे कदमों पर ताज उछलता रहता है ।

और

शंकर की पुरी चीन ने सेना को उतारा
चालीस करोड़ों को हिमालय ने पुकारा।

चीनी आक्रमण के समय जब **राबिन शॉ पुष्प** ने नेपाली जी से पूछा- "नेपाली जी! रेडियो पेकिंग, जेनरल करिअप्पा और आप दोनों पर अपना गुस्सा काफी उतार रहा है। तो नेपाली जी ने मुस्कुराकर उत्तर दिया- "इससे बड़ा सौभाग्य मेरा और क्या हो सकता है ?"

मैं स्वयं कोई चिंतक, लेखक, कवि या कलाकार नहीं हूँ- परन्तु चम्पारण में ऑरकेस्ट्रा संस्कृति के समानान्तर गीत-पर्व का आयोजन करता रहा हूँ- विगत १५ वर्षों से चम्पारण में साहित्यिक पुनर्जागरण का आन्दोलन चलाया है मैंने- केमीचा काव्य महोत्सव, रामनगर काव्य महोत्सव, मधुवन काव्य महोत्सव, चकिया मेंहदी पकड़ी दयाल, मोतिहारी नवयुवक पुस्तकालय में २५ से २६ बार तक काव्य-पर्व राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित करने का जोखिम उठाया है- इस क्रम में मैंने यह महसूस किया कि चम्पारण की मिट्टी में गीत के प्रति सम्वेदना आज भी व्याप्त है- गीत के ग्राह्यता के तत्त्व आज भी विद्यमान हैं- गीति कवियों वे प्रति श्रोताओं के मन में अपार श्रद्धा है- और इसका एक ही कारण है कि चम्पारण की धरती में नेपाली के गीतों की अनुगूँज आज भी सुनायी देती है। राष्ट्र के भिन्न-भिन्न भागों से आए कवियों, शायरों ने भी एक स्वर से स्वीकारा कि **गीतों के राजकुमार नेपाली** की जन्म-भूमि उनकी गीति-संवेदना से आज भी संपृक्त है। आप यकीन माने चम्पारण के काव्योत्सवों में आम जनता की भागीदारी एक आन्दोलन की तरह होती है। यहाँ पर कविता कुछ (बुद्धिजीवियों) शिक्षा और छद्म अहंकार से भारी भरकम व्यक्तियों की चीज नहीं- जन-जन के पर्व हो जाते हैं यहाँ काव्योत्सव। **आम और खास का फर्क मिटाती है यहाँ कविता।** नेपाली जी की कुछ पंक्तियों को उद्धृत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ मैं-

विनोबा जी के भूदान आन्दोलन पर उन्होंने लिखा था-

माँग देश के लिए भीख तो, धन मिला, मिलन से माँग
मुसाफिरों से क्या माँगे धरती से माँग गगन से माँग।

नारी जीवन पर,

बाबुल तुम बगिया के तरुवर हम तरुवर की चिड़ियाँ रे
छितराये नौ लाख सितारे तेरी नभ की छाया में
मंदिर-मूरत तीरथ देखे, हमने तेरी काया में
बाबुल तुम पगड़ी समाज के, हम पथ की कंकड़ियाँ रे
जनम लिया तो जले पिता-माँ, यौवन खिला ननद-भाभी,
ब्याह रचा तो जला मुहल्ला, पुत्र हुआ तो बन्ध्या भी
मर जाने पर भी मरघट में, जल-जल उठीं लकड़ियाँ रे!
बाबुल तुम बगिया के तरुवर .....

स्वतंत्रता आन्दोलन में हमारी कविता, हमारी शायरी ने एक महत्त्वपूर्ण और व्यापक जिम्मेदारी निभायी है- और बदली हुयी परिस्थितियों में भी जातियों-सम्प्रदायों और फिरकों में, खण्ड-खण्ड विखण्डित होते हुए अपने देश और समाज को भी टूटने से बचाने का काम भी हमारी कविता, हमारी शायरी को ही करना होगा।

गोपाल सिंह नेपाली जैसे गीतकारों से कलमकारों को निरंतर प्रेरणा लेनी होगी।



एस० डी० ओ०
ग्राम - नैरनापुर, पो० - रामनगर
पश्चिम चम्पारण - ८५४१०६

नेपाली-काव्य की राष्ट्रीय चेतना

• डॉ० सुबोध कुमार झा

गोपाल सिंह नेपाली हिन्दी-साहित्याकाश के एक ऐसे प्रकाशपुंज हैं, जिनकी विलक्षण प्रतिभा, ओजस्विता, स्वच्छन्दता, स्वरमाधुर्य, राष्ट्र-प्रेम और अनुपम सौन्दर्य चेतना अपना सानी नहीं रखती। उनके काव्य-उपवन में जीवन के सभी फूल खिलते हैं, उनकी काव्य-सरिता में सभी तरह की भाव-लहरियाँ अठखेलियाँ करती हैं। ऐसे बहुमुखी प्रतिभा वाले कवि को किसी 'वाद' में बाँधना सहज नहीं। वैसे कहने को उन्हें प्रेम का कवि, दार्शनिक कवि, यौवन का कवि, श्रृंगार का कवि, व्यंग्य का कवि - कुछ भी कहा जा सकता है, क्योंकि उक्त सारी विशेषताएँ न्यूनाधिक मात्रा में उनके काव्य में स्पष्ट परिलक्षित होती हैं।

तथापि **नेपाली** के काव्य के गंभीर अनुशीलन से यह स्पष्ट होता है कि **उनके काव्य की मूल चेतना राष्ट्रीयता ही है।** यह अकारण नहीं कि चीनी आक्रमण के समय उन्होंने अपने आपको **'वन मैन आर्मी'** के रूप में प्रस्तुत करते हुए देशवासियों को ललकारते हुए कहा था-

''हम शीश झुकाएँगे न फ़रियाद करेंगे
जो हमसे लड़ेगा उसे बर्बाद करेंगे
फिर साथ ही तिब्बत को भी आजाद करेंगे
मौका है यही देश की दीवार बढ़ा लो।''

फिर देशवासियों को अपने गौरवशाली अतीत का स्मरण कराते हुए कहा -

''यह घर प्रताप का है, शिवाजी का वतन है
गुलशन है भगत सिंह का, गान्धी का चमन है
'आजाद' की गलियों में घुसा कौन लुटेरा
जिन्दा ही पकड़ के उसे तुम दास बना लो
इन चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो।''

(हिमालय ने पुकारा)

स्पष्टतः अंग्रेज रोमांटिक कवि शेली की तरह नेपाली भी आक्रमक प्रवृत्ति के कवि हैं। जिस तरह शेली ने अपने देशवासियों को 'शेर' की संज्ञा देते हुए उन्हें अपने दुश्मनों को खदेड़ने के लिए ललकारा है-

"Rise like lions from your slumber
In unvanguishable number
Shake to earth your chains like dew
Which is sleep had fallen on you
Ye are many, they are few"

ठीक उसी प्रकार नेपाली ने भी 'शेर' का लाक्षणिक प्रयोग करते हुए देश के दुश्मनों का हौंसला पस्त करने की कोशिश की है-

"यह हिन्द माँद है शेरों की, तुर्बत है
यहीं लुटेरो की
लड़ते हो लड़ो, लड़ाई को मत समझो
मगर बटेरों की।

यदि राष्ट्र के प्रति आत्मीयता और श्रद्धापरकत 'राष्ट्रीयता' की कसौटी है, तो निःसंदेह **गोपाल सिंह नेपाली का कोई सानी नहीं।** संभव है नेपाली की कविताओं में **पंत, प्रसाद** और **निराला** जैसी लाक्षणिकता और प्रतीक-विधान का अभाव हो अथवा राजनैतिक, ऐतिहासिक अध्ययन का वह विस्तार भी न मिले जो **'दिनकर'** में मिलता है, किन्तु **सरल भाषा में पवित्र मातृभूमि के प्रति ज्वलन्त भक्तिभावना की जो सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति नेपाली में प्राप्य है, वह अन्यत्र कहीं भी दुर्लभ है।** यह बात बिलकुल सही है कि नेपाली का कैनवास बहुत छोटा है, सीमित है। किन्तु कैनवास का छोटा व सीमित होना उतना मायने नहीं रखता, जितना इसका पूर्ण होना। प्रसिद्ध उपन्यासकार **जेन ऑस्टिन ने अपने छोटे कैनवास में ही अपनी औपन्यासिक कृतियों को जो पूर्णता प्रदान की है, उससे उनकी गिनती अंग्रेजी के महान उपन्यासकारों में होती है।** ठीक इसी प्रकार नेपाली ने यह साबित कर दिखाया है कि कोई कवि एक छोटी-सी चीज लेकर भी अपनी निष्ठा, तन्मयता और ईमानदारी के कारण गम्भीर बातें इस तरह से अभिव्यक्त कर सकता है कि वह जनता की जुबान पर विराजे। गुण और परिमाण दोनों दृष्टियों से उन्होंने राष्ट्रीयता के इतिहास में नया परिच्छेद जोड़ा है।

यहाँ हिन्दी-काव्य-साहित्य में राष्ट्रीयता की धारा एवं राष्ट्रीयता के संवाहक कवियों के बीच नेपाली का स्थान निरूपण संबंधी संक्षिप्त विवेचना प्रासंगिक प्रतीत होती है। **हिन्दी-साहित्य में राष्ट्रीयता का पहला संकेत भारतेन्दु में मिलता है-**

"आवहु सब मिलिकै रोबहु भारत भाई
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।"

इस युग के कवियों ने भारतीय इतिहास के गौरवशाली पृष्ठों को बार-बार स्मरण किया और विदेशी शासन के अत्याचार को स्थापित किया। **भारतेन्दु** के अतिरिक्त **प्रेमघन, प्रताप नारायण मिश्र, राधाकृष्ण दास** आदि की कविताएँ परवर्ती, कवियों के लिए प्रेरणाा का स्रोत रहीं। **भारतेन्दु** युग के उपरान्त **द्विवेदी युग की प्रधान भावधारा राष्ट्रीयता ही थी।** इस युग के प्रायः सभी कवियों ने अपनी देशभक्तिपूर्ण कविताओं से तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन को संजीवनी प्रदान की। इस संदर्भ में कविवर **नाथूराम शर्मा 'शंकर', श्रीधर पाठक, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', वियोगी हरि, रामचितर उपाध्याय, राय देवी प्रसाद 'पूर्ण', गया प्रसाद शुक्ल 'स्नेही' (राष्ट्रीय मन्त्र), मैथिली शरण गुप्त (जय भारत, स्वदेश संगीत), रामनरेश त्रिपाठी ('पथिक', 'स्वप्न')** आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। द्विवेदी युग के पश्चात् छायावादी राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य में दो भावनाएँ अभिव्यक्त होती हैं- एक तरफ भारत की आंतरिक विसंगतियों और विषमताओं को दूर करने के लिए देशवासियों को आह्वान है, तो दूसरी तरफ स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़ने की प्रेरणा। **महाप्राण निराला** ने

भारतमाता की देवी के रूप में चित्रण किया तो जयशंकर प्रसाद मानो राष्ट्रीयता की प्रतिमूर्त्ति ही थे। पन्त की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक राष्ट्रीयता यदि राष्ट्रीय 'अपेक्षाओं' को व्यक्त करती रही, तो माखनलाल चतुर्वेदी, सियाराम शरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्रा कुमारी चौहान जैसे कवि देश के स्वातंत्र्य समर में कूद भी पड़े। छायावादोत्तर काल में राष्ट्रीयता की धारा रामधारी सिंह दिनकर एवं गोपाल सिंह नेपाली जैसे कवियों की रचनाओं में और भी मुखर हो उठी।

गोपाल सिंह नेपाली की राष्ट्रीयता रामधारी सिंह दिनकर के काफी समीप है। दोनों कवियों ने देश की अधोगति के लिए राजनेताओं को ही अधिक धिक्कारा है। दोनों कवियों ने हिमालय को भारतीय सांस्कृतिक मूल्य के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। किन्तु जहाँ 'दिनकर' में यह क्लेश है कि देश की अधोगति के समय हिमालय समाधि में डुबा रहा (कितनी द्रुपदा के बाल खुले, कितनी कलियों का अन्त हुआ .....) वहाँ नेपाली इस बात से चिन्तित हैं कि चीन ने इसपर धावा बोल दिया। इसलिए वे ललकार कर कहते हैं-

"कहते हैं हिमालय जिसे, दिल्ली का किला है
भारत को जन्मभूमि की झोली में मिला है।
आजाद हिमालय बिना, दिल्ली न रहेगी
तुम लालकिला और हिमालय को मिला लो
इन चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो

नेपाली का स्पष्ट मानना था कि "दुनिया के सारे सिद्धान्त देश की स्वाधीनता के लिए हैं, स्वाधीनता सड़े-गले सिद्धान्तों के लिए नहीं है।" इसलिए उनकी कविताओं में आक्रामकता की अनुगूँज है, किन्तु साथ में भव्यता और समझदारी का पुट भी है।

"तन की स्वतन्त्रता, चरित्र का निखार है
मन की स्वतन्त्रता, विचार की बहार है
घर की स्वतन्त्रता, समाज का शृंगार है
पर देश की स्वतंत्रता अमर पुकार है
टूटे कभी न तार यह, अमर पुकार है।

वह देश की एकता के लिए धर्म और भूगोल की एकता समान रूप से स्वीकार करते हैं और इसे देश-रक्षा का पर्याय मानते हैं। दूसरे शब्दों में वे राष्ट्रीयता को धर्म, ईमान, समाज और अन्त में मनुष्य की एकता में परिणत कर देते हैं,

"मंदिर से चलो थाम के बन्दूक पुजारी
मस्जिद से चलो साथ ले तलवार दुधारी,
राजपूत चलो, सिक्ख चलो, जाट चलो रे,
घर जिसने जलाया है चिता उसकी जला लो
इन चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो।

देश की सम्प्रभुता की रक्षा और पड़ोसी के प्रति भारतीय सांस्कृतिक दृष्टिकोण का ऐसा ओजपूर्ण सम्मिश्रण अन्यत्र दुर्लभ ही है।

राजनेताओं की कापुरुषता को आड़े हाथों लेती तत्कालीन भारतीय शासन व्यवस्था पर उनकी फटकार बरबस ही कबीर के अक्खड़ अन्दाज का सहज अहसास करा जाती है-

"ओ राही! दिल्ली जाना तो
कहना अपनी सरकार से
चर्खा चलता है हाथों से
शासन चलता तलवार से

(हिमालय ने पुंकारा)

नेपाली के काव्य की एक और विशेषता, जो उन्हें राष्ट्रीयता के संवाहक कवियों में विशिष्टता प्रदान करती है तथा साथ ही छायावादी कवियों से भी पृथक करती है, वह है उनका राष्ट्रीयता के संदर्भ में प्रकृति का कुशल चित्रण-

"सुनहरी सुबह नेपाल की
रुपहली शाम बंगाल की
कर दे फीका रंग चुनरी का
दोपहरी नैनीताल की।"

(हिमालय ने पुकारा है)

उपर्युक्त पंक्तियों में यदि देश की सुषमा को ईकाई रूप दिया गया है, तो निम्न पंक्तियों में भरत की अखण्डता का चित्र खींचा गया है:

"धवल हिमालय, निर्झर चंचल, गंगा का जल, यमुना का जल
गौरीशंकर, खड़ा धरा पर, अपने सिर पर विश्व मुकुट धर
है चँवर डुलाती मेघमाल, भारत अखण्ड, भारत विशाल

(हिमालय ने पुकारा)

निष्कर्षत: अपनी सतरंगी काव्य-यात्रा में नेपाली ने राष्ट्रीयता के सभी संभावित परतों को इतनी मोहक भावभूमि के साथ प्रस्तुत किया है कि उनमें पूर्ववर्ती सभी राष्ट्रीय भावबोध वाली धाराओं का समाहार हो गया है। शायद इसी कारण कहीं हम उनमें जगनिक और भूषण की प्रखरता की झलक पाते हैं, तो कहीं भारतेन्दु की भव्यता की। कहीं गुप्तजी की सांस्कृतिकता झलकती है, तो कहीं निराला की विराटता। और इन सबसे बढ़कर उनमें जनता की भावना की शत्-प्रतिशत अभिव्यक्ति, जनता की जुबान में। शायद इसी कारण बालकृष्ण ने उनके बारे में ठीक ही लिखा है- "हिन्दी के नवीन युग प्रवर्त्तक काव्यकारों में सर्वश्री प्रसाद, पन्त, निराला, मैथिली शरण, एक भारतीय आत्मा, 'नवीन' और 'स्नेही' के बाद जो पीढ़ी शुरू होती है, उसमें ये (नेपाली) अग्रणी हैं। उनमें जैसे पूर्व की सभी राष्ट्रीय भावबोध वाली धाराओं का समाहार हो गया है तो भविष्य के लिए एक धवल धारा भी फूटती लगती है।" □

व्याख्याता : अंग्रेजी-विभाग
नुवाकोट, आदर्श बहुमुखी क्याम्पस
बट्टार, नुवाकोट, नेपाल

स्थायी रचनात्मक मूल्यवत्ता का कवि नेपाली

● संजय कुमार 'पंकज'

कोई रचनाकार लोकप्रिय हो और सार्थक भी, चर्चित हो और स्तरीय भी, जन-मन अभिरंजक हो और शास्त्रीय भी, स्पृहणीय हो और अनुकरणीय भी, ऐसा शायद ही होता है, होता भी है तो इक्का-दुक्का ही। हिन्दी-काव्य-साहित्य के सम्पूर्ण विस्तार में **गोपाल सिंह नेपाली** ऐसे ही इक्के-दुक्के के क्रम में विशिष्ट हैं। भीड़ के होकर भी भीड़ से अलग, सबके साथ होकर भी सबसे असंपृक्त, आम होकर भी खास।

नेपाली सहज भाव तथा संप्रेषण के रससिद्ध गीतकार थे। वे गीत-चेतना के, गीति-ऊर्जा के, संगीतात्मक-सौष्ठव के महान् संवाहक थे। गीत को जिस गहरी रागात्मक अनुभूति, संवेदनात्मक-संपृक्ति तथा तरल आवेगात्मक अभिव्यक्ति की जरूरत होती है, वह **नेपाली** में लबालब थी। उनके गीतों में निर्झर की बेलौस मस्ती है, तो नदियों का कल-कल प्रवाह भी। सागर का आलोड़न-विलोड़न है, तो उसका गांभीर्य भी। एकान्त की आकुल टेर है, तो जंगल का सामगान भी। पखेरुओं की चहक है, तो शेर की दहाड़ भी। धरती की सृजन-धुन है तो आकाश का सुखद विस्तार भी।

नेपाली के सृजन में आकाश की **'नीलिमा'** है, **'पंछी'** की सरस-सरल-निश्छल चहक है, **'उमंग'** की निष्कलुष **'रागिनी'** है, क्षितिज का विस्तार है, **'हिमालय ने पुकारा'** तो **'नवीन' 'पंचमी'** भी है।

नेपाली सरल हैं, सहज हैं तभी तो उनके गीत मर्म को छूते हैं। मन में उतरते हैं। अन्तर्मन में गहरे जाकर जमते हैं। उनके गीतों का प्रभाव, उसकी अर्थवत्ता तथा उसकी सक्रिय समझदारी किसी टीका– टिप्पणी या कथन की मोहताज नहीं है।

लोक-तत्त्वों की, लोक-शैली की, लोक-मानसिकता की, लोक-चेतना की, लोक-ऊर्जा की तथा लोक-शब्दों की नेपाली के काव्य में सफल संघटना है, सुघड़ संयोजन है तथा सार्थक-समर्थ प्रस्तुति है। नेपाली ने बेहिचक लोक-तत्त्वों को अपनी रचनाओं में ग्रहण किया। वे कवि-सम्मेलनों के बेताज बादशाह बेवजह नहीं रहे। जनता ने अपने को **नेपाली** में रूपायित पाया। **जनता ने नेपाली की वाणी में अपनी अकथ-व्यथा सुनी।** वे जनता के बड़े दुलारे कवि थे। जनता उन्हें साँस साधकर सुनती रही, भरपूर प्यार देती रही। जनता उनके नाम पर जुटती रही, उनकी अनुपस्थिति पर छँटती भी रही। नेपाली के होने पर जनता औरों को भूलती रही या शिष्टता की औपचारिकता का निर्वाह करती अनमने सुनती रही। वे जनता के कवि थे, जन-चेतना के कवि थे, जन विचार-प्रवाह के कवि थे। जनता ने अपनी ऊहापोह, कश्मकश, संवेदना, त्रासदी, विसंगतियों तथा अपने जातीय गौरव का नेपाली के माध्यम से आत्मसाक्षात्कार किया।

उन्होंने परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की, उसकी कामना की और फिर उसकी स्थिरता के लिए यौवन की अनिवार्यता पर बल दिया-

आज जा ला दे कण-कण में अब फिर ऐसा परिवर्तन
मरता जहाँ आज यह जीवन, वहाँ करे यौवन नर्तन।
अरे युगान्तर आ जल्दी अब खोल, ख़ोल मेरा बंधन
बँधा हुआ इन जंजीरों से तड़प रहा कब से जीवन ।

नेपाली ने अपने गीतों में प्रकृति, प्रेम, सौन्दर्य, राष्ट्र, क्रान्ति, आंचलिकता, ग्राम्यता, रहस्यता तथा भक्ति को नए अन्दाज में समेटा है, सहेजा है, सँवारा है।

नेपाली राग और आग, शृंगार और भक्ति, विचार और व्यवहार, प्रकृति और पौरुष, उद्‌भावन और निरूपण, धरती और आकाश, मस्ती और उल्लास, जीवन और जगत्, समष्टि और व्यष्टि के बड़े ही सफल, सधे, सिद्ध गायक हैं। नेपाली संवेदना, संस्कार तथा स्वाभिमान के संरक्षक हैं। उन्होंने परम्परा और प्रयोग का सुनियोजित समंजन किया है। ऐसा, जिसमें परम्परा की शाश्वत एवं सकारात्मक धारा भी है और प्रयोग की नवरुचिता तथा सार्थकता भी है।

नेपाली नारी-पुरुष की समानता के समर्थक थे। नेपाली नारी-शक्ति को स्वतंत्र सत्ता मानते रहे। राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में भी दोनों की सहभागिता आवश्यक है। परिवार, सम्बन्ध, लोक तथा जीवन भर तक ही नारी की उपयोगिता नहीं, उसने तो सृष्टि, पृथ्वी और प्रकृति की परम्परा तथा विकास-क्रम में भी अपनी महती उपलब्धियों को अमिट ढंग से अंकित किया है। राष्ट्रीय-संकट की घड़ी में बहन-भाई, नारी-पुरुष अर्थात् शक्ति और संयोजन का अद्‌भुत बल द्रष्टव्य है-

तू चिंगारी बनकर उड़ री, जाग-जाग मैं ज्वाल बनूँ,
तू बन जा हहराती गंगा, मैं झेलम बेहाल बनूँ।

नेपाली जिस क्षेत्र में गए, उनसे पहले उनकी प्रसिद्धि पहुँची। फिल्मी दुनिया में उन्होंने भरपूर शोहरत प्राप्त की। अपने समय के वे अगर सबसे महंगे फिल्मी गीतकार थे, तो बेवजह नहीं। कथानक की संवेदना के अनुरूप गतिशील गीतों का सृजन करने में जैसे उन्हें महारत हासिल थी। तभी तो उनके गीत लोकप्रिय होते थे। आज भी उनके फिल्मी गीत वही ताजगी देते हैं, जैसी तब देते रहे होंगे।

नेपाली सरल कवि, सहज गीतकार थे। वे बात-बात में कविता करते थे। कभी-

पीपल के पत्ते गोल-गोल
कहते रहते कुछ डोल-डोल

तो कभी- यह लघु सरिता का बहता जल
कितना पावन कितना निर्मल ।

के रूप में वे सहज ही प्रकृति का संगीत प्रस्तुत कर देते थे। प्रकृति की भाषा नेपाली मानो बड़ी संजीदगी के साथ समझते थे। उनकी कविताओं को पढ़ते हुए बरबस ही ऐसा लगता है जैसे प्रकृति के साथ नेपाली का साक्षात् संवाद हो रहा है।

नेपाली को फिर-फिर, बार-बार नए सिरे से पढ़ने-समझने की जरूरत है। आज भी नेपाली की रचनाओं का संदर्भ बना हुआ है। आज भी उनका जादू माथे चढ़कर बोलता है। नेपाली हृदय में गहरे उतर कर आज भी जमने में पूर्णतः समक्ष-समर्थ हैं। आज भी वे शब्द-शब्द धमनियों में प्रवाहित होते हैं। समकालीन कविता का सर्वाधिक केन्द्रीय विषय 'लड़की', 'औरत' नेपाली के काव्य में बहुत पहले ही अपनी समग्रता के साथ प्रस्तुत हो चुका है-

बाबुल तुम बगिया के तरुवर
हम तरुवर की चिड़िया रे
दाना चुगते उड़ जाएँ हम
पिया-मिलन की घड़ियाँ रे

इस लम्बी कविता में नेपाली ने जन्म से मृत्यु तक नारी-जीवन-यात्रा का वर्णन बड़ा ही जीवंत और यथार्थ किया है। इस कविता में सामाजिक सोच, वैषम्य, विसंगति और विडम्बना को नेपाली ने बड़े ही ज्वलंत ढंग से बेबाक हो समेटा-सहेजा है।

नेपाली का काव्यात्मक व्यक्तित्व बहुआयामी, बहुवस्तुस्पर्शी तथा मुखर है। वे हिन्दी के बड़े हिमायती, गीतों के सधे शिल्पी थे। नेपाली अपनी स्थायी रचनात्मक मूल्यवत्ता के कारण कालजयी हैं। □

वीरभूमि - बेरई (पो०), नरमा
मुजफ्फरपुर - ८४३१२९

लिखता हूँ अपनी मर्जी से

• डॉ० वीरेन्द्र कुमार वसु

कवि का प्रकृति स्वरूप है उसका कल्पक होना, किन्तु इस कल्पना का संबंध वाव्यलोक से प्रसंगवश भले ही झलक मार जाए, पर एक सुस्थ कवि के लिए उसकी कल्पना की आधार-भूमि यह धरा ही है, साथ ही उस धरा के समस्त वासी। हिन्दी-काव्य-परम्परा के विकास-क्रम को यदि सूक्ष्मता से परखा जाए, तो यह सिद्ध हो जाता है कि आदिकाल से लेकर मध्यकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल की जितनी भी रचनाएँ रची गई हैं, प्रकारान्तर से वे सब-की-सब युगीन परिवेश एवं जन-सामान्य की चित्र-वृत्तियों के ही आधार-फलक पर उभरी हैं। यह स्वाभाविक भी है क्योंकि कवि जैसा प्राणी भी समाज का ही अंग होता है। उससे कटकर भला उसकी अभिव्यक्तियाँ सार्थक भी कैसे हो सकती हैं।

हिन्दी-साहित्य का छायावाद-काल कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण रहा है। इस काल के प्रतिनिधि कवियों के उपजीव्य मुख्य रूप से प्रकृति, प्रेम, शृंगार और रहस्यवादी पुट से ओत-प्रोत रहे। **प्रसाद, पंत, महादेवी** और **निराला** की कविताओं में **निराला** ही ऐसे सिद्ध कवि हुए जिन्होंने यथार्थ के धरातल पर मानवीय संवेदना को अपने लेखन में पूरी तन्मयता के साथ पिरोया। जीवन के कटु सत्य के संवाहक के रूप में **निराला** अन्यतम रहे। किन्तु शनैः-शनैः काव्य-धारा अनेक मोड़ों से प्रभावित होने लगी।

छायावादोत्तर हिन्दी-कवियों की जो नई परम्परा शुरू हुई, उसमें **गोपाल सिंह नेपाली** का उदय एक महत्त्वपूर्ण रेखा बनकर उच्छल वेग के समान प्रकट हुआ। उनकी कविताओं में कोरी कल्पना का कहीं भी कोई कृत्रिम वितान नहीं खड़ा हुआ। जन-जन के मन-प्राणों की धड़कनें उनकी कविताओं में धड़कने लगीं। जन-सामान्य की सम्बद्धता उनकी रचनाओं के साथ सदैव सम्पृक्त रही। कविता का प्रकृत धर्म लय, छन्द और उसकी गेयता से जुड़ा हुआ है, **नेपाली** इस तथ्य के पक्के पक्षधर रहे। गीत-विधा उनकी सबसे प्रिय विधा रही और इसी छंदोबद्ध परम्परा के वे परम हिमायती रहे। अतुकान्त, लय-छंद विहीन एवं गेयता से मुक्त रचनाओं को उन्होंने सदैव नकारा। तभी तो व्यक्त किया-

> **'लाख चला अतुकान्त गद्य लो,**
> **तुम कविता के वेश में।**
> **चल न सकेगा नीरस पद,**
> **तुलसी-मीरा के देश में।'**

यह सच है कि **नेपाली** गीत-विधा के चुस्त चितेरा हैं। उनकी पंक्ति-पंक्ति में गीतात्मकता का कल-कल प्रवाह है, जिसमें संगीतात्मक स्वर-लहरी बिना किसी आयास के स्वयंमेव थिरकती रहती है। प्रतिपाद्य की दृष्टि से तथा उनके काव्योपकरण के बिन्दु से नेपाली को **'जनकवि जगनिक'** कहना अधिक सुसंगत एवं सर्वथा समीचीन प्रतीत होता है। उनके गीतों में युग और जीवन के बहुआयामी पक्ष उभरे हैं। प्रणय-भावना, राष्ट्र-चेतना, स्वाभिमान

के स्वर, प्रकृति और श्रृंगार के छींटे, हास्य-रुदन के मिश्रित बिम्ब एवं सामाजिक, राजनीतिक जीवन के अनेक रंग उनके गीतों के उपकरण स्वरूप रहे हैं। वस्तुतः नेपाली राग के कवि होने के साथ-साथ अंगार के कवि भी हैं। राष्ट्र-प्रेम और राष्ट्रभाषा-प्रेम उनके गीत-धर्म की थाती के रूप में दृष्टिगत हैं। पूरे भारत का मानचित्र उनके ताने-बाने में समाया हुआ था। देश-दशा एवं जन-स्थिति उनकी आँखों से कभी दूर न हुई। अपनी राष्ट्रभाषा के प्रति उनका अपार प्रेम यों व्यक्त हुआ-

'जो वर्तमान का सत्य सरल, सुन्दर भविष्य को सजने दो।
हिन्दी है भारत की बोली तो अपने आप पनपने दो॥'

रूढ़िबद्ध प्राचीन मान्यताओं के प्रति विद्रोही तेवर भी नेपाली में प्रकट हुए हैं। उनके मन-प्राणों में देश और प्रजा के लिए सदैव तड़प बनी रहती थी। गीतों में ही सबकुछ ढाला उन्होंने। भाव जैसे भी हों, गीतों में ही छन-छनकर वे आए। निर्धनता को सहचरी के रूप में अंगीकार किया था। भौतिकता के प्रति वे कभी आकर्षित नहीं हुए। यह चाहे उनकी विवशता के कारण हो या उनकी अंतः समृद्धि के कारण, किन्तु इतना तो अवश्य है कि उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व गीतमय ही रहा। गीतों की धरोहर उनकी सबसे समृद्ध धरोहर सिद्ध हुई। विपरीत परिस्थितियों के क्रूर थपेड़ों से जूझते हुए भी उन्होंने कभी भी अनुकूल परिस्थितियों से समझौता करना नहीं सीखा। शोषित जनता के पक्षधर कवि के रूप में नेपाली हृदय-प्रदेश के बेताज बादशाह के रूप में ख्यात हैं। कवि के रूप में वे आद्यन्त परम स्वाभिमानी रहे हैं। तभी तो लिखा-

'लिखता हूँ अपनी मर्जी से, बचता हूँ कैंची-दर्जी से।
आदत न रही कुछ लिखने की, निन्दा-वन्दन खुदगर्जी से।'

नित नई-नई कल्पना की धनी, उनकी कलम सदैव युग की नाड़ी की नब्ज पकड़ती रही। यथार्थ के धरातल को छोड़कर गगनधर्मी कल्पना कभी गंवारा नहीं रही नेपाली को। तो उन्होंने नग्न यथार्थ के चितेरा के रूप में ही सदा स्वयं को ढाला। सत्ता से भी वे संतुष्ट कभी नहीं रहे। उनकी रचनाओं में विद्रोही तेवर हमेशा कायम रहे। तीखे शब्दों में जो कुछ भी उन्होंने व्यक्त किया, उन में मात्र आक्रोश का ही स्वर नहीं, वरन् कबीर की भाँति सुधारात्मक संकेत भी थे। यथास्थिति का यथावत् चित्रण कर देने से ही कवि का दायित्व समाप्त नहीं हो जाता, उसका सही कर्म तो यह है कि वह समस्याओं की इंगिति के साथ-साथ समाधान के मार्ग भी प्रशस्त करता जाये। नेपाली इस दृष्टि से सर्वांशतः खरे उतरते हैं। अपने गीतात्मक स्वरों में कवि के स्वरूप की भी अभिव्यंजना उन्होंने की है-

'कविता है कवि-हृदय-क्षितिज पर बालारुण का आना
जीवन की प्राची में उठकर मधुर-मधुर मुस्काना।'

निर्भीक कवि के रूप में नेपाली का कवि-व्यक्तित्व बहुत ही प्रखर रहा है। क्रांति के स्वर भी कई स्थलों पर तीव्रता के साथ फूटे हैं। गीतात्मकता कहीं नहीं पल्ला छोड़ पायी। गीत-विधा के बारे में जो यह कहा जाता रहा है कि गीतों में जटिल जीवन का सटीक चित्रण संभव नहीं, उन्हें नेपाली के गीतों से गुजरते वक्त इस बात का पक्का यकीन हो जाएगा कि यह

धारणा कितनी बेबुनियाद है। गीतों की क्षमता सीमातीत है। प्रमाण हैं **गीतों के राजकुमार गोपाल सिंह नेपाली।**

जो आलोचक नेपाली-साहित्य पर अपनी थोथी दलीलें पेश करते हुए यह तोहमत लगाते हैं कि उन्होंने प्रबंध काव्य या किसी महाकाव्य सरीखी कृति नहीं प्रस्तुत की या फिर कोई शाश्वत मानक कर्तृत्य नहीं प्रस्तुत किया तो इसका उत्तर यह है कि किसी भी कृतिकार का मूल्यांकन संख्या के आधार पर नहीं, बल्कि गुणात्मकता के आधार पर किया जाना चाहिए। नेपाली उन कवियों में नहीं, जो किसी वाद या विवाद के भ्रम जाल में पड़े हों सच तो यह है कि अल्पावधि में ही जो कुछ भी उन्होंने रचा, वह पूर्णरूपेण गीत-विधा को ही समर्पित रहा न केवल शिल्प की दृष्टि से, वरन् भाव-सौष्ठव की दृष्टि से भी उनकी एक-एक रचना सोद्देश्य एवं सारगर्भित सिद्ध हुई है। यही उनकी सफलता और सिद्धि है।

प्रकृति और मनुष्य के रागात्मक संबंध नेपाली की रचनाओं में भरपूर मस्ती के साथ अभिव्यंजित हुए हैं। **मस्ती तो नेपाली का प्रकृत स्वरूप है।** वर्ण-वर्ण गीतों के रंग में रंजित। उड़ने को भले ही उनकी कलम गगन में उड़ानें भरे किन्तु कहाँ कभी छूट पायी धरती उससे। तभी तो-

उड़ने को उड़ जाए नभ में, पर छोड़े नहीं जमीन कलम।'

यौवन-काल जीवन का वसंत-काल होता है, जिसमें उफान और तूफान होता है।

यौवन की मस्ती भरे आलम को नेपाली ने अपने गीतों में खूब उड़ेला-

'जवानी पढ़ती नहीं कुरान, जवानी पढ़ती कभी न वेद।
जवानी मलयानिल की लहर, मिटाती शूल-फूल का भेद।'

समवेत-स्वर ने इसे स्वीकार किया है कि **गीतों के राजकुमार नेपाली** के गीत मानवीय गहरी संवेदनाओं के वाहक हैं, मानवता के पराग से सुवासित। अपनी जीवन-यात्रा में नेपाली ने कई झंझावात झेले, किन्तु रचनाओं के संसार से वे कभी विमुख नहीं हुए। गीतों की रचनाधर्मिता के प्रति उनकी सजगता निरंतर बनी रही। कृतियों में- पत्र-पत्रिकाओं में आवृत्त रहते हुए उनके कई संकलन भी आए। **उमंग, पंछी, रागिनी, हिमालय ने पुकारा** आदि-आदि।

साहित्य-जगत् से उभरी पहचान के सहारे फिल्मों में भी उन्होंने अपने गीतों को पिरोया। वे सफल भी रहे। किन्तु बम्बई महानगरीय सभ्यता-संस्कृति की सोहबत में व्यसनों की लिप्तता के कारण असमय ही वे काल-कवलित भी हो गए। गीत-संसार के लिए यह क्षति सबको अवसन्न कर गई। सच्चाई तो यह है कि अपने नश्वर शरीर से हम सभी को छोड़ जाने वाले **गीतकार नेपाली** अपने गीतों के सहारे सदैव अमर ही रहेंगे। उनके गीतों की कड़ियाँ आज भी हर की जुबान पर थिरकती रहती हैं। कैसे भूल पाएँगे हम ये पंक्तियाँ-

'मृगनैनी, पिक बैनी, तेरे सामने बंसुरिया झूठी है,
रग-रग में इतने रंग भरे, रंगीन चुनरिया झूठी है।'

या फिर-

'मुसाफिरों से क्या माँगे, धरती से माँग, गगन से माँग।
साम्यवाद लाना है, तो छोड़ धनी, निर्धन से माँग।'

उनके समकालीन सभी स्थापित गीतकारों ने गीत-विधा के सर्वश्रेष्ठ रचयिता के रूप में **नेपाली** को सर्वोच्च स्थान दिया है। कतिपय उक्तियाँ ध्यातव्य हैं। **निराला** ने कहा 'नवीन तारकों के सदृश, **नेपाली** के काव्य में शक्ति, प्रवाह, सौन्दर्य-बोध तथा चारु-चित्रण की भरपूर छटा विद्यमान है। 'छायावादी कवि **पंत** के उद्‌गार ऐसे प्रकट हुए- 'एक प्रतिभा-संपन्न उदीयमान नवयुवक कवि **नेपाली** में भावों की जो मादकता, मोहकता, आशा और महत्वाकांक्षा की जो उत्तेजना एवं कल्पना की जो आकाशव्यापी उड़ान होनी चाहिए, उससे आपकी रचनायें ओत-प्रोत हैं।''

दिनकर ने कहा- '**नेपाली** जी की कविता की भाषा सरल और सुबोध, शैली मार्मिक तथा उनके भाव प्राण-प्रेरक हैं।' **वीरेन्द्र मिश्र** ने व्यक्त किया- 'नेपाली की कविता और स्वर-लहरी में नदी जैसा सहज प्रवाह है, समुद्र का गर्जन-तर्जन नहीं।' सुप्रसिद्ध रससिद्ध गीतकार **नरेन्द्र शर्मा** के शब्दों में- 'नेपाली शुद्ध कवि थे और उनकी दृष्टि कवित्वमयी थी। उनकी रचनाओं में सहजता और व्यंजना का अद्‌भुत संयोग देखने को मिलता है।'

इस प्रकार न जाने कितने उद्‌गार उद्‌भट कवियों, लेखकों और गीतकारों के व्यक्त हुए हैं नेपाली के बारे में गीतों एवं उनके विविध संकलनों पर गीत-विधा की दृष्टि से मूल्यांकन अपेक्षित है। जब-तब गीत-चर्चा होगी, **नेपाली** के बिना यह बे-मानी होगी। **गीत-परम्परा के इतिहास की एक अविस्मरणीय कड़ी हैं नेपाली।** □

एल० के० कॉलेज
सीतामढ़ी - ८४३३०२
(बिहार)

गीतकार नेपाली की लोक-चेतना

• डॉ० संजय कुमार

नेपाली लोक आस्था एवं उमंग के प्रतिनिधि हिन्दी-गीतकार हैं। हिन्दी-गीतों को सहज पद लालित्य और नाद् सौन्दर्य से समृद्ध करने वाले **नेपाली** की कविता, मानवीय प्रेम के उत्थान की बन्धुत्व के विकास की कविता है। यही कारण है कि निधन के सैंतीस वर्षों के पश्चात्, अपनी काव्य-कृतियों के अनुपलब्ध हो जाने के बावजूद **नेपाली** लोक-जीवन में ऐसे अनेक गायक मिलेंगे, जिन्हें **नेपाली** के गीत कण्ठस्थ हैं। शास्त्रीयता से पूरी तरह मुक्त होकर और अपनी अनुभूति को जन-जन की अनुभूति बनाकर काव्य-रचना करने वाले **नेपाली** अपनी जन-पक्षधरता के कारण ही प्रासंगिक बने हुए हैं। **नेपाली** की इस जन-पक्षधरता को रेखांकित करते हुए एक आलोचक ने सच ही कहा है- "नेपाली हिन्दी की उस धारा के प्रतिनिधि कवि हैं, जिसका सम्बन्ध आम-आदमी से है, उसके दुःख-सुख से है, उसकी आशा-प्रत्याशा से है। अतः **नेपाली** आभिजात्य की जगह आम-आदमी के कवि हैं। आम-आदमी का कवि होना उनकी सबसे बड़ी शक्ति है और इसी शक्ति के कारण वे हिन्दी के प्रतिनिधि कवि घोषित होते हैं। **नेपाली** के काव्य की एक और बड़ी शक्ति है, उसकी सहजता। सहजता भी एक सिद्धि है, जिसे कलाकार अपनी अनवरत साधना से प्राप्त करता है। इस अर्थ में **नेपाली आधुनिक हिन्दी-कविता के एक सिद्ध कवि भी हैं।**

नेपाली मधुर एवं लोकप्रिय गीतों के समर्थ प्रणेता रहे हैं। **उनकी मूल प्रतिभा गीतात्मक है।** गीत को उन्होंने भारतीय जीवन का मूल स्वर माना है। इसलिए उन्होंने यह घोषणा भी की है-

"लाख चला अतुकान्त गद्य लो तुम कविता के भेष में– इतना ही नहीं उन्होंने यह भी माना है–

> **"यह गीतों का देश है, जहाँ चरवाहा विरहा गाता है**
> **सुख हो, दुःख हो, सौन्दर्य यहाँ गीतों में गाया जाता है"**[3]

नेपाली अपने पैंतीस वर्षीय कवि-जीवन में गीतों का संस्कार करते रहे, उसे नयी भंगिमा और नया स्वर देते रहे। यह सच है कि नेपाली ने जब कवि-जीवन आरम्भ किया था, उस समय छायावादी कवि-हिन्दी गीति-काव्य को समृद्ध कर चुके थे। **नेपाली** ने अपनी गीति रचनाओं में छायावादी संस्कार भी ग्रहण किए और छायावाद की कुहेलिका से निकलने का प्रयत्न भी किया। **नेपाली** के गीतों में वैयक्तिकता है, तो उसका एक सामाजिक आयाम भी है। कल्पना है तो उसे यथार्थ तक ले जाने की एक रचनात्मक बेचैनी भी है। वेदना है तो लोक-जीवन के दुःख को गहराई तक महसूस करने वाली करुणा भी है। इसलिए **नेपाली** एक नए राष्ट्र के निर्माण के लिए एक नयी मानव-सभ्यता के विकास के लिए और चतुर्दिक चुनौतियों का सामना करने के लिए नवीन कल्पना पर बल देते हैं–

"अब घिस गयीं समाज की तमाम नीतियाँ
अब घिस गयीं मनुष्य की अतीत रीतियाँ"
हैं दे रहीं चुनौतियाँ तुम्हें कुरीतियाँ
निज राष्ट्र के शरीर के सिंगार के लिए
तुम कल्पना करो नवीन कल्पना करो
तुम कल्पना करो"६

नेपाली के गीतों में एक विलक्षण सम्मोहन है। कवि-सम्मेलन के मंचों से नेपाली ने इसी कारण लाखों श्रोताओं का हृदय जीतने में सफलता प्राप्त की है और अपने तीन-सौ फिल्मी गीतों के माध्यम से दर्शकों एवं श्रोताओं को एक नया सौन्दर्यबोध दिया है। नेपाली के गीतों में जहाँ वैयक्तिवक्ता है, वहाँ भी लोक मंगल के लिए स्वयं को अर्पित कर देने की उत्कण्ठा भी है-

"मैं सरस सोम रस घोल-घोल
तारों-सा खिड़की खोल-खोल
पीपल-पल्लव-सा डोल-डोल
विहगों की बोली बोल-बोल
करता रहता हूँ अभिनन्दन
तुम कब समझोगे मेरे मन"५

नेपाली के गीत उनकी अन्तर्वेदना से निकलकर लोक-जीवन की देहरी पर पहुँचे हुए सच्चे लोक-गीत हैं। इसलिए लोक-जीवन में नेपाली का मान बना रहेगा। उनके गीत लोक-जीवन में नए उल्लास और नयी मस्ती के राग भरते रहेंगे। लोक-राग का यह उदाहरण देखा जा सकता है-

"सुना है मैंने गाँव के होते चोर बड़े शहजोर हैं
यहाँ की मिट्टी में बरसती है अलमस्ती घनघोर है
साँस रतौंधी से है बेकल देवर भी बेईमान है
घर से दूर ससुर जी सोते पशु का जहाँ बथान है
जाने राम बचूँगी कब तक ठग रहते हैं घात में
ओ परदेशी बालम! आ जा आधी-आधी रात में।"६

नेपाली के गीतों का परिप्रेक्ष्य अत्यंत व्यापक है। उनके गीत अन्तर्मन से निकलकर जन-जन तक पहुँच जाते हैं, जन-जन की आवाज बन जाते हैं-

"कवि ने जो कुछ जाना
कवि ने जो पहचाना
बनता है वह छन्द-छन्द में प्राण-प्राण का गाना
हृदय-हृदय का गाना
लोक-लोक का गाना
बनता है वह भाव-लहर में उठता हुआ जमाना।"७

कवि नेपाली जीवन के कोलाहल से दूर भागने वाले भावुक गीतकार नहीं हैं। उन्हें अपने दायित्व का बोध भी है। राष्ट्र की जागृति के लिए, मनुष्यता की रक्षा के लिए अलख जगाना वे अपना धर्म समझते हैं–

"हुआ देश खातिर जनम है हमारा
कि कवि हैं तड़पना करम है हमारा
कि कमजोर पाकर मिटा दे न कोई
इसी से जगाना धरम है हमारा"८

नेपाली का जीवन एक सच्चे गायक का सार्थक जीवन रहा है। अपने को 'वन मैन आर्मी' मानना उनका कोरा दम्भ नहीं है। वे अपनी सारी वेदना को गीत बनाकर अपने सारे संघर्ष को कविता में ढालकर अन्त तक गाते रहे। उनकी ये पंक्तियाँ उनके व्यक्तित्व के इस पक्ष को रेखांकित करती हैं–

"ऊँगलियों के छूते ही आज
हुयी मुखरित जीवन की बीन
अधर पर हास नयन में अश्रु
लिए मैं हुआ गान में लीन
और क्षण-क्षण पर चलते रहे
राग पर राग गीत पर गीत
कभी आएगी ऐसी घड़ी
बन्द हो जाएगा संगीत
लगेगी ऐसी गहरी नींद, बीन पर सो जाऊँगा मौन"९

इस प्रकार जब तक गीतों में प्रेम और सौन्दर्य की अभिव्यक्ति होती रहेगी, कवि लोक-जीवन को अपने गीतों में साकार करता रहेगा, नेपाली की प्रासंगिकता बनी रहेगी। उनके गीत लोक-जीवन में नयी आस्था, नया उल्लास और नयी उमंग के स्वर भरते रहेंगे। □

द्वारा श्री विवेकानन्द ठाकुर
कच्ची-पक्की रोड (साहु मार्केट)
मो० - अतरदह
पत्रा०- रमना, जिला- मुजफ्फरपुर
(बिहार)
पिन - ८४२ ००२

सन्दर्भः

१. डॉ० सतीश कुमार राय; 'नेपाली एक पुनर्मूल्यांकन' शीर्षक निबंध नेपाली की काव्य-चेतना, सम्पादक – डॉ० बलराम मिश्र, डॉ० सतीश कुमार राय
प्रथम संस्करण १९९२, पृ० ११२

२. बालकृष्ण लिखित कवि परिचय से उद्धृत 'हिमालय ने पुकारा' भागलपुर संस्करण, १९९४, पृ० १३

३. 'मुस्कान पुरानी कहाँ हुई' शीर्षक कविता 'हिमालय ने पुकारा' – भागलपुर संस्करण, पृ० ११५

४. 'नवीन' शीर्षक कविता, पृ० १

५. 'परिचय' शीर्षक कविता उमंग, प्रथम संस्करण १९३४ पृ० – २९

६. डॉ० श्यामबाबू प्रसाद के अप्रकाशित शोध-प्रबंध- गोपाल सिंह नेपाली के काव्य में प्रेम और सौन्दर्य के परिशिष्ट में संगृहीत गीत- 'चाँद बना दूल्हा-सा आया' से।

७. 'कवि और कविता' शीर्षक कविता नवीन पृ० – १६

८. 'नजर है नयी तो नजारे पुराने' शीर्षक कविता 'हिमालय ने पुकारा' पृ० – १०१

९. 'बीन पर सो जाऊँगा मौन' शीर्षक कविता 'पंचमी', प्रथम संस्करण, पृ० १३२

गोपाल सिंह नेपाली की जीवन-यात्रा

• संजीव शरण मुकुल

(सूर्योदय : १९११-१९६३ ई०)

जन्म-तिथि	:	११ अगस्त १९११ जन्माष्टमी वि० सं० १९६८
जन्म-स्थान	:	कालीबाग दरबार (नेपाली रानी महल) बेतिया, पश्चिम चम्पारण (बिहार)
नाम	:	गोपाल बहादुर सिंह
उपनाम	:	नेपाली
पिता का नाम	:	स्व० श्री रेल बहादुर सिंह हवलदार मेजर (१/९ गोरखा राइफल्स)
धर्मपत्नी का नाम	:	श्रीमती वीणारानी नेपाली (नेपाल सरकार के गुरु पुरोहित पं० विक्रम राज की सुपुत्री)
उपनाम	:	मखना मैया
पुत्र का नाम	:	(१) श्री मोहन सिंह (२) श्री सोहन सिंह (३) श्री नकुल सिंह (४) श्री सहदेव सिंह
पुत्री का नाम	:	(१) सुश्री रानी
अनुज का नाम	:	श्री बम बहादुर सिंह नेपाली 'मगन' (स्वर्गीय)
प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा	:	पेशावर, अफगानिस्तान, देहरादून आदि सैनिक छावनियों में
दुःखद घटना	:	बचपन में ही माँ बिछुड़ गयी। क्योंकि दूसरे युद्ध में पिता जी जर्मनी-फ्रांस आदि देशों में लड़ाई में भाग लेने चले गए थे।
विमाता	:	• १९२३ में पिताजी ने बेतिया से छः मील पश्चिम गाँव हरपुरवा बगही में दूसरी शादी कर ली। • १९२४ में सरकारी पेंशन लेकर देहरादून से उत्तरी बिहार की प्राचीन पुण्य भूमि विष्णु द्वीप (के छः द्वीप) बेतिया (चम्पारण) में आ बसे। आज भी सरकार पोखरा में इनके वीर सैनिक पिता का नेपाली-भवन मौजूद है, लेकिन अब यह नीलाम हो गया है।

शिक्षा	:	१९२६ में मिड्लि स्कूल के छात्र, १९३२ में बेतिया राज स्कूल बेतिया में प्रवेशिका तक शिक्षा प्राप्त की, लेकिन इन्हें मैट्रिक परीक्षा के लिए 'सेंटअप' नहीं किया गया।
वातावरण	:	● देहरादून और मंसूरी का प्राकृतिक परिवेश। ● बेतिया के बीहड़ वन, निर्झर, घाटी का रोचक दृश्य। ● माँ का विछोह विमाता का प्रभाव। ● घोर दरिद्रता। परिवारिक कलह।

मध्याह्न : (१९३१-१९६३)

१९३१	:	अखिल भारतीय हिन्दी-सम्मेलन (कलकत्ता) में सम्मिलित हुए जहाँ **शिवपूजन सहाय, रामधारी सिंह दिनकर, रामवृक्ष बेनीपुरी, बनारसी दास चतुर्वेदी** जैसे साहित्यकारों से सम्पर्क।
१९३२	:	● **'प्रभात'** (हस्तलिखित पत्रिका, बेतिया) सम्पादन ● **'दि मुरली'** (अंग्रेजी पत्रिका) टाइप करके ● कविवासर साहित्यिक संस्था की स्थापना ● काशी नगरी प्रचारिणी सभा (वाराणसी) द्वारा आयोजित द्विवेदी अभिनन्दनोत्सव में भाग लेना और राष्ट्रीय स्तर के गीतकार के रूप में प्रतिष्ठित होना। ● द्विवेदी मेला (प्रयाग) में ललित काव्य पाठ करके सम्पूर्ण श्रोता मंडली को मंत्र-मुग्ध कर लोकप्रिय गीतकार के रूप में स्थापित होना ● **सुधा** मासिक पत्र - (लखनऊ) के सम्पादन-विभाग में **निराला** जी के साथ कार्यरत।
१९३४	:	● **चित्रपट** - सिने पत्रिका - (दिल्ली) **ऋषभ चरण जैन** के साथ सम्पादन-कार्य
१९३५-३७	:	● **रतलाम टाइम्स** (मध्य भारत) के प्रधान सम्पादक के रूप में कार्यरत।
१९३७-३९	:	● **योगी** (पटना) - **ब्रज शंकर वर्मा** के साथ सम्पादन-कार्य।
१९३९	:	● विवाह (काठमाण्डू)
१९३९-४०	:	● बेतिया राज-प्रेस में मैनेजर ४०-६० या ७५ रुपए प्रतिमाह।
१९४४	:	● कालिदास शताब्दी समारोह (बंबई) में भाग लेने के लिए निमंत्रण और इसी समय फिल्मिस्तान में १५०० अथवा २००० प्रति माह पर गीतकार के रूप में ४ वर्षों के लिए अनुबंध।

१९४४-५६ :
- बंबई में निवास और सिनेमा-जगत् की सेवा।
- हिमालय फिल्मस - निर्देशक
- नेपाली पिक्चर्स - निर्देशक और निर्माता
- नेपाली जी की निजी तीन फिल्में-

  नजराना (१९४९)

  सनसनी (१९५०-५१) देवानंद-गीता बाली

  खुशबू (१९५४-५६) मोतीलाल-श्यामा

१९५६-६३ : स्वतंत्र-लेखन/ जन-जागरण/ घूम-घूमकर/ कविता-पाठ करना और लोगों को देश के लिए खड़ा करना/ **"वन मैन आर्मी"** की भूमिका का निर्वाह

सूर्यास्त : (१७ अप्रैल, १९६३)

- १७ अप्रैल, १९६३ को एकचारी ग्राम से ट्रेन द्वारा भागलपुर वापस लौटते समय **भागलपुर रेलवे स्टेशन के प्लेट फॉर्म नं० २ पर अचानक हृदय गति रुक जाने से मृत्यु ।**
- १८ अप्रैल, १९६३ को **मुख्यमंत्री विनोदानन्द झा** के आदेश से शव-यात्रा ९ बजे प्रातः निकाली गयी और तत्कालीन **जिलाधिकारी वी० एन० बसु** द्वारा बरारी घाट के पावन तट पर चिता सजाई गयी।
- स्थानीय पाँच कवियों- सर्वश्री **आनन्द शास्त्री, पं० दामोदर शास्त्री, शारदा प्रसाद सैदपुरी, रमेश चन्द्र 'अंगार'** और **राबिन शॉ पुष्प** द्वारा मुखाग्नि - कार्य का सम्पादन।
- अर्थाभाव में बंबई से पारिवारिक सदस्य आने में असमर्थ।



गोपाल सिंह नेपाली : साहित्य-साधना

● अवधेश कुमार

१९३० : ● प्रथम रचना - कविता

भारत-गगन के जग-मग सितारे – बाल मासिक पत्रिका – **बालक** – में प्रकाशित जिसके सम्पादक श्री रामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी जी थे, जो पटना से प्रकाशित होती थी।

● तत्पश्चात् तत्कालीन स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं **युवक** (पटना) **विशाल भारत** (कलकत्ता) **हंस** (काशी) **सरस्वती** (प्रयाग) **कर्मवीर** (खण्डवा) **प्रताप** (कानपुर) – में रचनाएँ प्रकाशित होने लगीं।

१९३३ : १. **उमंग** (बासठ छोटी-बड़ी कविताओं का संकलन)

प्रकाशक : दिग्दर्शन चरण जैन
ऋषभ चरण जैन एवं सन्तति
२१, दरियागंज, नई दिल्ली - ११० ००२

चतुर्थ संस्करण १९७२, मूल्य ८ रुपए मात्र

१९३४ : २. **पंछी** (सरस-सरल कविताओं का संग्रह)

प्रकाशक : गंगा पुस्तकालय, कार्यालय - लखनऊ
एक मात्र प्राप्ति-स्थान - राष्ट्रीय प्रकाशन मंडल,
मछुआ टोली, पटना - ४, मूल्य - १ रुपया

१९३५ : ३. **रागिनी** (सत्तर पृष्ठों में लघुगीत, नेपाली जी की प्रतिनिधि कविताओं का संकलन)

प्रकाशन : युगान्तर प्रकाशन समिति, पटना, मूल्य - सजिल्द बारह आने

● ४. **रागिनी** (मौलिक काव्य ३१ कविताओं का संकलन)

प्रकाशक : राष्ट्रीय प्रकाशन मंडल, मछुआ टोली, पटना
१९६२, मूल्य - १.५०

१९४२ : ५. **पंचमी** (४७ गेय कविताओं का प्रमुख संकलन)

प्रकाशक : कविवासर बेतिया (चम्पारण)
प्रकाशन-तिथि : अगस्त १९४२

१९४४ : ६. **नवीन** (३९ कविताओं का संकलन)

प्रकाशक : पुस्तक भंडार, पटना
मूल्य : तीन रुपए

१९४४ : ७. नीलिमा (तैंतीस कविताओं का संकलन)
प्रकाशक : वैशाली निकुंज, मुजफ्फरपुर
मूल्य : १ रुपया

१९६३ : ८. हिमालय ने पुकारा (राष्ट्रीय काव्य-संकलन)
प्रकाशक : हिमालय प्रकाशन, मलाड, बम्बई - ६४
दिल्ली संस्करण प्रथम बार फरवरी १९६३
मूल्य : चार रुपए मात्र

- अप्रकाशित रचनाएँ -
  १. हम तरुवर की चिड़ियाँ रे
  २. दो तुम्हारे नयन : दो हमारे नयन
  ३. नौ लाख सितारों ने लूटा
  ४. तूफानों को आवाज दो
- प्रकाशकों द्वारा पचा ली गई रचनाएँ-
  १. हमारी राष्ट्र भाषा (निबंध-संग्रह)
  २. पीपल का पेड़ (प्राकृतिक उपन्यास)
- नेपाली भाषा में लिखित रचना - १. कल्पना (गद्य-काव्य)

१९४४-५६ : सिने-जगत् की सेवा –
- लगभग ४५ फिल्मों में ३००-४०० गीतों की रचना
- प्रमुख फिल्में - मजदूर, सफर, लीला, बेगम, शिकारी, तिलोत्तमा, खिड़की, तुलसीदास, जय भवानी, (अंतिम) नाग पंचमी, शिव रात्रि, नागचम्पा, राज कन्या, शिव भक्त, गौरी-पूजा, नवरात्रि, सती मदालसा, दूर्गा-पूजा, सती नाग कन्या, नरसी भगत, जयश्री, हरहर महादेव, पवन पुत्र हनुमान, माया बाजार, नई राहें इत्यादि।
- नेपाली जी द्वारा निर्देशित एवं निर्मित फिल्में –
  १. नजराना (१९४९-५०) २. सनसनी (१९५०-५१)
  ३. खुशबू (१९५४-५६)

१९५३-६३ : • स्वतंत्र लेखन

□

नेपाली जी से संबंधित प्रकाशित साहित्य

१. युवक : वर्ष १३ अंक ८ नेपाली-स्मृति-अंक
(मासिक) अगस्त, १९६३ मूल्य – ५० नए पैसे
कार्यालय युवक मासिक
जौंस बँगला नं०- ४, जीवनीमंडी, आगरा

२. चँदन : (त्रैमासिक पत्र)
स्व० कविवर नेपाली जी की पुण्य स्मृति में
प्र० सम्पादक – श्री लक्ष्मी नारायण शर्मा मुकुर
सम्पादक – श्री शारदा प्रसाद सैदपुरी
सैदपुर साहित्य – सम्मेलन विशेषांक २६ फरवरी १९६६, प्रथम पुष्प, मूल्य १ रुपया
प्रकाशक – के० के० सिंह
कार्यालय – 'लोकमत' जोगसर, भागलपुर

३. नवशक्ति नेपाली विशेषांक १९६३
४. साप्ताहिक हिन्दुस्तान ,, ,, १९६३
५. धर्मयुग ,, ,, १९६३
६. किरण ,, ,, हाजीपुर १९६३
७. दृष्टि ,, ,, मिर्जापुर (नवादा) १९८७
८. पं० चम्पारण जिला साहित्य-सम्मेलन स्मारिका, १९७६
९. स्वाधीन कलम नेपाली सं० डॉ० अवधेश्वर अरुण,
हंसराज प्रकाशन मुजफ्फरपुर, प्रथम सं० १९८२, मूल्य - २० रुपए
१०. गोपाल सिंह नेपाली : जीवन और साहित्य – डॉ० बलराम
प्रथम सं० १९८३ विद्यार्थी साहित्य संगम
मूल्य – पच्चीस रुपए बेतिया (चम्पारण)
११. नेपाली और किशोर के गीतों का तुलनात्मक अध्ययन
डॉ० राम प्रवेश सिंह (पी- एच. डी. का शोध-प्रबंध, बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर, अप्रकाशित)
१२. नेपाली की काव्य-चेतना– डॉ० बलराम मिश्र
बिहार ग्रन्थ कुटीर प्रकाशन, पटना - 1८92
१३ गायक स्वच्छन्द हिमालय– डॉ० नन्दकिशोर नन्दन

□

परिषद् के कुछ उल्लेखनीय गौरव ग्रंथ

	ग्रंथ	लेखक
(१)	कथासरित्सागर -तीन खंड	
(२)	हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन	डॉ॰ वासुदेव अग्रवाल
(३)	दोहाकोश	राहुल सांकृत्यायन
(४)	दक्खिनी हिंदी काव्यधारा	राहुल सांकृत्यायन
(५)	हिंदू-धार्मिक कथाओं के भौतिक अर्थ	त्रिवेणी प्र॰ सिंह, आई॰सी॰एस॰
(६)	कम्ब रामायण-दो खंड में	अनु॰ एन॰ वी॰ राजगोपालन
(७)	विद्यापति पदावली (तीन भाग)	अनु॰ एन॰ वी॰ राजगोपालन
(८)	भारतीय संस्कृति और सधना (दो खंड)	म. म. डॉ॰ गोपीनाथ कविराज
(९)	तांत्रिक वाङ्मय में शाक्त-दृष्टि	म. म. डॉ॰ गोपीनाथ कविराज
(१०)	भारतीय साधना की धारा	म. म. डॉ॰ गोपीनाथ कविराज
(११)	पुराण परिशीलन	गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी
(१२)	सार्थवाह	डॉ॰ मोतीचंद्र
(१३)	बौद्ध धर्म और बिहार	पं॰ हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय'
(१४)	साहित्य का इतिहास दर्शन	आचार्य नलिनविलोचन शर्मा
(१५)	वैज्ञानिक विकास की भारतीय परंपरा	डॉ॰ सत्य प्रकाश
(१६)	भारतीय प्रतीक विद्या	डॉ॰ जनार्दन मिश्र
(१७)	यूरोपीय दर्शन	म. म. पं॰ रामावतार शर्मा
(१८)	मध्य एशिया का इतिहास (प्रथम भाग)	राहुल सांकृत्यायन
	(द्वितीय भाग)	राहुल सांकृत्यायन
(१९)	हिंदी साहित्य का आदिकाल	हजारी प्रसाद द्विवेदी
(२०)	काशी की सारस्वत साधना	म. म. डॉ॰ गोपीनाथ कविराज

120# CM